Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका

कहानियों और कथा-जगत की संपूर्ण पत्रिका वर्ष : 28, अंक : 434, जून, 1988

विश्व साहित्य में विषकन्याएं—1

प्रकाशक :
रमेश चंद्र

संपादक :
अवधनारायण मुद्गल
उपसंपादक :
सुरेश उनियाल
महेश दर्पण
वीरेंद्र जैन
विभागीय सहयोगी :
बिमला रानी
ज्ञान सिंह
प्रोडक्शन :
हरेंद्र सिंह नेगी
सुनील चौहान
सज्जा प्रबंधक :
लोकेश भार्गव

आवरण पारदर्शी : फाल एस. गिरोटा
आवरण सज्जा : कला विभाग
अंक सज्जा : हरिप्रकाश त्यागी

विषकन्या खंड

कथा रचनाएं

10. पत्थर की अप्सरा :
हयात उल्लाह अंसारी
12. सर्प और सुंदरी :
हरिशंकर परसाई
24. विलक्षणा :
सुरेश उनियाल
28. घर-गमला :
योगेश गुप्त
34. सोने का घूंट :
इस्मत चुगताई
42. सुकन्या :
हरिमोहन
48. हत्यारिणी :
सी.पी. डोनेल

विशेष लेख

19. प्राचीन भारत में विषकन्याएं :
हंस
38. ताजो-तख्त दिलाने वाली....:
मोहनलाल भास्कर
45. ईसा पूर्व भी माताहारी थी :
रामकुमार भ्रमर

लघुरचनाएं

13. रूपा जीवा क्रिस्टीन कीलर
17. संभोग क्षमता का परीक्षण
26. रक्तकंठा
32. बेवकूफी की कीमत
33. एक दूजे के लिए
41. शहद का जाल

अन्य रचनाएं

धारावाही आयोजन

50. सुनो परीक्षित, सुनो :
शिवप्रसाद सिंह
56. चमन्नचवा :
राजेंद्रप्रसाद पांडेय

नवांकुर

62. छोटा-सा इंद्रधनुष :
महेश राजा

नये हस्ताक्षर

66. अलविदा कैयी :
नाहीद

स्थायी स्तंभ

8. आपकी बात
60. धारा के विरुद्ध :
राजेंद्र राव
64. फाइल पढ़ि-पढ़ि जग मुआ :
गोपाल चतुर्वेदी
69. कथा दर्शन :
सुधीश पचौरी
70. नयी पौद
71. सारिका कथा पहेली
72. कृतियां
75. हलचल

संपादकीय कार्यालय :
10 दरियागंज,
नयी दिल्ली-110002
दूरभाष : 271911

विज्ञापन व प्रसार
7, बहादुरशाह जफर मार्ग
नयी दिल्ली-110002
दूरभाष : 3312277

अन्य कार्यालय

डा. दादाभाई नौरोजी मार्ग
बंबई-400 0001

फ्रेजर रोड, पटना

अनुपम चैंबर्स, टोंक रोड
जयपुर

139 आश्रम रोड
अहमदाबाद-1

13-1-2 गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट
कलकत्ता-700062

''गंगा गृह'' तीसरी मंजिल
6-डी, नगामबक्कम हाई रोड
मद्रास-600034

88, महात्मा गांधी रोड,
बंगलूर

407-1, तीरथभवन, क्वार्टर गेट,
पुणे-411 002

326 स्टेशन एप्रोच, सडबरी
वैंबले मिडिलसेक्स, लंदन यू. के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी बात

पाठकों का दर्द

एक बार एक ग्राहक एक मानक दूकान पर कुछ वस्तुएं क्रय करने की दृष्टि से गया. ग्राहक ने अनेक वस्तुएं देखीं. कुछ पसंद कीं. अच्छा ग्राहक फंसा देख दुकानदार ने ग्राहक की खातिरदारी भी की. वस्तुएं पैक करने के बाद ग्राहक ने बिल पर एक नजर डाली. उसे लगा कि कुछेक वस्तुओं की कीमत बाजार से कुछ अधिक है. उसने सवालिया नजर से दुकानदार को देखा. दुकानदार समझ गया. ग्राहक के पूछने के पहले ही बोल पड़ा, "एक दो वस्तुएं तो महंगी रखनी ही पड़ती हैं. हम ग्राहक का आदर-सत्कार भी तो करते हैं." ग्राहक भी सब कुछ समझ गया कि कुछ क्षण पूर्व जो उसने चाय पी थी वह अपने पैसे से ही पी थी.

सारिका ने एक माह के लिए शरद जोशी को अतिथि संपादक बनाया. पाठकों ने सोचा सर्वश्रेष्ठ व्यंग्य मिलेंगे पढ़ने को. सारिका का व्यंग्य विशेषांक आया. सात रुपये की जगह आठ रुपये देने पड़े. मुद्गलजी ने जोशीजी को जो चाय पिलायी, एक महीने तक अतिथि जी का स्वागत सत्कार किया उसे सारिका के पाठकों को छोड़-भला कौन झेल सकता था.

पुराने लेखकों के व्यंग्य आलेख इस अंक की निधि हैं. गोपाल चतुर्वेदी कई अंकों से जम नहीं पा रहे. इस अंक में जब अधिकतर रचनाएं व्यंग्य की आयीं तब उनकी असलियत उजागर हो गई है.

□ अतुल मोहन प्रसाद, बक्सर (बिहार)

होली के मूड में

होली से भरपूर सामग्री पढ़कर प्रसन्नता हुई. भीतर के पृष्ठों में रंग तथा अच्छे छायाचित्रों की कमी जो कभी सारिका की जान होती थी, अब बहुत खलती है.

इस अंक की सभी रचनाएं अच्छी हैं लेकिन इस अंक में प्रेमचंद के ऊपर दिया गया लेख, शरद जोशी तथा लतीफ घोंघी की रचनाएं भी पसंद आयीं. सबसे ज्यादा मुझे शिवानंद कामड़े की व्यंग्य रचना 'सूखे खेत : लहलहाते चिंतन' पसंद आयी. कीमत कुछ ज्यादा थी. पर होली के मूड में ले आये.

□ सूर्यभान सिंह सोलंकी, आगरा (उ.प्र.)

सोने पर सुहागा

व्यंग्य विशेषांक अनोखा, संग्रहणीय है. क्या खूब लिखा है लेखकों ने और सोने पर सुहागा है शरद जोशी का अतिथि– संपादन. इस अंक की रचनाएं एक से बढ़कर एक हैं. हास्य व्यंग्य का पिटारा खुला और पाठक 'पानी की समस्या' (शरद जोशी) से हंसते-हंसते पानी मांगने लगा.

'कुत्ता-कथा' (लक्ष्मीकांत वैष्णव) तथा 'क्रांति, कुत्ता और ट्रेजिडी' (यशवंत व्यास) पढ़कर लगा कि नेतागण, गधे के बाद कुत्ते को अपने व्यंग्य का निशाना बनाकर व्यंग्यकारों ने व्यंग्य दिशा बदल दी है. इस क्रांति की शुरुआत संभवतः दूरदर्शनीय – फिल्म – मध्यांतर के वक्त आने वाले श्वान-कार्यक्रम 'यू एंड योर पेट्स' से हुई है.

पूर्व प्रकाशित व्यंग्य रचनाओं के पुनः प्रकाशन हेतु साधुवाद, वर्तमान पीढ़ी ने पुराने व्यंग्यकारों की रचनाएं बहुत कम पढ़ी – गुनी हैं. भारतेंदु हरिश्चंद्र, प्रताप नारायण मिश्र, पं. जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी की रचनाएं उत्कृष्ट हैं. यह पहल प्रशंसनीय है.

स्व. महादेवी वर्मा के बारे में डा. रणवीर रांग्रा का लेखन याद ताजा कर गया. व्यंग्य को पितृपक्ष का कौवा बनाकर संपादक जी ने समाज की व्यावसायिकता पर तीखी चोट की है. 'मेरा मुख्य अतिथि हो जाना' (लतीफ घोंघी) और श्रीमान शरद जोशी का सारिका का अतिथि संपादक को जाना-दोनों यादगार, घटनाप्रधान व व्यंग्य खिचड़ी के दो पके हुए चावक हैं.

□ प्रभात झा, देवसर (म.प्र.)

कुछ सामान्य भी दें

मुखपृष्ठ इतना कलात्मक और लुभावना था कि मन वहीं भटककर रह गया. निःसंदेह हरिपाल श्रेष्ठ कलाकार है–आपको व हरिपाल जी को बधाई.

दूसरे मुझे आप की विशेषांक प्रणाली पर बेहद ऐतराज है. ये विशेषांक साहित्य के सामान्य विकास को पाठकों तक नहीं पहुंचने देते और आपकी नियत 12 महीने में 15 विशेषांक निकालने की रहती है. क्या कहानी में सामान्य रचनाक्रम की रचनाएं आपको प्राप्त नहीं होती हैं, जो कई बार विशेषांकों के नाम पर आप घटिया रचनाएं पढ़ने को बाध्य करते हैं.

□ श्याम देव शुक्ल, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)

कटु सत्य उजागर हुआ

होली अंक पढ़कर अच्छा लगा. इस बार कुछ नये रचनाकारों की रचनाएं पढ़ने में आयीं. बार-बार वही पुराने घिसे-पिटे या प्रतिष्ठित रचनाकारों को पढ़-पढ़कर बोर हो रहे थे.

व्यंग्य लेखों में इस अंक की सर्वश्रेष्ठ रचना मुझे शिवानंद कामड़े की 'सूखे खेत' : लहलहाते चिंतन' लगी. साज सज्जा के दृष्टिकोण से भी यही पृष्ठ सर्वोपरि रहा.

शरद जोशी की रचना 'पानी की समस्या' भी बहुत पसंद आयी. अन्य लेखों में लतीफ घोंघी, मुजतबा हुसैन, ज्ञान चतुर्वेदी अच्छे लगे. पर रवींद्रनाथ त्यागी जैसे व्यंग्यकार ने निराश किया.

प्रेम जनमेजय का लेख, व्यंग्य आकलन के लिए अच्छा काम आयेगा.

सुधीर पचौरी जी ने बहुत सुंदर लिखा है कि दूरदर्शन को 'प्रेमचंद और खेमचंद में फर्क करने में तमीज कहां?' 'प्रेमचंद का कत्ल हो रहा है' एक कटु सत्य को उजागर कर देती है.

अच्छे रचनाकार भविष्य में सारिका के माध्यम से पढ़ने को मिलेंगे ऐसी आशा है.

□ डी.जी.के. शर्मा नयी दिल्ली

प्रतीकों का सुंदर प्रयोग

होली विशेषांक खूब जमा, वैसे शरद जोशी जैसे पारस-पत्थर के संपर्क में आकर तो ऐसा होना ही था लेकिन सर्वश्री ज्ञान चतुर्वेदी, लक्ष्मी कांत वैष्णव तथा ईश्वर शर्मा की रचनाएं भी मिजाज के माकूल थीं. पहले दोनों लेखकों की रचनाएं तो ह्यूमर और पैथास का बेहतरीन समन्वय किए थीं. पुलिया तो अपना देश (या समाज) की है, कहानी का गंतव्य-झांसी 'इक्कीसवीं सदी' तथा अंजर पंजर बस तो साक्षात शासन व्यवस्था है-प्रतीकों का सुंदर प्रयोग दिलफरेब बनाता है लेखक के वक्तव्य को. 'कुत्ता कथा' में शोषित से शोषक बनने की प्रक्रिया दिल को कहीं गहरे टीसती है. शायद यही टीस ही अब नियति होकर रह गई है. लेकिन 'पानी की समस्या' की प्रशंसा तो शब्दों (और इस पत्र के स्पेस) की सामर्थ्य से बाहर है. भले ही पितृ पक्ष के कौवे जैसा आपने व्यंग्य को याद किया लेकिन हंस जैसा सम्मान देकर बखूबी याद किया. बधाई.

□ शरद शुक्ल, कानपुर

तथाकथित अतिथि संपादक

शरद जोशी जी ने अपने अतिथि संपादकीय में तो आपको अच्छी तरह डांट पिलाई है हमें ऐसा ही लगा. सब काम आपने आचार संहिता की चहारदिवारी के भीतर रहकर अपने ही हाथों निबटा दिया और पत्रिका बिकने हेतु किसी प्रसिद्ध व्यंग्य लेखक को तथाकथित 'अतिथि संपादक' बनाकर होली पर अच्छा मजाक उड़ाया गया.

लगता है सारिका के पास अब उतनी अच्छी रचनाएं नहीं आती हैं. तब भी इस अंक की (व्यंग्य रचनाएं तो बहुत ही कम हैं) कुछ प्रसिद्ध भारतीय और चेखव की रचनाओं ने प्रभावित किया.

महान लेखक चेखव की 'मिथ्या निवक' जैसी अन्य विदेशी लेखकों जैसे लू-शुन की ऐसी ही रचनाओं का प्रकाशन और प्रचार आवश्यक है.

'नवांकुर', 'नये हस्ताक्षर' दोनों ठीक ही लगते हैं. नयी पौध, कथा पहेली, कृतियां आदि स्तंभ नियमित रहें. शुभकामनाएं नये लेखकों के प्रति सदैव रहेंगी.

□ नवराज शर्मा, कंचनपुर (नेपाल)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अगर प्रेमचद आज जिंदा होते

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कथा दर्शन' के तहत सुधीश पचौरी का आलेख 'प्रेमचंद का कत्ल हो रहा है' संकीर्णता की हद तक सीमित मस्तिष्क के व्यर्थ प्रलाप के अलावा कुछ नहीं लगता.

न जाने क्यों पचौरी जी ने पंक्ति दर पंक्ति बेवजह छाती पीटी है. ऐसे आलेख लिखने वालों की मंशा या दृष्टिकोण शायद यही होता है कि साहित्य अजूबा बनकर अजायबघरों की अंधेरी सुनसान दीवारों पर लटका रहे, वह खुली हवा में लोगों के बीच न आये. ये मानसिकता साहित्य को ऐसे ही सेंतने की कोशिश की है जैसे दुनिया भर की सस्ती मंहगी, धीमी-तेज सवारियों के सहज उपलब्ध हो जाने के बावजूद मुल्लाजी मस्जिद तक हांफते हुए पैदल ही दौड़े. हर सवारी को कोसते भी जायें और थककर बेदम भी होते जायें...

यह आम शिकायत है कि अच्छा साहित्य जनसाधारण तक नहीं आ पाता. अब यदि संचार माध्यमों की व्यापकता ने इसका बंदोबस्त किया है और दूरदर्शन 'अमृता' के बहाने महाकवियों या कहानी के बहाने प्रेमचंद जैसे युगपुरुषों की जन जन व्याप्ति सुगम कराने का प्रयास कर रहा है तो चंद ऐसे हकीमों का ये प्रलाप शुरू हो गया जो मरीज को ठीक होते देखकर बस इसलिए खफा हैं कि रोग उनके बिना नब्ज देखे ही क्यों पहचाना जा रहा है. प्रेमचंद ने खूब लिखा, खूबों के लिए लिखा होगा, पर क्या अभिधा में लिखा, क्या व्यंजना में, ये तो इन्हीं हकीमों से पूछकर तय किया जाये.

'अमृता' कार्यक्रम में शामिल कविगण या प्रेमचंद आज जीवित होते तो सुधीश जी की इस बात को स्वीकार करने के लिए शायद कतई तैयार नहीं होते कि उनकी दूरदर्शन पर बेइज्जती हुई है. या कत्ल हुआ है. बल्कि उन्हें संतोष होता कि वे जो कुछ चंद दिमागों तक पहुंचा पाये वह और सुलभ बनकर औसत तथा औसत से भी कमतर आदमी तक पहुंचाया जा रहा है. और यूं वह आदमी मात्र से जुड़कर संतुष्ट ही होते.

शायद पचौरी जी ये नहीं मानते कि सात लोगों की बौद्धिक जुगाली और सत्तर करोड़ लोगों की रंजक भूख में फर्क होता है. प्रेमचंद की कौन-सी कहानी व्यंजनापूर्ण है, कौन-सी अभिधापूर्ण, ये नुकताचीनी सिर्फ उन जैसे ईन-मीन-साढ़े तीन आदमियों का मानसिक शगल हो सकता है, जिन्हें प्रसाद-प्रेमचंद-महादेवी से इतना वास्ता नहीं जितना उन्हें साहित्य की पूंछ पकड़कर स्वयं साहित्य पत्रिकाओं में बने रहने से....

अंधेरे सुनसान द्वीप पर खड़े रहकर दुनिया को आंकने से दुनिया आपकी परिभाषाओं में सिमट नहीं आती. यह कहना बेहद निराशाजनक व पूर्वाग्रह पूर्ण है कि मृणाल सेन या गोविंद निहलानी ही इन्हें बनाते तो यह स्थिति न होती. मृणाल या गोविंद पर आकर दुनिया ठहर नहीं गयी. मृणाल या गोविंद कोई जादू की छड़ी नहीं, जो जहां घुमाई-पैसा वसूल. हर एक का एक नजरिया होता है. उनका भी है, जो एक वर्ग को भाता है. बस. यदि ऐसा ही है तो गोविंद और मृणाल सेन के नाम से एक मोनोपोलिस्टिक कंपनी खोलकर देश के कला और साहित्य का कांट्रेक्ट उसे ही क्यों न दे दिया जाय?

प्रेमचंद को इन कहानियों के माध्यम से करोड़ों की तादाद में उन लोगों तक पहुंचाया गया है जिन्होंने अब तक उनका नाम भर खूब सुना था पर उनकी रचनाओं में क्या है यह नहीं जाना था, आज ये कमी दूरदर्शन ने पूरी की है, जिसके लिए उसे कोसने की कोई वजह समझ में नहीं आती.

वास्तव में तो पचौरी जी का यह कहना कि प्रेमचंद साहित्य में चाक्षुष दृश्यों के प्रति सचेतना नहीं दीखती, उनकी मंशा उजागर करता है. वह चाहते हैं कि प्रेमचंद को फिल्माने के लिए चुना ही न जाता और एक ऐसा मायावी तिलिस्म बना रहने दिया जाता जिसे सिर्फ पचौरी जी जैसे विद्वानों की व्याख्या व प्रवचनों के माध्यम से ही समाज समझे

आम आदमी इतनी बाल की खाल नहीं निकाल सकता. और दूरदर्शन आम आदमी के लिए है. जन सामान्य के लिए आसान केनवास पर सहज सपाट रूप में आयी चीज सहजग्राह्य है. और ये सरलता प्रेमचंद की समर्थता है, फिर इससे डर कैसा? हां, पेंशन के तौर पर दूरदर्शन को कोसना हो तो बात अलग है. लेकिन तब भी आपको तो ये प्रवृत्ति प्रोत्साहित नहीं करनी चाहिए.

□ प्रबोधकुमार गोविल, कोल्हापुर

भगवान-वर्ष

मुझे तो कुल मिलाकर यह आलेख ऐसा लगा कि जैसे कोई पंडित इंसान के चांद पर जा पहुंचने पर क्षुब्ध होकर अंतरिक्ष विज्ञान को ही गरियाने लगे. ये सोच कर कि चांद क्या है... चांद क्यों है, यह बताना तो मेरा धंधा था, अब क्या होगा, काश, कलमों की धार को ऐसे पहरेदार न मिलें जो उन्हें इस्तेमाल से पैना होना न देख सकें, बल्कि गुफा-गहवरों में पड़ा रखकर उसका जंग खाना या भोंथरा हो रहना जिन्हें ज्यादा सुहाए.

हमारे यहां मेहमान को भगवान समझा जाता है. तभी तो कहा जाता है. 'अतिथि देवो भव.'

दुर्भाग्यवश पिछले वर्ष भगवान का प्रकोप ही रहा. कहीं सूखा, कहीं बाढ़ तो हीं तूफान. हमारे भगवान यानि अतिथि शरद जोशी जी ने भी जेब पर हमला कर एक रुपये की हत्या कर ही दी.

परंतु भगवान को दोष देना नादानी है. आदमी की धृष्टतायें ही भगवान को प्रकोपों के लिए लाचार करती हैं. प्रकृति से हमारा खिलवाड़ ही सूखे और बाढ़ का कारज है. वहीं हम इतना ओछा और आडंबरपूर्ण जीवन जी रहे हैं जिसमें विसंगतियां ही विसंगतियां हैं. एक व्यंग्यकार को और क्या चाहिए?

आज गंभीरता का लबादा ओढ़े हम हंसना भी भूल गये हैं जबकि हंसना आदमी की जैविक आवश्यकता है. अतः हमारे स्वास्थ्य की रक्षा हेतु मुद्गल जी को हास्य-व्यंग्य विशेषज्ञ शरद जोशी जी की सेवाएं लेनी पड़ीं.

मेहमान आयेगा तो खर्चा बढ़ेगा ही. अब कहां वो जमाना और कहां वो मेहमान जो मेजबान पर बोझ न बनकर; दूध में तिनके की भांति रह लेते थे.

शरद जी आप अपनी जन्मपत्री फिर देख लें शायद दुबारा संपादक बनने का योग हो, परंतु मेहमान बन जाना हो तो पूर्व सूचित कर दें ताकि अपने घाटे के बजट में हम मूल्य वृद्धि का प्रावधान कर सकें.

"इस अंक में आपको हंसा रहे हैं और हंसी में आप मूल्य-वृद्धि का गम भूल जायेंगे. नियमित अंकों का मूल्य 7/- रुपये ही होगा." यह होली अंक का सर्वश्रेष्ठ व्यंग्य था और व्यंग्यकार थे अवधनारायण मुदगल.

□ कुशल कुमार, बंबई

अभिवादन व खेद सहित

आंकड़े एक महत्वपूर्ण बिंदु होते हैं. मील के पत्थर की तरह. जैसे अगर किसी के सिर पर घने काले बाल हैं और लाखों की संख्या में हों तो अगर कोई एक दो बाल नोंच ही ले तो भी उसके बाल बचे रहेंगे. जोशी जी, सिर पीटने की कोई जरूरत नहीं है वरना लोग समझेंगे कि हिंदी साहित्य में कोई नया मदारी आ गया है जो कि डमरू बजाने की जगह सिर ठोंक-ठोंककर बजाता है. आजकल तो लोग मदारी का खेल देखकर तालियां जरूर बजाते हैं लेकिन इकन्नी नहीं देते हैं. अगर किसी के पास कहानी की समझ कुछ ज्यादा है तो आप दाल-भात में मूसरचंद बनने वाले कौन होते हैं? कहानी का अर्थ ही होता है जो हल्के फुल्के ढंग से कह दिया जाय. अगर किसी ने कह ही दिया तो आप उसे अच्छी कहानी क्यों नहीं मानेंगे ? लगता है कि आप को फुल्कियां खाने से परहेज है. जरूर उसकी भाप से कभी आप का मुंह जल गया होगा और आज तक ठीक नहीं हुआ होगा.

व्यंग्य विधा को गंदे लेखन से बचाना होगा. अगर इसमें गंदगी फैल गयी तो जबरदस्त बीमारी फैलने की आशंका है क्योंकि आजकल इसी विधा में ज्यादातर लोग डूबते हैं. इसमें शोधक यंत्र लगाने की आवश्यकता है.

श्री अवध नारायण मुद्गल ने जो चाय आप को पिलायी वह लगता है कि साधारण ही थी इसीलिए यह व्यंग्य विशेषांक भी साधारण ही रहा. अगर आप को स्पेशल चाय मिली होती तो निश्चय ही यह विशेषांक भी स्पेशल होता. बहरहाल जितनी देर तक आप को चाय का स्वाद मजा देता रहा उतनी देर तक तो विशेषांक अच्छा ही लगा.

एक सुझाव मैं और देना चाहूंगा कि अतिथि संपादक की तरह ही अतिथि लेखकों का भी एक विशेषांक निकाला जाय. बिना पारिश्रमिक के (विज्ञापन कम सहयोग). इससे पत्रिका के अनुमानित घाटे में कुछ कमी आयेगी. आप को कुछ लेखकों से समय पर रचनाएं न मिली हों तो उनकी रचनाएं लेकर आप एक लेट-लतीफ विशेषांक निकलवा दीजिये. शेष सब (यानी पत्रिका की सामग्री) ठीक है. अंत में शरद जोशी जी से क्षमा याचना सहित---

□ सतीश चंद्र गुप्त, इलाहाबाद

समस्या पानी ही की क्यों

अच्छा होता यदि जोशी जी अपनी रचना 'पानी की समस्या' के स्थान पर अन्य रचना प्रकाशित करवाते क्योंकि विभिन्न माध्यमों से अधिकतर पाठक इस रचना से वाकिफ हैं. 'पुलिया, गरम बोट और बकरियां' (ज्ञान चतुर्वेदी) व्यंग्य नहीं एक झन्नाटेदार तमाचा है जो पाठक के जेहन में आज की व्यवस्था के स्वरूप पर सोचने की बाध्यता को सिद्दत के साथ महसूस कराता है.

□ ई.के.सी.एच.टी.एस.टी.एच.बुस, रायपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : 1912. प्रमुख कृतियां : भरे बाजार में शिकस्ता कंगूरे (कहानी संग्रह), लहू के फूल (वृहद उपन्यास), घरौंदा और मदार (उपन्यास) प्रस्तुत कहानी 'लहू के फूल' का एक अंश है.
सहित्य अकादमी में पुरस्कृत, राज्य सभा के मनोनीत सदस्य
संपर्क : 24वैस्टर्न कोट, जनपथ, नयी दिल्ली-110001

हयात उल्लाह अंसारी

पत्थर की अप्सरा

अभी परदा उठने में बीस मिनट बाकी थे कि बंबई शहर के उच्च वर्ग के लोगों से हाल खचाखच भर गया. आज अगली सीटों के दाम सौ-सौ रुपये थे, लेकिन इस पर भी एक कुरसी भी खाली न थी. खाली होना कैसा! कल शाम से पहले ही सब टिकट बिक चुके थे.

प्रेस गैलरी में सिर्फ उन अखबारों के प्रतिनिधियों को बुलाया गया था, जिनके यहां ललित कलाओं का स्थायी स्तंभ होता था. राहत तो अब

जब मैं दो महीने की थी तब से ही मेरे दूध में जहर मिलाना शुरू कर दिया गया था और उसकी मात्रा बढ़ाते गये थे. जब मैं जवान हुई तो जहर की मात्रा इतनी बढ़ गयी कि उससे आधी मात्रा भी करके नाग को पिलायी जाती तो वह मर जाता... मैं जहर की वैसी ही आदी हो चुकी थी जैसे नशेबाज शराब का.

सिर्फ फ्री-लासर था, इसलिए वह अखबारी निमंत्रण-पत्र तो हासिल न कर सका और टिकट लेकर आया था, मगर उसको प्रेस-गैलरी में जगह दे दी गयी थी.

परदा उठने में अभी दस मिनट बाकी थे कि 'इंडियन आर्ट रिव्यू' का कला-समीक्षक डगलस आया. यह लंबे कद का अधेड़ उम्र अंग्रेज था. उसके मुंह में पाइप और बदन पर बहुत उम्दा सिला हुआ सूट था. उसने आते ही रामकृष्ण से, जो 'बंबई टाइम्स' के साप्ताहिक संस्करण का समीक्षक था, जोर से कहा, "मैंने आज तुम्हारा कालम पढ़कर यह फैसला कर लिया कि मैं भी यह अजूबा देखूंगा."

"तो मेरे लेखन में इतनी कशिश है?"

"कशिश! क्या कहते हो!! मुझे यकीन है कि इस मजमे का आधा नहीं, तो चौथाई हिस्सा सिर्फ तुम्हारी समीक्षा को पढ़कर आया है."

'बंबई टाइम्स' का साप्ताहिक संस्करण ही सिर्फ एक ऐसा अखबार था, जो सरकारी तबके में मकबूल था.

डगलस ने अपने पाइप को जलाते हुए कहा, "कृष्ण, सच कहो, नर्तकी की तरफ से कुछ कमिशन भी मिला?"

रामकृष्ण ने कहकहा लगाकर कहा, "कमिशन कैसा? करीब का जलवा तक नहीं मिला."

रामकृष्ण बहुत ही उम्दा सूट पहने हुए था.

देसाई ने राहत से कहा, "यह रामकृष्ण जो है, वह डगलस से भी ज्यादा अंग्रेज है. अंग्रेजों ही की तरह सोचता है और उन्हीं की तरह

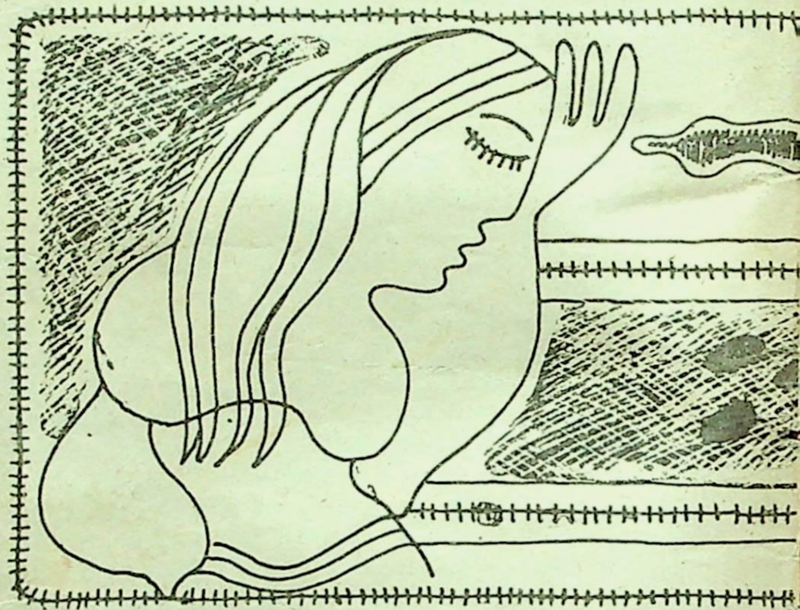

लिखता है. हिंदुस्तानी चीज तो उसे जंचती नहीं है. ऐसे आदमी क कलम से एक हिंदुस्तानी नर्तकी की तारीफ निकल जाये, यह चीज है वाकई हैरत अंगेज."

इतने में घंटी बजी और परदा हटने लगा. हाल में एकदम से सन्नाटा छा गया. स्टेज पर साजिंदों की जगह सिर्फ एक औरत नहीं थी, बल्कि आज उसके साथ आधा दर्जन मर्द भी थे.

परदा जो हटा तो स्टेज पर ग्यारह लड़कियां नजर आयीं. उन्होंने वंदना गायी लेकिन लोगों ने उसे बहुत बेलुत्फी से सुना, क्योंकि सब ऊषा के इंतजार में थे. इधर वंदना खत्म करके लड़कियां दो कतारों में बंटकर दायें-बायें हटीं और उधर संगीत एकदम से बुलंद हो गया और शिकारी परिंदे की तरह झपटती हुई ऊषा ने घुंघरुओं को बजाते हुए स्टेज के गिर्द तीन चक्कर लगाये. उसकी झपट में बिजली की कौंध भी थी और तलवार की चमक भी. उसकी हर हरकत में तेजी तो बला की थी और नजाकत बिलकुल नहीं, लेकिन जैसे ही उसके चक्कर खत्म हुए और वह स्टेज के बीच में आयी उसने अपने हाथों-पैरों, गरदन और आंखों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को इस तरह संगीत के स्वर पर एकदम से रोका कि मालूम होता था कि कोई गिरती हुई दीवार 45 डिग्री पर आ कर एकाएक रुक गयी हो. ऊषा रुक गयी और रुकी रही. फिर ठहराव टूटा. एक झुरझुरी-सी आयी. आंखों में सजलता पैदा हुई और घुंघरू गुनगुनाने के अंदाज़ में बोले—"छम..छम..छम..छम छमा..छम.." अगर पहले के तीनों शानदार चक्कर फौलाद के दायरे थे, तो अब जो हरकतें देखने में आ रही थीं, वे थीं फूलों की डालियां! इन दोनों किस्म की हरकतों के दरम्यान वही जबरदस्त जज्बाती रिश्ता था, जो बिजली की कड़क और गरज के बाद हलकी बूंदों में होता है.

संगीत भी अब कोमल था और नृत्य वैसा था, जैसे सावन की फुहार. उस में नारीत्व ही नारीत्व था और वह भी घरेलू जिंदगी वाला. लगता था कि झूले में लड़कियां गा रही हैं और पकवान पक रहे हैं. दर्शक बहुत सुकून महसूस करने लगे और अपनी-अपनी सीटों में डूब-से गये. फिर यह सावन की रिमझिम वाला नृत्य तेजी पकड़ने लगा. होते-होते वह भादों की झड़ी में बदल गया. दर्शकों की आंखों के सामने मूसलाधार बारिश में नहाये हुए धान के खेत और लबालब भरे ताल तलैयों वाले घने जंगल घूम गये.

यह मूसलाधार बारिश होती रही. ताल बढ़कर झीलें और झीलें समुद्र बनते रहे. बरसते-बरसते पानी रुकने लगा; और बूंदें कम होने लगीं. कम होते-होते यह आलम हो गया कि एक-एक बूंद टप-टप अलग-अलग गिरने लगी और इसकी आवाज भी एक-एक कर के सुनाई देने लगी—"छम..छम..छम..छम..छम.."

बूंदें कम होने के बाद और कम होने लगीं और उनकी आवाज मद्धिम से मद्धिम होने लगी. ज्यों ज्यों बूंदों की आवाज मद्धिम होती जाती, दर्शकों के दिल उनके कानों और आंखों की तरफ खिसकते आते और ज्यों-ज्यों आंखों और कानों के पास दिल आते जाते, वह गुनगुनाते जाते कि सांस आहिस्ता लो, क्योंकि बहुत नाजुक वक्त है, और आहिस्ता! और आहिस्ता!!

जब इंटरवल हुआ, तब लोगों को पता चला कि नृत्य में पूरा घंटा बीत गया. नृत्य ने ऐसा कब्जा जमा लिया था लोगों के दिलों पर कि इंटरवल के हो जाने के बाद भी उनकी आंखों के सामने वह जारी रहा. वे अंधेरी बरसाती रात में किसी अकेले तारे की तरह चमकती हुई आंखें, वसंत ऋतु में पर्वतों पर चलनेवाले हवा के झोंकों की तरह लहराती हुई गरदन वे संगीत बरसाने वाली उंगलियां और वे कयामत ढानेवाले और फिर कयामत के बाद सुकून लाने वाले घुंघरू.

डगलस राहत के पास ही बैठा था. इंटरवल के बाद वह दो मिनट तक सन्नाटे में बैठा रहा. फिर अचानक ऊंची आवाज से कहने लगा, "अजूबा है, वाकई अजूबा है, बल्कि अजूबा नहीं, यह तो एक मुहाल चीज है, जो वजूद में आ गयी है. क्यों कृष्ण! तुमने इंटरव्यू की हर मुमकिन कोशिश करके देख ली या कोई संभावना छोड़ी है, जो मैं आजमा देखूं?"

"देख लो, तुम भी अपनीवाली करके!"

"मैं किसी न किसी तरह उससे मिलूंगा जरूर. ऐसी हस्ती से बात न की तो जर्नलिस्ट होना बेकार है."

डगलस के तारीफी वाक्य सुनकर रामकृष्ण की आंखों में अजीब-सी खुशी आ गयी.

राहत जब शो देखकर घर वापस आया, तो उसके दिमाग में ऊषा पूर्ववत् नृत्य कर रही थी. राहत ख्वाब में भी उसको देखता रहा और दूसरे दिन और दूसरी रात को भी. उसके बाद भी ऊषा ख्वाब और जागृति में उसके दिमाग पर छायी रही.

राहत अपने आप से पूछता था कि इस नर्तकी में कौन-सी ऐसी खास बात है, जो वह मेरे दिमाग पर इतनी छा गयी है. मैं लखनऊ में एक से एक नाच देख चुका हूं. और वहां की नर्तकियों की नज़ाकतों से आनंदित हो चुका हूं. ऊषा में न तो लखनऊ के कथकों के नगीनों जैसी तराशी हुई मुद्राएं हैं, न उनकी जैसी रूपहली हंसी. और न वह पलकों के जानलेवा खम! ऊषा में तो नागिन जैसी लचक और चीते जैसी तड़प है. जिन में तेजी और तुंदी तो होती है, पर नजाकत नहीं होती. राहत का बेअख्तियार जी चाहता था कि किसी तरह ऊषा को करीब से देख लूं और कुछ बातचीत भी कर लूं. उसके बाद रिपोर्ट लिखूं, मगर राहत यह भी महसूस करता था कि जब बड़े-बड़े जर्नलिस्ट इस सम्मान को न हासिल कर सके, तो मैं क्या चीज हूं. राहत ने, जैसे भी बना, ऊषा से मिले बगैर उसके नृत्य पर एक लेख लिख डाला. वह अपने लेख से बिलकुल असंतुष्ट था, लेकिन देसाई ने लेख को बेहद पसंद किया. उसका इतना अच्छा मुआवजा भी दिला दिया, जिसकी राहत को बिलकुल उम्मीद नहीं थी.

जिस दिन राहत का लेख छपा, और राहत ने उसे पढ़ा, उस दिन उसके दिल ने कहा कि इस में तो ऊषा एक चौथाई भी नहीं आयी. काश! मैं उससे मिल सकूं और उसको करीब से महसूस कर सकूं.

कुछ ही दिनों के बाद ऐसा इत्तफाक पेश आ गया, जैसा जिंदगी में कम ही पेश आता है. वह यह कि राहत बस पर जो सवार हुआ, तो देखा, कि एक सीट पर ऊषा बैठी हुई है.

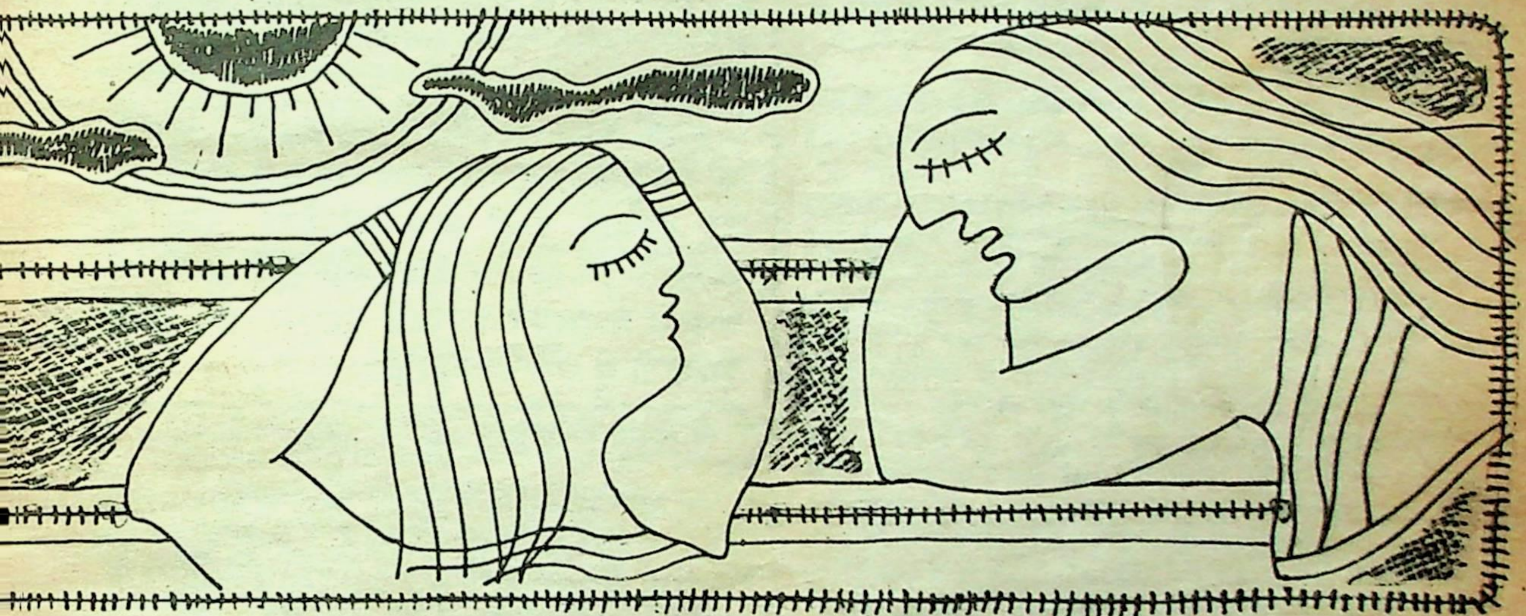

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राहत उसके बराबर की सीट पर जा बैठा था, और मौका पाते ही उसने ऊषा को सलाम कर लिया. राहत को उम्मीद न थी कि सलाम कबूल होगा, लेकिन ऊषा ने इस तरह उसका जवाब दिया, जैसे जान-पहचान वाले लोग देते हैं.

''मैंने आपका शो देखा था.''

''पिछले शो में आप अखबारवालों में बैठे हुए थे, मुझे याद है.''

''आपको याद है? वहां तो कई हजार आदमी थे?''

''थे तो कई हजार, लेकिन ऐसी नजरें कम ही थीं जो नृत्य से गुजरकर मुझ तक पहुंचती हों.''

''अपनी बात को आप कुछ और स्पष्ट कर सकती हैं?''

''जब मैं दर्शकों को सलाम करके विदा हो रही थी तो आपकी नजरों में मुझे कुछ नजर आया था.''

''हां, मैंने भी उसी वक्त आपकी नजरों में कुछ महसूस किया था. तब से मेरा जी बेचैन था कि आप से कुछ बात करूं.''

''आपने जो चाहा था, सो हो गया.''

''यह तो कुछ नहीं हुआ. मुझे कुछ वक्त दीजिये. तो आपके निवासस्थान पर आ जाऊं.''

''बस आप इतना समझ लीजिये कि हर शख्स का असल गुरु उसका भाग्य होता है.''

''मैं तो निजी तौर पर नहीं, अखबार के लिए मिलना चाहता हूं.''

''नहीं, मैं अखबार वालों से नहीं मिलती हूं. बाबू जी, हम लोग जंगल के पंछी हैं. शहरवालों की बातों को, अखबार को और इस तरह की चीजों को हम क्या जानें?''

राहत ने कुछ और कहना चाहा.

''नहीं, अब आग्रह न कीजिये. अगर भगवान की मर्जी है, तो फिर किसी दिन इसी तरह मुलाकात हो जायेगी, और अगर मेरे मन ने गवाही दी तो कुछ और बातें बता दूंगी.''

राहत ने घर आकर उस मुलाकात और बातचीत को दिमाग में समेटा तो उसे महसूस हुआ कि ऊषा ने उससे बातें तो इस तरह कीं, जैसे जाननेवाले करते हैं, और विदा भी इसी तरह हुई, लेकिन मुलाकात करने से इंकार करने में उसने जरा भी तकल्लुफ नहीं किया. दूसरी बात यह कि उसके तौर-तरीके और अंदाज में कोई बात ऐसी ज़रूर थी, जो बेहद गैर-मामूली थी. अब राहत के लिए उस लड़की की शख्सियत ज्यादा रहस्यपूर्ण बन गयी और उसमें कशिश बेहद बढ़ गयी.

ऊषा को बंबई में आये पांच-छह माह हुए थे. इस दौरान पांच शो उसके हो चुके थे. वह शो, जो राहत ने देखा, तीसरा था. इसके अलावा चार शो क्लबों वगैरा में दिये. हर जगह मध्यवर्ग और उच्च वर्ग में उसके शो बहुत पसंद किये गये. शो के डाइरेक्टरों का ख्याल था कि अगर ऊषा के नृत्यों में कुछ अन्य चीज़ें मिला दी जायें, तो वह लोगों में भी मकबूल हो जायें और लोग इस ख्याल के मुताबिक नये शो का नक्शा भी बना रहे थे कि अचानक ऊषा ने उन लोगों से कह दिया कि अब मैं एक शो भी नहीं दूंगी और फिर उसने अपना यह फैसला तब्दील नहीं किया.

एक दिन एक रेस्तोरां में राहत की नजर एक शख्स पर पड़ी, और वह जाना-पहचाना-सा लगा. अचानक राहत को यह ख्याल आया कि वह रामकृष्ण है. रामकृष्ण अपने आला दर्जे के सूट के बजाय मामूली धोती और कुरते में था. यह वह लिबास है, जिस पर अभी कल तक रामकृष्ण की व्यंग्यपूर्ण नजरें पड़ती थीं. राहत को उसको पहचानने में जो दुशवारी हुई थी, तो उसकी वजह सिर्फ इतनी ही नहीं थी कि वह धोती और कुरते में ही था, बल्कि यह भी हुई कि उसका चेहरा बेहद बदला हुआ था. वह सूख गया था और उस पर मुरझायापन-सा था और आंखें किसी सोच में डूबी हुई और खोयी हुई थीं.

''मिस्टर राम कृष्ण!''

''आप कौन?... हां,..हां.. आप मिस्टर राहत!''

''आप तो बिलकुल बदल गये!''

''बिलकुल तो अभी नहीं बदला हूं, लेकिन थोड़ा-बहुत जरूर बदल गया हूं, मगर हां, मेरे लिए सब लोग ज़रूर बिलकुल बदल गये हैं.''

''वह कैसे?''

''वह यों कि अब पुराने लोग मुझे पहचानने में तकल्लुफ करते हैं. मैंने सूट-बूट छोड़ दिया है न!''

''आप तो बहुत सख्त किस्म के अंग्रेज-पसंद थे. सूट के सिवा आपको लोगों ने कभी किसी और लिबास में देखा ही नहीं था!..शायद कोई खास वजह है.. माफ कीजियेगा, मैं एक निजी बात की कुरेद कर रहा हूं.''

''नहीं, कोई खास वजह नहीं है...''

जब राहत ने देखा कि रामकृष्ण लिबास की तबदीली की गुफ्तगू से कतरा रहा है, तो उसने दूसरा ज़िक्र छेड़ दिया, ''मैंने आपका वह आर्टीकल पढ़ा था, जो आपने ऊषा के नृत्य पर 'आर्ट रिव्यू' में लिखा था. वह आर्टीकल खुद अपनी जगह पर आर्ट का एक शाहकार था.''

''उस आर्टीकल को मैंने भी बहुत बड़ी तारीफ पेश की. वह यों कि 'आर्ट रिव्यू' से इस्तीफा दे दिया.''

''इस्तीफा दे दिया?''

''जी हां. अब आप पूछेंगे, क्यों? तो सुन लीजिये!.. वह आर्टीकल एडीटर को पसंद नहीं आया. उसने पूछा, यह तुमने क्या लिख मारा है, प्राचीन काल का नृत्य और प्राचीन भारत की तहजीब और न जाने क्या-क्या! जवाब में मैंने यह नहीं कहा कि अगर आपको पसंद नहीं है, तो दूसरा आर्टीकल लिखकर मैं उसमें कही गयी बातों का खंडन कर दूंगा, बल्कि मैंने यह यह कहा कि यह आर्टीकल तो मेरी रूह की आवाज है. यह कहकर मैं दफ्तर से चला आया और इस्तीफा भेज दिया.''

बाबा कहते थे, ''बेटी तू अप्सरा है... अप्सरा को देवता के सिवा कोई हाथ नहीं लगा सकता.... जो इनसान तुम्हें हाथ लगायेगा, फना हो जायेगा.'' मैं इस पर खुश होती थी, अपने को अप्सरा समझकर इतराती थी, पर अब तो मैं पछताती हूं इस जिंदगी पर.

''तो आपकी सेवाएं किसी और बड़े अखबार ने हासिल कर ली होंगी?''

''क्या करोगे पूछकर, कि मैं क्या कर रहा हूं. मेरे पुराने दोस्तों का ख्याल तो यह है कि मेरा दिमाग चल रहा है..'' यह कहकर राम कृष्ण बहुत जोर से हंसा. उसकी हंसी में बड़ी लताफत और कशिश थी.

''सुनो, मैं क्या कर रहा हूं. मैं आजकल ऊषा का अध्ययन कर रहा हूं. खुद ऊषा का. ऊषा के आर्ट का नहीं. ऊषा के अंदर मैं उसके गुरु देव या उसके आर्ट के रचियता की तलाश कर रहा हूं. मेरी नजर में ऊषा, ताज बीबी है, उसका आर्ट ताजमहल है और उसके पीछे एक शाहजहां है. मैं उस शाहजहां के दिल-दिमाग का अध्ययन करना और उसको समझना चाहता हूं. मिस्टर राहत, आर्ट का अगर गहरा अध्ययन करो, इतना गहरा कि अपने को उसमें समो लो तब तुम आर्ट को पा सकते हो. कैसे समझाऊं. तुमको मैं यह बात.

''राहत! ऊषा के आर्ट में जो फूल हैं, उनकी सुर्खियों में खून और उनकी पंखुड़ियों में मशीनगनें छुपी होती हैं. उसके आर्ट में जो आंसू हैं, उन में पैट्रोल के टेंक हैं और जो मुस्कराहटें हैं, उनमें अपनी विजयों का विश्वास है.

''फिर क्या ऊषा ऐसी चीज़ नहीं है, जिसके अध्ययन में ज़िंदगी लगा दी जाये?'' रामकृष्ण बिलकुल ही अचानक राहत को विस्मित छोड़कर, यह कहकर चला गया कि ''मैं ऊषा के गुरु पर एक किताब लिखने की कोशिश कर रहा हूं.''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राहत सोचने लगा कि क्या इसका मतलब यह नहीं है कि वह ऊषा से मिलता भी रहा है. उससे गुफ्तगू भी करता रहता है और करीब से उसका आर्ट भी देखता है. मगर इस फिकरे का क्या मतलब है कि ऊषा की जिंदगी एक बेहद खतरनाक आर्टिस्ट का शाहकार है. उसको खतरनाक क्यों कहा?

एक रात जब राहत सोने जा रहा था कि किसी ने उसका दरवाज़ा खटखटाया. राहत ने उठकर दरवाजा खोला तो देखा कि देसाई है. इधर देसाई बहुत व्यस्त रहता था और राहत के पास बहुत ही कम आता था इसलिए उसका आना ही गैर-मामूली बात थी, न कि ऐसे वक्त आना.

आते ही देसाई कहने लगे, ''मिस्टर राहत, आप अखबार के अच्छे रिपोर्टर भी हैं और अपनी सरकारी नौकरी के जमाने में भेष बदलकर जासूसी भी कर चुके हैं. इसलिए आप चाहें, तो एक ऐसा काम कर सकते हैं जो दिलचस्प भी है और जिस की उजरत भी अच्छी मिलेगी.''

''बताइये!''

''ऊषा का पता लगाना है कि वह कहां है और किस हाल में है?''

''एक महीना हुआ, मैंने उसे बंबई में देखा था.''

''लेकिन यह तो पुरानी खबर है. यहां से वह बनारस चली गयी थी और वहां एक होटल में ठहर गयी थी. वहां खास ऊषा ही के कमरे में एक रात रामकृष्ण की अचानक मौत हो गयी.''

''रामकृष्ण की...?''

''हां, सबको उस मौत का बहुत अफसोस है. हुआ यह कि ढाई बजे रात को ऊषा की साथी या बहन बिमला ने ऊषा की तरफ से पुलिस को टेलीफोन किया, और रामकृष्ण की मौत की खबर दी. जब पुलिस आयी तो ऊषा ने यह बयान दिया कि रामकृष्ण उससे बेहद मोहब्बत करता था और मोहब्बत ही की वजह से उसने अपनी नौकरी भी छोड़ दी थी, और अंग्रेजी लिबास और अंग्रेजी समाज को भी छोड़ दिया था. पुराने दोस्तों को भी छोड़ दिया और घर-बार भी तज दिया था. अब वह ऊषा के आर्ट पर किताब लिखने के लिए संस्कृत सीख रहा था और भारतीय नृत्य का अध्ययन कर रहा था, लेकिन ऊषा ने जवाब में मोहब्बत नहीं दी, बल्कि उसकी जान बचाने के लिए वह बंबई से अचानक किसी को पता बताये बगैर बनारस चली आयी, लेकिन रामकृष्ण ने किसी न किसी तरह उसका पता मालूम कर लिया, और उसके पास पहुंच गया. उसकी मोहब्बत का ऊषा पर भी असर पड़ा था. उसने रामकृष्ण को अपनी जिंदगी का राज बता दिया. उसने कहा कि मैं एक साधु के श्राप का शिकार हूं और मेरे चुंबन की कीमत चुंबन लेने वाले की मौत है.

''रामकृष्ण ने उसके इस खौफ को हंसी में उड़ा दिया. ऊषा ने आग्रह किया और कहा कि यह शाप वहम नहीं, हकीकत है, लेकिन रामकृष्ण न माना, और वह बराबर ऊषा को समझाता रहा कि वह वहम में गिरफ्तार है. और शाप की कोई हकीकत नहीं है. आखिर ऊषा ज्यादा इंकार न कर सकी. और रामकृष्ण ने ऊषा का चुंबन ले ही लिया. चुंबन लेते ही उसकी मौत हो गयी.

''इस वाक्ये पर दोनों औरतें हिरासत में ले ली गयीं, लेकिन जल्दी ही पोस्ट-मार्टम की रिपोर्ट देखने के बाद रिहा कर दी गयीं, क्योंकि रिपोर्ट ने मौत की वजह दिल की हरकत का बंद हो जाना करार दिया था. रिहा होकर वे दोनों उसी दिन बनारस से गायब हो गयीं. अब उनका पता लगाना है कि वे कहां गयीं. क्या आप यह काम कर सकेंगे?''

''इस काम का मुझसे क्या सरोकार? मैं अखबार का काम तो कर सकता हूं, लेकिन पुलिस का काम नहीं कर सकता! वह तो छोड़ चुका हूं.''

''इसे आप अखबारी काम ही समझिये. यों समझ लीजिये कि आपको ऊषा का इंटरव्यू लेना है. अगर ले आये तो उसे हर अखबार बहुत शौक से छापेगा और अच्छे दाम भी देगा.''

रूपाजीवा क्रिस्टीन कीलर

इंग्लैंड के 'वॉर मिनिस्टर' जॉन प्रोफ्यूमो ने घड़ी पर नजर डाली और फिर अपनी 'बेंटले' कार में चल दिया. आज उसे लार्ड ऐस्टर ने अपनी हवेली पर दावत पर बुलाया था. बल खाती सड़क पर उसकी भारी कार तैरने लगी. कुछ ही देर बाद वह क्लाइवडेन पहुंच गया जिसके एक कोने पर लार्ड ऐस्टर की भव्य हवेली खड़ी थी. अंदर चलकर लार्ड ऐस्टर ने उसे अपने 'स्विमिंग पूल' की तरफ से होकर गुज़ारा. हल्के नीले जल में प्रोफ्यूमो ने फिर उसे देखा था-बिल्कुल नग्न. क्रिस्टीन कीलर बिल्कुल नग्न ही नहा रही थी. गौर वर्ण, लचीला बदन, संगमरमर में तराशी मूर्ति जैसी. जब वह बाहर निकली तो उसके शरीर पर पानी की बूंदें ऐसी लगती मानो कमल की पंखुड़ी पर सुबह की ओस ठहर गयी हो.

वैसे क्रिस्टीन जैसी कई रूपाजीवाओं का अड्डा चलाता था स्टीफन वार्ड जिसके चकले में एक से एक छंटे नग भरे पड़े थे.

सबसे पहले क्रिस्टीन को स्टीफेन वार्ड ने लंदन-स्थित सोवियत दूतावास के 'नेवल अटैची' लेफ्टिनेंट कमांडर यूजीन इवानोव को अपने रूप-जाल में लपेटने छोड़ दिया था. और पहले ही बार में क्रिस्टीन उसके शयन-कक्ष की स्वामिनी बन गयी. इवानोव भी अपना मतलब सिद्ध करने के चक्कर में था.

जब तीनों भंवरे—लार्ड ऐस्टर, स्टीफन वार्ड और लेफ्टिनेंट कमांडर इवानोव—प्रोफ्यूमो को भी अपनी मंडली में ले आये तब सबसे पहले डाइरेक्टर जनरल सर रॉजर हॉलिस ने केबीनेट सेक्रेटरी सर नॉर्मन ब्रुक को इशारा दिया कि प्रोफ्यूमो को केबीनेट सेक्रेटरी ने आगाह किया तब प्रोफ्यूमो की उठक-बैठक ठीक लोगों में नहीं हो रही है. और जब प्रोफ्यूमों को केबीनेट सेक्रेटरी ने आगाह किया तब प्रोफ्यूमो को सहसा आभास हुआ कि उसकी दाढ़ी में तिनका अटका हुआ है. बदहवास होकर वह ब्रिटिश जासूस संस्था एम.आई. 5 की तरफ भागा और क्रिस्टीन-कांड को दबाने का प्रयत्न करने लगा.

पर धुआं इतना फैल चुका था कि लोग सूंघते हुए आग के पास तक पहुंच ही गये. तब कनजर्वेटिव सरकार के प्रधान मंत्री हैरल्ड मैकमिलन के कान भी घोड़े की तरह खड़े हो गये थे. और जब किसी कार्यवश मैकमिलन को बाहर जाना पड़ा तब उसके प्रिंसिपल प्राइवेट सेक्रेटरी टिमथी ब्लिग को 'डेली मिरर' पत्र के संपादक ने हुकसाया, परिणामस्वरूप बिलग ने जासूस संस्था को पीछे लगा दिया. पूछताछ होने पर प्रोफ्यूमो ने कहा भी था, ''क्रिस्टीन कीलर से मेरा कोई शारीरिक संबंध नहीं हुआ है.''

और फिर बौखलाये हुए प्रोफ्यूमो ने यह बयान हाउस ऑफ कॉमंस में भी दे दिया. आग फैलते ही विपक्षी दल अपने-अपने पंखे झलाकर हवा देने लगा. विशेष तौर पर विपक्षी नेता हैरल्ड विल्सन और उसके सहायक जॉर्ज विग ने हाय-तौबा मचा डाली. नतीजा यह हुआ कि मामला बिगड़ता चला गया और एक दिन प्रोफ्यूमो को त्याग-पत्र देना ही पड़ा. बात को बतंगड़ बनाने में विपक्षी दल बिल्कुल नहीं चूका और अंत में हैरल्ड मैकमिलन का सिंहासन ही हिल गया

—बाला दुबे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊषा के हालात की तफतीश पर जिस चीज ने राहत को सबसे अधिक तैयार किया, वह खुद ऊषा थी. राहत आज भी उसकी अजीबो-गरीब शख्सियत में वही कशिश महसूस करता था, जो पहले दिन महसूस की थी. कैसी हस्ती है ऊषा भी!.. उसकी पृष्ठभूमि में भी एक अजीब-सी फिजा है. वह क्या है?

साधु के जिस शाप के बारे में ऊषा ने बयान दिया है, उसकी असलियत क्या है? अब तो ऐसा हसीन और आकर्षक राज थी ऊषा, जिसकी राहत पहले कल्पना भी नहीं कर सकता था. वह राज राहत को खींच रहा था, और आज उसको राज खोजने का मौका भी मिल गया था.

दूसरे दिन सुबह की गाड़ी से राहत बनारस के लिए रवाना हो गया, और बनारस पहुंचकर वह उसी होटल में ठहरा, जहां ऊषा ठहरी थी और जहां रामकृष्ण की मौत हुई थी. होटल में ठहरते ही राहत ने तफतीश शुरू कर दी. राहत को यकीन था कि ऊषा ऐसी औरत है, जिसको एक बार देख लेने के बाद भूल जाना आसान नहीं. इसलिए जिन-जिन लोगों का ऊषा से वास्ता पड़ा है, उनको वह याद जरूर होगी. पूछ-ताछ करते-करते राहत स्टेशन तक पहुंच गया और फिर वहां उसको वह कुली मिल गया, जिसने ऊषा का सामान उठाया था. उसे ऊषा भी याद थी, और उसकी बहन बिमला भी. कुली से यह भी मालूम हो गया कि उन दोनों ने बरेली का टिकट लिया था. राहत जब बरेली जा रहा था तो यह सोच रहा था कि जिस गाड़ी से ये दोनों औरतें बरेली गयी हैं, वह वहां रात को एक बजे पहुंचती है, इसलिए इस बात की काफी संभावना है कि उन दानों ने जनाना वेटिंग-रूम में रात काटी हो क्योंकि शहर स्टेशन से काफी दूर है. इसलिए इतनी रात गये दो औरतें अकेले तांगे पर बैठकर शहर जाने की हिम्मत नहीं कर सकती हैं.

राहत ने जनाना वेटिंग-रूम की लेडी-वेटरों से जो तीन थीं, पूछ-ताछ की तो उसका अंदाजा सही निकला. उनमें से एक ने बताया कि दोनों औरतें काठ गोदाम जाना चाहती थीं. चूंकि रात की गाड़ी जा चुकी थी, इसलिए वे सुबह की गाड़ी से गयीं. काठ गोदाम पर राहत को पता लगाने में काफी कठिनाई हुई. वहां छह आदमियों ने छह औरतों का पता बताया. और हर एक का बयान ऐसा था कि राहत को शक होता था. हो सकता है, कि यही औरत ऊषा हो. आखिर राहत ने फैसला किया कि वह इन छह के छह पतों पर जाकर तफतीश करेगा.

इन छह औरतों में से तीन को देखने में राहत को सात-आठ दिन लग गये. चौथे पते पर जब राहत अलमोड़े पहुंचा, तो उसे ऊषा मिल गयी.

राहत ने उसी समय देसाई को तार दे दिया कि ऊषा मिल गयी है और अमुक-अमुक जगह ठहरी हुई है.

राहत को पूछ-ताछ करने पर इतना और मालूम हो गया कि ऊषा बीमार है. और घर से बाहर नहीं निकलती. इस घर में भंगी और एक छोकरे के अलावा अगर कोई जाता है, तो वह है डाक्टर प्रसाद.

राहत जाकर डाक्टर प्रसाद से मिला. उसे बताया कि मैं जर्नलिस्ट हूं और अपने आगमन का मकसद बताकर कहा कि आप अपने पेशे के शिष्टाचार को कायम रखते हुए ऊषा के बारे में जो कुछ बता सकें, बता दें. इन बातों में से, जिन बातों को आप मना कर देंगे, वह मेरे पास सुरक्षित रहेंगी.

डाक्टर ने कुछ मिनट मामले पर विचार किया और फिर कहने लगा, "मैं आपसे सिर्फ इतना वायदा चाहता हूं कि आप मुझसे जो कुछ भी सुनेंगे, वह अखबारों में नहीं छापेंगे."

राहत ने वायदा किया.

डाक्टर ने कहा, "ऊषा को ऐसी बीमारी है, जिसे सिर्फ संत और साधु ही अच्छा कर सकते हैं और वह ऐसे ही लोगों की तलाश में यहां आयी भी है. उसकी बड़ी बहन साधुओं के चक्कर में हर तरफ घूमी-घूमी फिरती है."

"ऊषा को बीमारी क्या है?"

"बीमारी कुछ भी नहीं. कोई एक दरख्त है जिसकी जड़ उबाल-उबालकर उसे बचपन से रोजाना पिलायी जाती रही है और अब उसकी वह इतनी आदी हो चुकी है कि उसके बगैर एक दिन भी आराम से नहीं बिता सकती... यहां आकर उसने उस जड़ का इस्तेमाल छोड़ दिया है.

"अब उसको शिकायत यह है कि वह बहुत तड़के बेहद जोश में आ जाती है, और फिर ज्यों-ज्यों सूरज चढ़ता है, सुस्त होती जाती है और तीसरे पहर को निश्चलता-सी छा जाती है. जब उसने मेरा इलाज शुरू किया, तो मैंने उसका खून, पेशाब, और सब चीजों की जांच करायी, तो सब नार्मल निकलीं. दिल, जिगर, और सब अंग भी तंदरुस्त हैं और बीमारी की कोई वजह नहीं मालूम हो सकी. मैंने कहा, कि जो तुम पीती रही थीं, वह मुझे दे दो, ताकि उसका रासायनिक विश्लेषण किया जा सके. उसने कहा कि उसके गुरु ने मना किया है. उसे किसी को देना नहीं. फिर वह कहने लगी कि वह बहुत सख्त जहर है, लेकिन मेरे लिए नहीं, क्योंकि मैं उसकी आदी हूं."

"फिर उसने जड़ का इस्तेमाल क्यों छोड़ दिया?"

"यह बात उसने मुझे नहीं बतायी और न अपनी बहन को."

"आपकी नजर में उसे क्या बीमारी है?"

"मेरा तो ख्याल ऐसा है कि बचपन से जो उसे इस बात का यकीन दिला दिया गया कि उस जड़ का पीना जरूरी है और उसे छोड़ देगी तो मर जायेगी, इस यकीन ने वहम की शक्ल अपना ली है और यह बीमारी एक तरह की मनोवैज्ञानिक बीमारी है, जिसने उसके दिल-दिमाग को

मेरा तो खयाल है कि बचपन से उसे इस बात का यकीन दिला दिया गया कि उस जड़ को पीना जरूरी है. उसे छोड़ देगी तो मर जायेगी. इस यकीन ने बीमारी की शक्ल अपना ली है और यह बीमारी एक तरह की मनोवैज्ञानिक बीमारी है.

प्रभावित कर रखा है. इस वजह से उसको दौरे पड़ते हैं. दौरों की शक्ल यह होती है, कि ऊषा सुबह मुंह अंधेरे से गाना और नाचना शुरू कर देती है. उसके नृत्य में इतनी तेजी और शिद्दत होती है कि तंदरुस्त से तंदरुस्त आदमी भी अगर इस शिद्दत से नृत्य करे, तो सिर्फ एक घंटे में थककर चूर हो जाये, लेकिन ऊषा दो-तीन घंटे तक और कभी-कभी चार-चार घंटे तक ऐसे नृत्य को निरंतर जारी रखती है. यहां तक कि थककर चूर हो जाती है और नीम-मदहोशी की हालत में गिर पड़ती है.

"मैंने बहुत सख्ती से उसे नृत्य से मना किया और कहा कि दिन भर जो कमजोरी छायी रहती है, उसमें इस नृत्य का काफी हाथ है. इसलिए उस नृत्य को बिलकुल बंद कर देना चाहिए. लेकिन ऊषा ने मेरे हुकम पर एक दिन भी अमल नहीं किया. आखिर तंग आकर मैंने परसों उसके इलाज से इंकार कर दिया, लेकिन जब उसकी बहन बिमला आकर बहुत रोने-धोने लगी और खुशामद करने लगी कि इलाज जारी रखिये, तब मैंने यह शर्त लगायी कि रोज सुबह को कुछ ऐसी बातें करो या काम करो, कि ऊषा का ध्यान बंटे और वह नृत्य में इतनी ताकत बरबाद न करे, जितनी करती है."

राहत ने दूसरे दिन मुंह अंधेरे जाकर ऊषा का दरवाजा खटखटाया. उसके घर में रोशनी हो रही थी और एक ग्रामोफोन का रिकार्ड बज रहा था. उस पर घुंघरुओं की छमाछम सुनाई दे रही थी.

जब राहत ने कई बार दरवाजा खटखटाया तो बिमला ने आकर खोला. वह राहत को पहचानने की कोशिश करती हुई बोली, "क्या बात है? आप कौन हैं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"डाक्टर प्रसाद ने मुझे भेजा है कि किसी तरह ऊषा का ध्यान बटाओ!"

यह सुनकर बिमला के लहजे में जो खुरदरापन था, वह गायब हो गया.

बिमला ने राहत को अंदर जा कर एक जगह बिठा दिया. जिस कमरे में राहत था, उसके बादँ एक छोटा-सा गलियारा था. उससे निकलकर जो कमरा था, उसमें से रोशनी की एक किरण आ रही थी और ग्रामोफोन पर यह रिकार्ड बज रहा था : पिया बिन नाहीं आवत चैन...

अब्दुलकरीम खां का गाया हुआ रिकार्ड था, जिस में इस फिकरे की सैंकड़ों तरह तकरार की गयी थी और रिकार्ड के दोनों तरफ यही गाना था. उस गाने पर घुंघरू छम-छम कर रहे थे. बिमला के जाने के दो मिनट के बाद राहत अपनी जगह से उठा और दबे पांव कमरे से गुजर कर गलियारा तय करके दूसरे कमरे के दरवाजे पर आ गया और परदे के अंदर झांकने लगा. बिमला ग्रामोफोन के नजदीक बैठी थी, ताकि अगर एक रिकार्ड खत्म हो जाये, तो दूसरा लगा दिया जाये. ऊषा दक्षिण भारतीय किस्म की धोती बांधे हुए थी, जिसमें एक सिरा दोनों रानों के बीच से लेकर जाकर पीछे उडस लिया जाता है. ऊपर एक तंग ब्लाउज था. जूड़ा मणीपुरी अंदाज में बधा हुआ था. बांहों और जूड़े के गिर्द हार लपेटे हुए थी और 'पिया बिन नाहीं आवत चैन' की गति पर इस प्रकार उड़ रही थी कि यह मालूम ही नहीं होता था कि उसके बदन का जरा-सा भी बोझ उसके पांव पर है.

रिकार्ड खत्म हो गया, लेकिन फिजा में जो उसकी गति गूज रही थी, उस पर ऊषा नृत्य करती रही. फिर बिमला ने जरा देर में रिकार्ड का रुख पलट दिया. ऊषा का नृत्य चढ़े तूफान कीं तरह जारी रहा. उसमें एक जगह ऊषा ने जख्मी की कराह की तरह सांस भरी और फिर इस तरह झुकी, जैसे रोती हुई पलकें आंसुओं के कतरे टपकाने को कांपें.

राहत के मुंह से बेअख्तियार आह निकल गयी. आह गहरी भी थी. वह कमरे में बिखर गयी. बिमला ने घबराकर दरवाजे के परदे की तरफ देखा और राहत की सम्मोहित आंखों से उसकी आंखें चार हो गयीं. फिर उसने और ज्यादा घबरा कर ऊषा की ओर देखा कि कहीं उसने भी तो यह आह नहीं सुन ली. आह पहुंची तो जरूर ऊषा तक, लेकिन ऐसा लगा कि वह आह ऊषा के कानों के बजाय उसके हाथों में आ गयी और फौरन नृत्य में ढल गयी. अब तो ऊषा के हाथ और पांव सब आहें भरने लगे. आहें भरते-भरते निढाल हो-होकर इस तरह गिर गयी, जैसे सिर्फ आखिरी सांस बाकी रह गयी हो. उस समय ऊषा के चेहरे पर वही सुकून था जो काफी रो लेने के बाद मुसीबत मारे चेहरे पर आ जाता है या फिर मुद्दतों तक मुसीबतें झेलने वालों के चेहरों पर उस समय आता है, जब वे किसी हमदर्द को पाकर अपनी सारी विपत्ति सुना चुकते हैं.

बिमल ने थर्मस से उंड़ेलकर फलों के रस का एक गिलास ऊषा को दिया. उसने पी लिया और फिर आंखें बंद करके कोच पर पड़ गयी.

सूरज की पहली किरण ने पहाड़ों को पार करके बरामदे से होकर ऊषा के कमरे में अपना जलवा दिखाया. ऊषा ने हसरत भरी आंखें खोल दीं. उसकी आंखों के खुलते ही ग्रामोफोन बोला-तन..तन..तनातन...

बिमला ने ऊषा के निर्देश के अनुसार पहली किरणों के स्वागत के लिए अपनी स्वप्निल आंखें झुकाकर एक साज का रिकार्ड चढ़ा दिया था. यह काम खत्म करके बिमला ने खामोश पड़ी हुई ऊषा के कान के पास कुछ कहा और फिर इशारे से राहत को अंदर बुला लिया.

सूरज सुर्खी लिये उभर आया. उसके दाहिनी तरफ बर्फीली चोटियों की इंद्र-सभा सजी हुई थी. ऊषा ने राहत पर उचटती हुई नजर डाली और फिर उभरते हुए सूरज की तरफ देखती हुई कमरे से बरामदे में चली गयी. उस वक्त ऊषा भी इन पाक-साफ चोटियों की तरह पाकीजा और उभरते सूरज की तरह दहकती हुई नजर आ रही थी. जिस तरह लोहा चुंबक की तरफ खिंचता है, उसी तरह राहत धीरे-धीरे ऊषा के पास चला गया और तकरीबन पांच मिनट तक बिना पलक झपकाये ऊषा की तरफ देखता रहा.

"ऊषा, तुम हूर हो हूर!"

"हूर क्या?"

"अप्सरा!"

"अप्सरा? अप्सरा!... बाबा कहते थे, 'बेटी! तू अप्सरा है.' फिर कहते थे, 'अप्सरा को देवता के सिवा और कोई हाथ नहीं लगा सकता है.' फिर कहते, 'बेटी! तुझे जो इंसान हाथ लगायेगा, फना हो जायेगा.' मैं इस पर खुश होती थी, और अपने को तमाम इंसानों से बरतर (उच्चतर) समझती थी और जब तक जवान नहीं हो गयी, अपने को ऐसा ही समझती रही. जब मूर्ख चेतानंद मेरे होंठों से होंठ मिलाकर दुनिया से चल बसा तो मैं भी अपने को अप्सरा ही समझकर इतराती रही पर अब तो मैं पछताती हूं इस जिंदगी पर."

"क्यों?"

"मेरा तन अब भी अप्सरा का ही तन है, पर मन अब कन्या का बन चुका है, जो काम देवता का खिलौना है, और जिसके होंठ किसी के गर्म होंठों को इस तरह ढूंढते हैं, जैसे लू का मारा पक्षी जल को.. हाय! माया का यही फेर था, जिसने मेरी मति को इस तरह छाव लिया कि मुझे ऐसा लगता है, जैसे मैं दोषी हूं."

"दोषी तुम हो या वह साधु जिसने शाप दिया था?"

"शाप!" ऊषा कड़वी हंसी हसकर करने लगी, "शाप! कैसा शाप? वह तो मेरा झूठ था. मैंने उस झूठ से पुलिस और सारी दुनिया को धोखा दिया था." ऊषा पहले से भी ज़्यादा कड़वी हंसी हंसी, "बाबा यही समझाते रहे, बेटी, तू अप्सरा है और तुझे इस बड़े पद को मरते दम तक निभाना है. तेरा जहां भी कदम डगमगाया, समझ ले कि किसी की जान गयी! और फिर बाबा कहते, 'बेटी, तू नंदा देवी को देखती है. कितनी हसीन है वह, लेकिन क्या उसे कोई आगोश में ले सकता है? नहीं, वह अछूती है. उसका हुस्न आंखों के लिए हुस्न है, लेकिन आगोश के लिए मौत.'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"फिर बाबा कहते, 'बेटी! जिस तरह तेरा तन सारी दुनिया से अलग है, उसी तरह तेरे विचार भी सारी दुनिया से अलग होने चाहिए और उसी तरह तेरा स्वभाव भी. तू तो संगीत है, जिसे सिर्फ कानों से वास्ता होता है. तू तो चित्र है, जिसे सिर्फ आंखों से वास्ता होता है. तू बिजली है, जिसे कोई मुट्ठी में नहीं पकड़ सकता. चांदनी है, जिससे बिस्तर नहीं गर्म किया जा सकता, समझी.'

"मैं इतरा कर कहती, 'सच बाबा? मैं ऐसी हूं. फिर पूछती, मुझे करना क्या होगा?''

'तुझे वह करना होगा, जो बड़ी-बड़ी फौजें भी नहीं कर सकती हैं. तुझे इस महान देश को विदेशियों से मुक्त कराना है. तू तो दीप है, जो खुद जल-जलकर संसार को रोशनी देता है. यह समझ ले, बेटी, कि जब तू जलकर भस्म हो जायेगी, तो आनेवालों के लिए अमर कहानी बन जायेंगी. लाखों मर्द और औरतें तेरे नाम पर फूल चढ़ायेंगे.'

"मैं पूछती, 'बापू! यह काम तो बहुत बड़ा है. मुझसे कैसे होगा?''

" यह तू मुझ पर छोड़ दे! मैं तुझे दिखा दूंगा कि मैंने तेरा जीवन व्यर्थ नहीं लुटाया. अगर तुझसे एक नेमत छीन ली है, तो उसकी जगह तुझे वह दिया है, जो राजाओं और महाराजाओं को उपलब्ध नहीं. यह याद रखना, बेटी, जो नेमत मैंने तुझसे छीनी है, उसे मैं खुद भी त्याग चुका हूं और देख चुका हूं कि मनुष्य त्याग की यह राह भी चल सकता है और लोग जितना समझते हैं, यह राह उतनी क्या, उससे आधी भी कठिन नहीं है.' यह सुनकर मैं खुशी से नाचने लगती, बाबा ने मुझे संगीत और नृत्य सिखाया और उसकी वह कलाएं सिखाते, जिसे अब भारत के विशेषज्ञ भी भूल चुके हैं और जो केवल कई मंदिरों के खंडहरों पर बनी हुई मूर्तियों में पायी जाती हैं.

" फिर बाबा ने मुझे मर्द की विशेषताएं बतायीं. उसे लुभाने की कला सिखायी. पहली नजर से लेकर बिस्तर तक के सभी गुर समझाये. बाबा ने मुझे शायराना भाषा में बातें करना सिखाया. मुझे अंग्रेजी बोलने का अभ्यास कराया...

"बाबा की जिंदगी तो बेहद सादा थी, लेकिन मेरे लिए बड़ी व्यवस्था की जाती थी. सुबह मुझे गधी के दूध से नहलाया जाता था और मेरे बालों में चंदन का तेल लगाया जाता था. फिर खुशबू में सुलगाकर मुझे उसके धुएं में बिठाकर धूनी दी जाती थी. मेरा खाना भी निराला होता था. खुश्क मेवे और ताजे मेवे भी होते थे. दूध भी और कभी-कभी चिड़ियों का मांस भी. इस तरह मैं बचपन की गोद से निकलकर जवान हुई. अचानक मेरी जिंदगी का पहला संगीन हादसा पेश आ गया. वह यह कि बाबा के तंबुओं में एक चट्टान फट पड़ी और बाबा अपने कई भक्तों सहित खत्म हो गये. हम दोनों एक झरने पर स्नान करने गयी थीं. इस लिए बच गयीं.

"बाबा के मरने के कुछ दिनों बाद उनका एक भक्त चेतानंद, जो जिंदा बच रहा था, हम दोनों को यह कहकर बंबई ले आया कि वह जानता है कि बाबा हमसे क्या काम लेना चाहते थे. बंबई लाकर उसने तरह-तरह के लोगों से हमको मिलाया और फिर एक शो का इंतजाम किया. लेकिन मेरा पहला शो देखकर वह पागल हो गया, और अपना धर्म, बचन और गुरु की आज्ञा सब को भूला बैठा. दुष्ट उसी रात मेरे बिस्तर में घुस आया. सुबह लोगों ने आकर बताया कि वह मेरे कमरे के बाहर चौखट के पास मरा पड़ा है. मुझे उसकी मौत का जरा भी अफसोस न हुआ, क्योंकि उसने अपने गुरु की अमानत में खयानत की थी और दिल का पापी निकल गया था. दिल की यह सख्ती तो बाबा ने मुझे दे दी थी."

ये बातें सुनते ही राहत पर कुछ अजीब अवस्था छा गयी, जिस तरह अंधेरी शामों में होता है, कि बिजली के एक बटन के दबते ही सड़कें और दूर-दूर जाने वाली गलियां सब रोशन हो जाती हैं. उसी तरह इस घटना ने राहत के अंदर को रोशन कर दिया. और वह उन में घूम-फिरकर अपनी बंबई की गुमराहियों के कारण तलाश करने में लग गया. वह या तो ऊषा से प्रश्न कर रहा था या अपने उद्देश्य के जायजे में खो गया... कहां गया मेरा जीवन-लक्ष्य? और कैसे पड़ गया मैं काम और मोह के जाल में?

मगर फिर किसी तरह राहत ने अपने को इस अवस्था से निकाला और कहने लगा, "बाबा ने यह नहीं बताया कि उसने जिस बड़े मकसद के लिए आपको तैयार किया था, वह कैसे हासिल करना चाहता था?''

"नहीं, अभी उसने मुझे पूरी तालीम ही कहां दी थी. जब तालीम पूरी हो जाती तब वह बताता.''

"रामकृष्ण को तुम से मोहब्बत हो गयी थी?''

"हां, हो गयी थी. यह तो मुझे पहले ही दिन महसूस हो गया था कि वह ऐसा शख्स है, जो इस पैगाम को, जो मैं नृत्य की भाषा में देती हूं, पूरी तरह महसूस करता है. फिर मैंने उसका आर्टीकल पढ़ा. जब वह मुझसे मिलने आया तो मैं उस से मिलने से इंकार न कर सकी और जब मिली तो उसने मेरे दिल में अपनी जगह बना ली.''

सूरज बुलंद हो गया था. लेकिन उस पर भी बहुत सख्त सर्दी थी. राहत गर्म कपड़ों में लिपटा हुआ था. फिर भी सर्दी महसूस कर रहा था, लेकिन ऊषा रेशमी धोती और ब्लाउज में थी. इस पर भी सर्दी के एहसास से बुलंद लगती थी.

ऊषा ने मुसकरा कर राहत की तरफ देखा और पूछा, "क्या आप यही मालूम करना चाहते हैं कि रामकृष्ण कैसे मरा? और इसी लिए बंबई से यहां तक आये हैं? अगर ऐसी बात थी, तो बनारस जाकर पोस्टमार्टम की रिपोर्ट देख लेते.''

किसी ने जोर-जोर से दरवाजा खटखटाया. बिमला ने घड़ी देखकर कहा, "लगता है, डाक्टर साहब कुछ पहले आ गये!''

यह कह कर बिमला दरवाजे की तरफ गयी. ऊषा राहत से कहने लगी, "राहत जी, जब किसी माला की डोर टूट जाती है, तो मोती भी वही रहते हैं और डोर भी, लेकिन माला का वजूद तो खत्म ही हो जाता है. साथ-साथ मोतियों में भी वह सुंदरता नहीं रहती है और वह अपना पहले वाला फर्ज अंजाम नहीं दे सकते हैं. इसी तरह मेरे अंदर का डोरा भी टूट..."

दरवाजे पर जोर-जोर से बातें करने की आवाजें बिमला की थीं और दूसरी भी किसी औरत ही की थीं.

इतने में एक औरत गुस्से से चिल्लायी और किसी के गिरने की आवाज सुनाई दी. उसके बाद बिमला की चीख. फिर एक औरत गुस्से से बिफरी हुई हाथ में पिस्तौल लिये अंदर चली आयी.

"तुम ही ऊषा हो?''

"हां!''

"तो फिर तुम्हारा आखिरी वक्त आ चुका है.'' यह कहकर अजनबी औरत ने अपना पिस्तौल उठाया और ऊषा के सीने की तरफ ताना लेकिन ऊषा के सुकून में कोई खास परिवर्तन नहीं आया.

राहत, जो बिमला के गिरने की आवाज सुनते ही खड़ा होकर दरवाजे की तरफ बढ़ने लगा था और उस औरत को भागकर आता हुआ देखकर जरा किनारे हट गया था, उसने औरत को पिस्तौल उठाये देखकर गरजकर कहा, "खबरदार!'' आनेवाली राहत को देखकर भौंचक्की–सी हो गयी. शायद उसको इस बात का वहम तक न था कि यहां कोई मर्द भी हो सकता है. राहत ने झपटकर अजनबी औरत के हाथ से पिस्तौल छीन लिया.

अजनबी औरत दुबली-पतली कमजोर-सी थी, लेकिन उसकी आंखों में बला की दृढ़ता थी. जैसे ही उसे अहसास हुआ कि मेरा पिस्तौल गया, वह फूट-फूटकर रोने लगी.

ऊषा ने ममता भरे लहजे में पूछा, "आप कौन हैं?''

"मैं कौन हूं? यह जानना चाहती हो, तो यह देखो!'' औरत ने रोते हुए जवाब दिया और अपनी दोनों नंगी कलाइयां दिखा दीं. ऊषा के चेहरे पर फिर तनाव पैदा हो गया.

"तो आप रामकृष्ण की बीवी हैं?''

"बीवी नहीं, विधवा!''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप मुझे कत्ल करके पति का बदला लेना चाहती थीं?"

"हां, पापी, दुष्ट.. तूने ही मुझे विधवा किया है. अफसोस, मेरे हाथों ने साथ नहीं दिया. और मैं समय पर फायर न कर सकी."

"लेकिन मेरा कसूर?"

"मुझे यकीन है कि मेरा पति अपनी मौत नहीं मरा है, बल्कि तूने उसकी जान ली!"

"मैंने जान ली.. मैंने उसे साफ-साफ बता दिया था कि मैं विष-कन्या हूं!"

"विष-कन्या?"

"विष-कन्या!" राहत और अजनबी औरत की जबान से एकसाथ निकल गया.

"हा,हां, विष-कन्या."

"वह विष-कन्या, जो प्राचीन काल में होती थीं?"

"हां, वही! मैंने रामकृष्ण को यह बात पहली ही मुलाकात में बता दी थी, मैंने उसे बता दिया था कि मेरे बाबा ने, जब मैं दो महीने की थी, तब ही से मेरे दूध में जहर मिलाना शुरू कर दिया था, और उसकी मात्रा बढ़ाते गये थे. जब मैं जवान हो गयी, तो जहर की मात्रा इतनी बढ़ चुकी थी कि काले नाग को जब उसका आधा जहर भी पिलाया जाता था तो वह मर जाता था. दूसरी तरफ मैं जहर की वैसी ही आदी हो चुकी थी, जैसे नशेबाज शराब या अफीम के आदी हो जाते हैं. हालत यह हो गयी थी कि जिस दिन जहर की निश्चित खुराक न मिले, उस दिन मैं बिस्तर से उठ भी नहीं सकती.. यह आदत अब मेरी जिंदगी बन चुकी है.

"लेकिन मैंने राम कृष्ण के मरने के बाद से जहर छोड़ दिया है. मैं जानती हूं कि मैं उसे छोड़कर जी नहीं सकती, लेकिन जीऊं या न जीऊं.." ऊषा ने जर्द रंग के पानी वाली शीशी उठाकर कहा, "अब इस चीज का एक कतरा भी मेरे शरीर में नहीं जायेगा."

"जब तुम जानती थीं कि तुम विष-कन्या हो तो क्यों उसे अपने पास आने दिया?"

"मैंने कब आने दिया. उसे रोका. दर्जनों, बल्कि सैंकड़ों बार रोका, लेकिन जब मैं उससे कहती थी कि मैं विष-कन्या हूं, तो वह कहता कि यह वहम है वहम! जब वह वहम-वहम कहता रहा और किसी तरह न माना तो मैंने कहा कि अच्छा, यह देखो. फिर मैंने उसके सामने अपने को काले नाग से डंसवा कर दिखाया कि देखो, इस का जहर मेरे बदन पर असर नहीं करता है: इतना जहरीला है मेरा बदन."

"फिर उसने क्या किया?"

"जिस दिन मैंने उसे काले नाग से डसवाकर दिखाया था, उसी दिन वह मुझे बड़े-बड़े डाक्टरों के पास ले गया, जिन्होंने मेरा थूक और खून ले लिया. फिर दो दिन के बाद रामकृष्ण मेरे पास बहुत खुश-खुश आया, और कहने लगा कि मेरा खून और थूक नेगेटिव है. जब वह किसी तरह न माना तो मैं उसे जुल देकर बंबई से बिना पता बताये बनारस भागी, लेकिन वह वहां भी पहुंच गया. फिर भी मैं उसे रोकती रही, लेकिन उसके तपती हुई मोहब्बत, पहाड़ों के बीच घिरी हुई झील की तरह प्रेम से लबरेज आंखें, उसके शायराना शब्द और मेरे विष-कन्या होने के विरुद्ध भारी भरकम दलीलें, यह सब चीजें धीरे-धीरे गैर-महसूस तौर पर मुझ पत्थर की अप्सरा को औरत में तब्दील करती चली गयीं, मैं अंदर-अंदर पिघलती गयी... वह जालिम रात! उस रात को मैं कब भूल सकती हूं.. वह मेरी बगल में था और मेरे कानों में अमृत घोल रहा था. उसके आग्रह के आगे मैं अंदर ही अंदर टूटती चली जा रही थी. फिर भी मैं जुबान से बराबर 'न न' करती रही थी. अचानक उसने मेरा हाथ पकड़कर कुछ शे'र पढ़े. फिर तो मेरा वह दृढ संकल्प, जो बर्फ की चट्टान की तरह बेमुरव्वत था, उसके प्रेम की गर्मी से पानी हो गया.. फिर जब मेरे दोनों होंठ मना करने को मिले, तो वह एक दूसरे से जुदा न हो सके, और उन पर रामकृष्ण के गर्म-गर्म होंठ..!"

"चुप रह डायन!"

"मैं डायन? लेकिन मेरा कसूर क्या है? अगर मैं विष-कन्या बनी तो इसमें मेरे इरादे का क्या दखल था? मैंने रामकृष्ण को अपने से किस-किस तरह दूर रखा है और उसने मेरी दृढ़ता पर कैसे-कैसे हमले किये हैं और अगर टूटी हूं, तो किसी हद पर जाकर. इन बातों को मैं कैसे बताऊं, हां, अब मैं सोचती हूं कि बाबा ने मुझे जिस लक्ष्य के लिए विष-कन्या बनाया था, अगर उसकी कोई राह मेरे सामने होती, और वह लक्ष्य मेरे लिए जीवित रहता तो शायद मैं न कर देती, लेकिन जब कोई लक्ष्य भी नहीं था, तो... लेकिन जाने दो इन बातों को! तुम मुझे कत्ल करना चाहती हो, तो लो, कत्ल कर डालो. मैं उसके लिए तुम्हारी आभारी हूंगी."

ऊषा ने झपटकर राहत के हाथों से पिस्तौल छीन लिया. उसकी झपट ऐसी अचानक और फुर्तीली थी और गिरफ्त भी ऐसी थी कि राहत के हाथ से पिस्तौल छूट गया. फिर ऊषा ने राहत की आंखों में आंखें डालकर कुछ इस तरह देखा कि राहत के सामने एक कौंधा-सा लपक गया. ऊषा की इन सभी हरकतों में कुछ ऐसा जोर और आत्मविश्वास और बेहद दृढ़ता थी कि राहत भौंचक्का-सा हो गया. उसको ऐसा लगने लगा, जैसे उस पर हिप्नाटिज़्म कर दिया गया हो. ऊषा ने पिस्तौल विधवा की गोद में डाल दिया और कहा, "हां, कर दे फायर!" यह कहकर ऊषा एक कदम हटकर, पत्थर की तराशी हुई मूर्ति की तरह खड़ी हो गयी. विधवा औरत ने पिस्तौल उठा भी लिया और निशाना लगाने की कोशिश भी की, लेकिन उसका हाथ इतना कांप रहा था कि वह पिस्तौल को सीधा तक न कर सकी. उसने मुरदा आवाज में कहा, "मैं कायर हूं." यह कहकर उसने पिस्तौल फेंक दिया.

"तुम कायर नहीं हो, मगर तुम्हारा हाथ कहता है, कि 'ऊषा निर्दोष

संभोग क्षमता का परीक्षण

ऋषि राज राही

महान कैथरिन, जिसने चौंतीस वर्षों तक रूस पर शासन किया, हव दर्जे की कामुक किस्म की औरत थी. उसने अपने पति पीटर, रूस के सम्राट, को अपने प्रेमी द्वारा मरवा दिया, क्योंकि पीटर उसकी उष्ण देह की तृप्ति में सक्षम नहीं था. उसने खुद रूस का राज सिंहासन हथियाकर अपनी कामतुष्टि के लिए दर्जनों प्रेमियों का जत्था बना लिया. सरकारी तौर पर 'कृपापात्रों' की नियुक्ति के समय वह उनकी पुंसत्व परीक्षा व संभोग क्षमता का परीक्षण कराती थी. वह अपने प्रेमियों को खूब सजा संवार कर रखती थी.

कहते हैं कि उसे पामेकिन नाम का प्रेमी सर्वाधिक पसंद था. शक्लोसूरत से तो वह सड़ियल केश, बदबूदार देहधारी, लीचड़, बदसूरत और काना था, पर उसकी बला की शारीरिक संभोग क्षमता पर कैथरिन दिलोजान से कुरबान थी.

रूस की साम्राज्ञी का यह गंवार प्रेमी उच्चस्थ सेनाध्यक्षों में एक था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है.' और वह सही कहता है. मैं हूं निर्दोष! मैं [illegible] अपनी मर्जी से नहीं बनी हूं. यह किसी और ने बनाया और उस समय बनाया, जब मैं दूध-पीती बच्ची थी.

''मेरी जान ले लो, मगर यह समझकर मेरी जान लो कि मैं निर्दोष हूं. मुझे नफरत न करो. मेरा दोष क्या है? मेरा दोष क्या है?... मेरा दोष क्या है? मुझ से नफरत क्यों?... मुझसे नफरत क्यों...? मुझ से नफरत क्यों?.. मुझ से नफरत?'' ऊषा की आवाज डूबती गयी. आखिरी वाक्य पर वह कोच से ढलककर नीचे आ रही. बिमला ने लपककर उसे संभाला, तो देखा कि वह बेहोश हो चुकी थी.

बिमला ने नौकर को पुकारा और कहा कि फौरन डाक्टर को बुलाओ, लेकिन नौकर इतनी नींद में था कि अपनी जगह से हिल न सका.

राहत लपका डाक्टर को बुलाने के लिए और भागता हुआ चला गया. जब वह डाक्टर को लेकर आया तो डाक्टर ने ऊषा की नब्ज, सांस और दिल की हरकत देखी और फिर आज की सारी घटना मालूम की फिर उसने कहा कि ''ऊषा को इसी तरह सोने दिया जाये और राहत से कहा कि ''अब आप चले जाइये, और दो-तीन दिन तक ऊषा के पास न आइये.''

राहत अपने होटल में आकर सो गया. शाम को वह ऊषा की ओर केवल इस ख्याल से गया कि बाहर से अंदर की गतिविधियों का जितना पता चल सकता है, चलाया जाये, लेकिन घर पहुंचते ही उसने देखा कि बाहर ताला लगा हुआ है. यह देखकर उसे चिंता हुई, क्योंकि ऊषा तो घर से निकलती ही नहीं थी. राहत डाक्टर के पास गया, और पूछा, ''कुछ आपको खबर है ऊषा की?'' डाक्टर ने राहत को एक पत्र दिया और कहा, ''दो घंटे हुए मुझे एक छोकरे ने लाकर बिमला का यह पत्र दिया है. इससे आपको पूरी बात मालूम हो जायेगी.''

राहत ने पत्र पढ़ा, तो लिखा था :

''डियर डाक्टर साहब,

ऊषा चाहती है कि वह अपना आखिरी समय उस जगह बिताये, जहां उसने बचपन और जवानी के दिन काटे हैं अर्थात नंदा देवी के दामन में, जो एक घाटी में स्थित है, उसमें वह रहना चाहती है. इसलिए मैं उसे लेकर वहां जा रही हूं. वह ऐसी जगह है, जिसका न पता बताया जा सकता है और न वहां कोई पहुंच सकता है.

खुदा हाफिज

बिमला.''

पत्र पढ़कर राहत को बहुत दुख हुआ, क्योंकि वह ऊषा को उसके दुखों से निकालने के लिए कुछ करना चाहता था. बंबई ले जाकर बड़े-बड़े डाक्टरों को दिखाता. मनोवैज्ञानिक इलाज की भी कोशिश करता. इसके अलावा ऊषा में उसे अब नाकाबिले-बर्दाश्त कशिश महसूस होने लगी थी. ऊषा से बार-बार मिलने के लिए उसका दिल तड़प रहा था.

अब अलमोड़ा ठहराना फ़िज़ूल था इसलिए वह रवाना होकर उसी दिन काठ गोदाम पहुंच गया. रास्ते भर आंखों के सामने ऊषा का नृत्य होता रहा और कानों में गूंजते रहे उसके यह शब्द–'मेरा दोष क्या है? मेरा दोष क्या है?'

काठ गोदाम पहुंचकर एक बहुत खेदजनक खबर मिली. वह यह कि वेटिंग के बाथ-रूम में जाकर किसी औरत ने पैट्रोल छिड़ककर अपने आप को जलाकर खाक कर लिया. लोग बता रहे थे कि उसके सामान से मालूम हुआ कि उसके पति का नाम रामकृष्ण था.

यह खबर सुनकर बहुत देर तक राहत गुमसुम रहा. फिर उसने उस मौत पर दो आंसू बहाये और देसाई को सारे हालात लिखकर भेज दिये और रेल में बैठ गया. उसके अंदर भावनाओं और सोच-विचार का एक तूफान उमड़ आया, और अस्त-व्यस्त से विचार उभरने लगे.

रामकृष्ण की विधवा यहां आयी कैसे? उसको ऊषा का पता कैसे मिला? ऊषा का पता या तो मुझे मालूम था या देसाई को. अगर पता [illegible] केवल हमदर्दी में! या कोई और बात भी थी? कहीं देसाई ने यह काम मेरे सुपुर्द इसी औरत की फरमाइश पर तो नहीं किया था?

फिर राहत के दिमाग का फोकस बदल गया और उसने सोचा, लो, रामकृष्ण भी गया और उसकी बीवी भी गयी और यह सब बरबादियां ऊषा के कारण हुई हैं. लेकिन यह खयाल आते ही ऊषा की आवाज कानों में आने लगी, 'मेरा दोष क्या है? मेरा दोष क्या... मुझसे नफरत क्यों? मुझसे नफरत क्यों?'

वाकई उसका दोष क्या?... क्या वह अपनी मर्जी से विष-कन्या बनी थी? और जब विष-कन्या बन चुकी थी तो जहां तक उसके बस में था, उसने अपने को प्रेम की भावनाओं से दूर रखा... तो क्या ऊषा बेकसूर नहीं है? अगर वह कसूरवार नहीं है, तो फिर कोई भी कातिल कसूरवार नहीं है. सब अपने-अपने माहौल की पैदावार हैं. माहौल? माहौल क्या है?... क्या वही व्यक्तियों को बनाता है, और उनके खयालों को भी वही ढालता है. मैं इन प्रश्नों पर सोच रहा हूं और जवाब तलाश रहा हूं. हो सकता है, कि मेरा दिल कोई जवाब दे दे, लेकिन वह जवाब क्या सही जवाब होगा?... क्या वह मेरे माहौल की मेरे मनोविज्ञान पर प्रतिक्रिया तो न होगी?

क्या सारा खेल माहौल का है? और माहौल? खुद माहौल क्या चीज है?.. राहत के दिल ने जोर से धड़ककर कहा, ''जो कुछ भी असलियत हो, मैं यह मानने को तैयार नहीं हूं कि मेरा सोचना और फैसला करना, यह सब माहौल की पैदावार है और मैं उसका गुलाम. क्षितिज पर से स्याही गायब हो रही थी और दूध जैसी सफेदी चौथाई आसमान तक फैल चुकी थी. बहुत सवेरे उठने वाले परिंदों ने सुबह को मोहब्बत के साथ पुकारना शुरू कर दिया. राहत थोड़ी देर उस शांत माहौल में गुम हो गया.

अचानक राहत को अपने दिल के एक कोने में एक ऐसी चीज नजर आयी कि उसके दिमाग में सनसनी दौड़ गयी. वह लेटे से बैठ गया. यह क्या? क्या यह एहसास माकूल और मुनासिब है? राहत पर ऐसा जबरदस्त जजबाती दबाव पड़ा कि उसको सांस तक लेनी मुश्किल हो गयी. आखिर बहुत देर बाद उसने फैसला किया कि मेरा अहसास सही है, और जो भी भला आदमी मेरी जगह होता, वह भी यही महसूस करता. वह एहसास, जिसने राहत को बेचैन कर दिया, वह यह था कि ऊषा की वजह से तीन जानें जा चुकी हैं, जिनमें से रामकृष्ण, और उसकी विधवा से मुझे हार्दिक सहानुभूति है, लेकिन इस पर मेरे दिल में ऊषा से जरा भी नफरत नहीं.

जब सूरज उभर रहा था, उस समय राहत निश्चय कर रहा था कि जुर्म के बारे में फैसला करने की एक दृष्टि वह होती है, जो अदालत और पुलिस में चलती है. जो हर व्यक्ति को उसके कर्मों का 90-95 प्रतिशत जिम्मेदार समझती है, लेकिन एक दृष्टि उस से बुलंद और व्यापक भी है. यह दृष्टि है, जो मुजरिम के जुर्म में समाज का कसूर भी देखती है. यह दृष्टि मुजरिम को सजा तो दे देती है, लेकिन समझती है कि उसका दिल ऐसा स्याह नहीं है, जैसे उसके कर्म बताते हैं. वहां एक कोना उज्ज्वल भी है, जिनमें नेक इरादे और इच्छाएं थीं, मगर उनको उभरने का अवसर नहीं मिला. यहां से राहत का दिमाग मुड़ गया और उसको अपनी बंबई की जिंदगी या स्वच्छंदता याद आ गयी, और फिर उसके दिल में वह सब कुछ उभर आया, जो ऊषा ने परमलक्ष्य की लग्न और काम-क्रोध और मोह के सिलसिले में बताया था. वह यह भी सोचने लगा कि ऊषा और रामकृष्ण की बीवी इन दोनों का अपना-अपना लक्ष्य था, लेकिन हुआ क्या? विधवा गोली न चला सकी और ऊषा को मंजिल का रास्ता न मिला. दोनों न आगे बढ़ सकीं और न पीछे हट सकीं. इसी दुविधा से घबराकर एक ने आत्महत्या कर ली और एक कर रही है. ऐसा नजर आता है, जैसे जान पर खेल जाना आसान है, लेकिन सही लक्ष्य और सही साधनों को पा लेना मुश्किल, बल्कि बहुत मुश्किल है. □

अनुवाद : सुरजीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी हाल में श्री एस.डी. त्रिवेदी कृत 'प्राचीन भारत में गुप्तचर्या' नाम की एक पुस्तक प्रकाशित हुई है जिसे पढ़कर पता चलता है कि प्राचीन भारत में गुप्तचर प्रशासन के महत्वपूर्ण और अनिवार्य अंग थे, और राजा अपनी राजनीति का संचालन उनके बिना करने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे. इन गुप्तचरों में महिलाएं भी होती थीं.

कौटिल्य, जिनकी गुप्तचर्या व्यवस्था अत्यंत व्यापक और संपूर्ण थी, मानते थे कि वही राजा अपने शत्रुओं को मात कर सकता है जो उन्हें परास्त करने के लिए साम, दाम, दंड, भेद इन सब उपायों का प्रयोग करने के अतिरिक्त, यहां तक कि विष-कन्याओं के प्रयोग से भी न हिचकिचाये. प्रस्तुत है-प्राचीन भारत में विषकन्याओं समेत महिला-गुप्तचरों के प्रयोग का संक्षिप्त विवरण.

हंस

प्राचीन भारत में विष- कन्याएं

अपनी खोजपूर्ण पुस्तक 'प्राचीन भारत में गुप्तचर्या' में श्री एस.डी. त्रिवेदी ने प्रमाणों से यह सिद्ध किया है कि प्राचीन भारत में गुप्तचर्या दक्षता और निपुणता में पराकाष्ठा को पहुंची थी. और यह भी कि गुप्तचर्या भारतीयों के रक्त में है, उनकी गंध में है. वस्तुतः इस पुस्तक के माध्यम से प्राचीन भारतीय गुप्तचर्या की खुफिया दुनिया पर एक नजर डालते ही कम से कम यह पता तो चल ही जाता है कि इस विद्या और कला में प्राचीन भारतीय आज के रूस व अमरीका जैसे विकसित देशों में, जो अपनी के.जी.बी. और सी.आई.ए. गुप्तचर्या-व्यवस्था पर गर्व करते रहते हैं, कितना आगे था.

ये तथा अन्य विकसित देश— इंग्लैंड, फ्रांस आदि अपनी-अपनी गुप्तचर्याओं में शायद ही कोई ऐसा नया तरीका अपना रहे हों जिसका आविष्कार और प्रयोग प्राचीन भारत में न हो चुका था.

विषकन्याओं के रूप में जानी जाने वाली कुमारी गुप्तचर, जो अपने रूप सौंदर्य के बल पर विरोधी को आकर्षित कर अंततः उनका काम तमाम कर देती थीं, का उपयोग कौटिल्य बड़ी कुशलता के साथ करते थे. लेकिन, उनसे पूर्व भी रूपवती स्त्रियों का उपयोग ऋषियों-मुनियों को तप से डिगाने, तथा राजाओं से उनकी सत्ता हथियाने के उद्देश्य से किया जाता रहा है, इसके अनेक उदाहरण हमारे प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध हैं. मेनका, उर्वशी आदि अप्सराओं का प्रयोग देवताओं ने इसी उद्देश्य से किया था.

विषकन्याओं का सीधा संबंध गणिकावृत्ति से है. कारण, उनका चुनाव गणिकाओं के विभिन्न वर्गों में से किया जाता था. और गणिकावृत्ति की परंपरा हमारे देश में अति प्राचीन है. वैसे सिंधु घाटी सभ्यता के काल में भी गणिकाएं होती थीं, इसके अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं. मोहनजोदड़ो में नृत्य करती हुई जिस नवयुवती की कांस्य-मूर्ति उत्खनन में मिली थी, उसके बारे में पुरातत्ववेत्ताओं का विश्वास है कि वह एक 'पवित्र गणिका,' (देवदासी) की मूर्ति है. वेदों में 'पुंश्चली' शब्द का प्रयोग बार-बार हुआ है, जो वेश्या का पर्याय है. वैदिक काल में 'पुंश्चली' को भी 'पवित्र गणिका' (देवदासी) माना जाता था. अथर्ववेद में दासियों का भी उल्लेख है, जो वास्तव में गणिकाएं ही थीं. किंतु उस काल में गणिकाओं को समाज में सम्मानीय स्थान प्राप्त था, और आज की वेश्याओं की भांति उन्हें द्वेष दृष्टि से नहीं देखा जाता था. धार्मिक वृत्ति के अनेक विद्वान दासीपुत्रों को ऋषि-तुल्य माना जाता था.

वैदिक काल में गणिकाओं का मुख्य कार्य राजाओं तथा धनी व्यक्तियों को यौन-सुख प्रदान करना था. किंतु ऐसे अनेक उदाहरण भी मिलते हैं, जिनसे पता चलता है कि कभी-कभी राजा उनका उपयोग विरोधी राजाओं को लुभाकर, उन्हें निर्बल बनाने में करते थे और धनाढ्य लोग उन्हें अपने विरोधी व्यापारियों के पास भेजते थे, ताकि वे उनकी संपत्ति के भेद प्राप्त कर सकें, या छल से उनकी हत्या कर सकें.

मत्स्य-पुराण में एक कथा आती है, जिसे गणिका-वृत्ति की जन्म कथा माना जाता है. इस कथा के अनुसार; एक बार ब्रह्मा ने शिव से पूछा कि क्या उन्हें गणिकाओं के आचार-व्यवहार से संबंधित नियमों का पता है. शिव ने उन्हें भगवान कृष्ण की सोलह हजार रानियों की एक कथा सुनायी, जिसके अनुसार, कृष्ण ने एक बार देखा कि मद्यपान के पश्चात शांब नामक एक यात्री को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास कर रही है. कृष्ण ने उन्हें शाप दिया कि लुटेरे उनके साथ बलात्कार करेंगे, और उसके बाद उन्हें दासियों का-सा जीवन व्यतीत करना पड़ेगा. अंत में, सालभ्य नामक ऋषि उन्हें इस दासता से मुक्ति दिलायेंगे. जब दासी और वेश्या जैसा जीवन बिताने को मजबूर इन भूतपूर्व रानियों की भेंट ऋषि सालभ्य से हुई तो उन्होंने उनसे अन्य प्रश्नों के साथ यह प्रश्न भी पूछा कि उन जैसी दासी वेश्याओं को कैसा आचरण करना चाहिए. ऋषि ने उनसे कहा, ''शुभ दिवसों पर ब्राह्मणों को अन्न, स्वर्ण तथा गायों का दान करती रहो. हर रविवार को सोलह शृंगार करके, गुप्तांगों सहित अपने सब अंगों का स्पर्श करते हुए, कामदेव की पूजा करो. यह क्रम तेरह महीने तक चलना चाहिए. अंतिम महीने में, ब्राहमणों को बुलाकर, उनकी पूजा करते हुए कहो, 'हे विष्णु, मुझे काम और केशव में कोई अंतर नहीं दिखायी पड़ता, कारण आप भी कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमला का साथ नहीं छोड़ते. पूजा के बाद, कामदेव की सोने की प्रतिमा ब्राह्मणों को भेंट करो.''इस पूजा के बाद किसी भी रविवार को कोई भी ब्राह्मण आकर उस दीक्षित गणिका का उपभोग कर सकता था. प्रायः ये ब्राह्मण अपनी प्रिय गणिका का उपयोग अपने विरोधियों पर जासूसी करने के लिए भी करते थे.

गुप्त काल में रचित 'बृहत्कथा श्लोक संग्रह' नामक एक पुस्तक में गणिकाओं की उत्पत्ति के संबंध में यह कथा कही गयी है— सम्राट भरत ने एक बार सागर की सब पुत्रियों का अपहरण कर उनके साथ विवाह कर लिया. लेकिन, बाद में उन्होंने उन सबका परित्याग कर दिया और एक पत्नीव्रत का पालन करने लगे फिर उन्होंने उन परित्यक्त स्त्रियों को आठ गणों में विभाजित कर दिया (जिसके कारण वे गणिकाएं कहलायीं) सर्वोच्च गणवाली स्त्रियों को 'गणिकाओं' की उपाधि मिली और निम्नतम गणवाली स्त्रियों को 'कुंभदासी' की.

महाभारत पढ़ने से ज्ञात होता है कि दुर्योधन की सेना में भांति-भांति के शिल्पियों के साथ गणिकाएं भी पीछे-पीछे चलती थीं, जो रात्रि में अपने पास के सैनिकों का मनोरंजन करने के साथ-साथ विपक्षी शिविर में जाकर वहां के गुप्त भेदों का पता भी लगाती थीं. तब से, गुप्तचर्या सुंदर और समझदार गणिकाओं का एक गणिका-धर्म ही बन गया. गुप्त काल और मौर्य-काल में जिन्हें भारतीय इतिहास का स्वर्ण-काल माना जाता है, गणिकाएं युद्धों में अपने पक्ष की सेनाओं के साथ रहती थीं, और वही दोनों भूमिकाएं, गणिकाओं की और गुप्तचरों की, निभाती थीं, जो उन्होंने महाभारत-काल में निभायी थी.

गुप्तचरों और गुप्तचर्या के जो वर्णन हमें अपने प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से लेकर, संहिताओं, रामायण और महाभारत आदि ग्रंथों में भी मिलते हैं, उनमें महिला गुप्तचरों की भूमिका का भी उल्लेख आता है, जिससे इस तथ्य की पुष्टि होती है कि गुप्तचर्या के हमारे प्राचीन इतिहास में उन्होंने आरंभ से ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है.

साधारणतः कौटिल्य को 'भारतीय गुप्तचर्या का पिता' माना जाता है. किंतु, उन्होंने भारतीय गुप्तचर्या के सिद्धांतों का निर्धारण ही नहीं किया था, हजारों वर्षों से भारत में प्रचलित गुप्तचर्या के सिद्धांतों तथा उनकी विधियों और परंपराओं आदि का संकलन कर उन्हें एकसूत्रता और क्रमबद्धता भी प्रदान की थी. उन्होंने गुप्तचरों द्वारा गुप्त सूचनाएं जमा करने की पद्धतियों को संहिताबद्ध कर, अपनी विख्यात कृति 'अर्थशास्त्र' में प्रस्तुत किया. गुप्तचरों का उपयोग सुचारू शासन-व्यवस्था के लिए कैसे किया जाये, उसका विशद-विस्तृत वर्णन 'अर्थशास्त्र' में बड़ी स्पष्टता और संपूर्णता के साथ किया गया है.

कुछ इतिहासकारों की मान्यता है कि 'विष-कन्या' रूपी महिला-गुप्तचरों की कल्पना सर्वप्रथम कौटिल्य के मन में ही आयी थी. वे रूपवती, कामिनी और आकर्षक युवतियों को राज्य की सेना में लेकर उन्हें विरोधी राजाओं, सेनापतियों आदि के मन मोहकर उनसे उनकी सेना के गुप्त भेद प्राप्त करने की कला में पारंगत कर विशेष प्रशिक्षण प्रदान करते थे. उनके शरीर में विख्यात चिकित्सकों द्वारा धीरे-धीरे अत्यल्प मात्रा में, ताकि यह स्वयं उन्हें कोई हानि न पहुंचा सके, विष पहुंचाया जाता था जिसके प्रभाव से उनके साथ संभोग करने वाले व्यक्ति की तत्काल मृत्यु हो जाती थी. ऐसी गुप्तचर-युवतियों को उन्होंने 'विष-कन्या' का नाम दिया था. बाद में, यह नाम महिला मात्र का पर्याय बन गया.

'अर्थशास्त्र' के अनुसार मौर्य-काल मे 'पुंश्चली' नाम से जानी जाने वाली वेश्याओं से अनिवार्य रूप से विपक्ष की जासूसी करने को कहा जाता था. इसका एक कारण संभवतः यह रहा होगा कि जहां उच्च वर्ग की गणिकाओं को विपक्षी राजमहलों में प्रवेश पाने में कठिनाई होती थी, वहां 'पुंश्चलियों' (दासी वर्ग की वेश्याओं) के लिए यह कार्य अपेक्षाकृत आसान

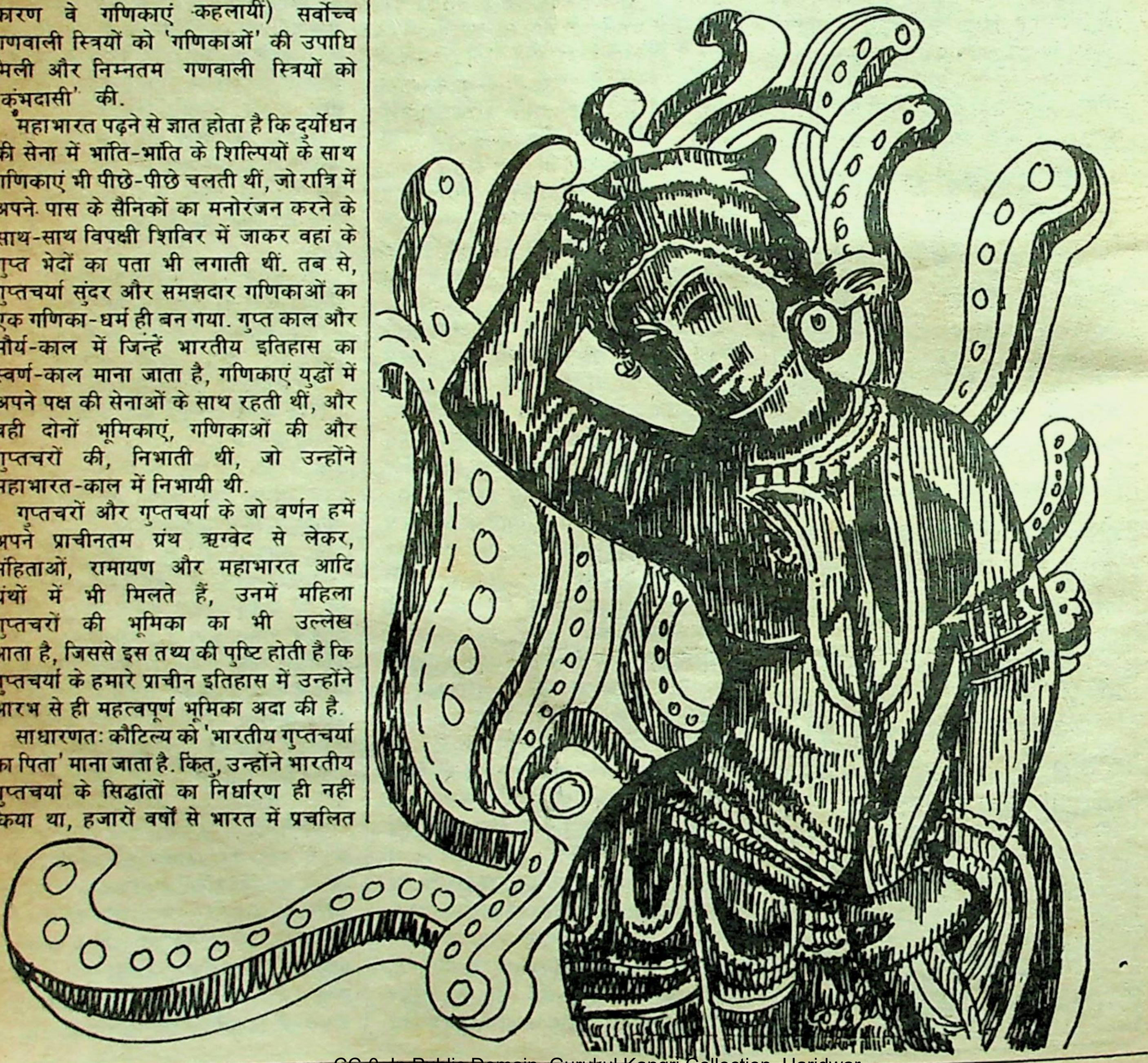

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था. कौटिल्य गणिका-गुप्तचरों का प्रयोग राजशुल्क देने से बचनेवाले या कम मात्रा में शुल्क देनेवाले धनाढ्य व्यापारियों तथा रिश्वत लेने वाले सरकारी अधिकारियों की सही संपत्ति का पता लगाने के लिए भी करते थे. वही काम, जो आजकल हमारे देश के राजस्व विभाग का गुप्तचर किया करता है.

कौटिल्य के बाद, एक लंबे अर्से तक हमारे देश के राजा, कौटिल्यकृत 'अर्थशास्त्र' की गुप्तचर्या के लिए अंतिम सिद्धांतों की परिभाषा करने वाली अंतिम कृति मानकर, उसका निरंतर अध्ययन करते रहे और उसके बताये हुए गुप्तचर्या के रास्तों पर चलते रहे.

यही कारण है कि हमें शूद्रक, कालिदास, भास, माघ, भारवि, दंडी तथा बाण आदि विभिन्न कालों और राज्यों में जन्में साहित्यकारों व नाटककारों की रचनाओं में गुप्तचर्या की विभिन्न विधाओं के बारे में पढ़ने को मिलता है. विशेष रूप से,उनके नाटकों में उसका विशद वर्णन पढ़कर, अनुमान लगाया जा सकता है कि किस प्रकार गुप्तचर्या भारतीय राजनीति का एक अविच्छिन्न अंग बन गयी थी.

संस्कृत के अमरग्रंथ 'अमर कोश' में गुप्तचरों के अनेक पर्याय नाम दिये हैं. अधिकांश मामलों में ये पर्याय नाम गुप्तचर-विशेष के कार्य को इंगित करते हैं. ये पर्याय नाम पुरुष और महिला, दोनों लिंगों के गुप्तचरों पर समान रूप से लागू होते हैं.

कनिष्क तथा याज्ञयवल्क्य की कृतियों में भी प्राचीन भारत के गुप्तचरों और उनकी गुप्तचर्या का विस्तृत वर्णन है. इन सब कृतियों में गुप्तचर को ज्यादातर 'चर' कहा गया है. विशेष जासूसी के लिए भेजा जाने वाला 'चर' प्रहित बन जाता था. छद्मवेश में जासूसी करने वाले जासूस को 'अपसर्प' के नाम से पुकारा जाता था. कुछ ग्रंथों में ऐसे जासूसों को 'गंध पुरुष' भी कहा गया है. विश्वसनीय गुप्तचर को राजा 'आप्त' कहकर पुकारते थे और उसके गुप्तचार को 'प्रत्यापिता.'

कौटिल्य, जिन्होंने प्रधानमंत्री के रूप में अपने राज्य में गुप्तचरों पुरुष व महिला दोनों का जाल-सा बिछा रखा था, उनकी कार्यक्षमता के अनुसार 'पथिक', 'अपसर्प', 'उत्पथिक', 'उभयवेतन,' 'उपनिषद' आदि उपाधियां प्रदान करते रहते थे.

उन्होंने गुप्तचर्या की विद्या को 'संचार' और 'समस्त' इन दो विभागों में विभाजित किया था. 'समस्त' गुप्तचर्या-व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करनेवाले पुरुष और महिला गुप्तचर अपना कार्य महलों और नगरों में रहकर करते थे. जबकि 'संचार' गुप्तचर्या-व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करनेवाले पुरुष और महिला गुप्तचर अपना कार्य बाहर रहकर करते थे.

'समस्त' गुप्तचर्या व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करनेवाले पुरुष और महिला गुप्तचरों को कौटिल्य ने पांच श्रेणियों में बांटा था. (1)- नकली (कापालिक) छात्रछात्राएं, जो असली छात्र-छात्राओं के बीच रहकर उनकी गतिविधियों के समाचार शासन को देते रहते थे. (2)- भिखारी के रूप में जासूसी करनेवाला गुप्तचर—(उपास्थित) (3)- निर्धन कृषक के रूप में जासूसी करने वाला गुप्तचर-गृहपथिक. (4)- व्यापार की आड़ में जासूसी करनेवाला गुप्तचर—'वैदेहक'. (5)- साधु के रूप में लोगों के बीच जासूसी करने वाला जासूस-'तापस'.

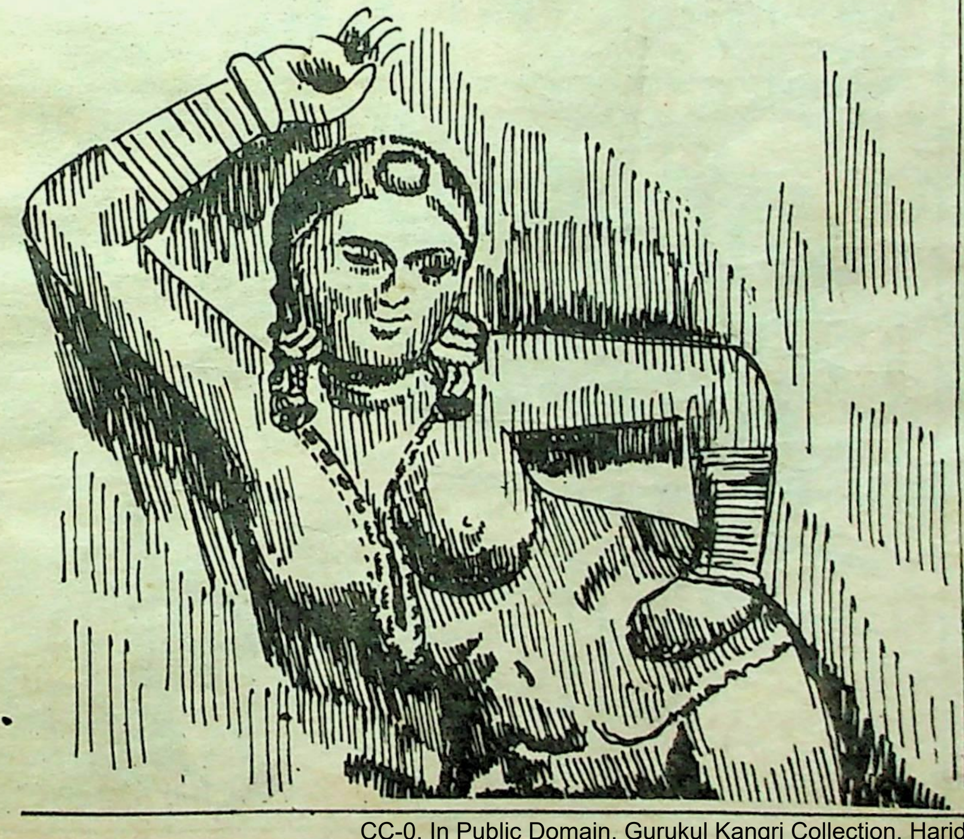

'संचार' गुप्तचर्या-व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करनेवाले पुरुष और महिला गुप्तचरों को कौटिल्य ने इन वर्गों में विभाजित किया था : (1)-सत्तरिण : जादू या वाक-पटुता के बल पर अजनबियों के मन जीतकर, उनके भेद जान लेनेवाला गुप्तचर. (2)- तीक्ष्ण : वह गुप्तचर, जो एकांत में अपने विरोधी को समाप्त कर दे. (3)- रसदा : अपने विरोधियों को विषादि देकर समाप्त करने वाला गुप्तचर.(4)- भिक्षुकी : ब्राहमण विधवा के रूप में महलों में रहनेवाली तथा प्रतिष्ठित कुल की महिलाओं के भेद जानने में निपुण महिला गुप्तचर.

जहां तक महिला गुप्तचरों का प्रश्न था, वे वेश्याओं; संपेरिनों, गणिकाओं, अभिनेत्रियों, धर्मप्रचारिकाओं आदि रूपों में जासूसी करती थीं. शायद ही ऐसा कोई पेशा रहा हो, जिसे महिला-गुप्तचरों ने आड़ के रूप में न अपनाया हो.

गुप्तचरी का प्रशिक्षण करनेवाली महिलाओं को जल्दी से वेश और शक्ल बदलने, गुप्त संकेत देने और प्राप्त करने, अफवाहें फैलाकर लोगों से असलियत का पता लगाने, डरा-धमका या फुसलाकर मामूली लोगों से अपेक्षित जानकारी प्राप्त करने आदि की व्यावहारिक शिक्षा दी जाती थी.

कौटिल्य अपने गुप्तचरों को पूरी तरह अपने नियंत्रण में रखते थे, और आवश्यकता पड़ने पर गुप्तचरों की गतिविधियों पर निगाह रखने के लिए अन्य गुप्तचरों की नियुक्ति करने में भी नहीं हिचकते थे. ऐसे गुप्तचरों को वे 'उभयवेतन' गुप्तचर कहते थे.

अपने गुप्तचरों को कौटिल्य के कड़े आदेश थे कि वे सारी सूचनाएं सीधे उन तक ही पहुंचाएं. 'मुद्राराक्षस' में एक गुप्तचर यही करता है. 'किरातार्जुनीयम्' में युधिष्ठिर के गुप्तचर अपने संदेश सीधे उन तक पहुंचाते थे. 'उत्तर रामचरित' में भी दिखाया गया है कि गुप्तचर अपने संदेश सीधे राजा को देते हैं. मध्यस्थ द्वारा सूचनाएं भेजने में उनके शत्रु तक पहुंचने, ठीक समय पर न पहुंचने या सही रूप में न पहुंचने के खतरे थे. महाभारत के 'शांतिपर्व' में भीष्म ने राजा युधिष्ठिर को गुप्तचर्या के बारे में अत्यंत महत्वपूर्ण जानकारियां प्रदान की हैं. उन्होंने भी महिला गुप्तचरों से काम लेने की आवश्यकता पर बल दिया है. उन्होंने कहा है, ''बुद्धिमान राजा अपने गुप्तचरों की सहायता से गिद्ध जैसी दूरदृष्टि रखे, भेड़िये की भांति दुबका रहे, कुत्ते की भांति सजग रहे, सिंह जैसा पराक्रम दिखाये, कौए की भांति चौकन्ना रहे और सांप की तरह बेधड़क शत्रु के दुर्ग में घुस जाये.'' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : 22 अगस्त, 1924
प्रमुख कृतियां : कबिरा खड़ा बाजार में, विकलांग श्रद्धा का दौर सदाचार का ताबीज, परसाई रचनावली, रानी नागफनी की कहानी
संप्रति : स्वतंत्र लेखन.
संपर्क : 1527 नेपियर टाउन, जबलपुर

हरिशंकर परसाई

सर्वे और सुंदरी

साहब ने कहा, "नक्शे? मैं तो सोचता था आप मेरी जान मांगेंगी. मैं जान निकालने के लिए तैयार बैठा था, नक्शा तो मामूली चीज है. जितनें चाहें ले लीजिए. आप चाहें तो मैं आपको पूरा देश दे सकता हूं."

जब से खबर पड़ी है कि सर्वे आफ इंडिया के किसी दफ्तर में दो पाकिस्तानी सुंदरियां एक अफसर के साथ रात-भर रहीं और सुबह नक्शे लेकर फरार हो गयीं, तब से मन डांवाडोल है. सर्वे का एक दफ्तर हमारे घर के पास ही है. मैं रोज उसके सामने से निकलता हूं. मैंने आज तक यह नहीं सोचा था कि इस भद्दे, अभागे दफ्तर में इतनी कोमल संभावनाएं छिपी हैं कि इसमें इतने दूर पाकिस्तान से आकर सुंदरी रात बिताती है. दिन में यह दफ्तर रहता है और रात को पाकिस्तानी सुंदरी के लिए रेस्ट हाउस हो जाता है. यह दफ्तर बड़ा प्यारा लगने लगा है.

एक साहब तो इतने दीवाने हो गये कि मुझसे कहते हैं—मुझे सर्वे आफ इंडिया में नौकरी दिला दो. सारी जिंदगी मास्टरी में बरबाद कर दी. अगर शुरू में सर्वे आफ इंडिया में भरती हो जाता तो आज मेरे साथ भी इस दफ्तर में पाकिस्तानी सुंदरी रात बिताती.

ये साहब घर से बढ़िया कपड़े पहनकर जाते हैं और घंटों सर्वे के दफ्तर के पास खड़े होकर उसे ललचायी नज़र से देखते हैं. फिर उसके फाटक को चूमकर घर आ जाते हैं. रात को नींद नहीं आती. घरवाले परेशान हैं कि ये रात को 'सर्वे-सर्वे' क्यों चिल्लाते हैं. मैंने उनके परिवारवालों से कह दिया है—इनकी भक्ति जाग उठी है. ये 'सर्वेश्वर' का लघु रूप 'सर्वे' कहकर भगवान का भजन करते हैं.

उस दफ्तर की घटना की जांच केंद्रीय ब्यूरो कर रहा है. उसका ब्यौरा जब आयेगा, तब आयेगा. मैंने उस रात की घटना की कल्पना कर ली है—

साहब क्वार्टर में बैठे थे कि चपरासी ने आकर कहा, "साहब, दो औरतें आयी हैं."

साहब ने पूछा, "औरतें तो बहुत होती हैं. ये कैसी हैं?"

चपरासी—"सूबसूरत हैं साब."

साहब ने उसे डांटा—"तो तूने उन्हें औरत क्यों कहा?"

साहब फौरन बाहर आ गये. देखकर गद्गद हो गये. पूछा, "कहां से आयी हैं?"

वे बोलीं, "पाकिस्तान से."

साहब ने कहा, "अच्छा, पाकिस्तान से इतने अच्छे हमारे संबंध हो गये कि वह टैंकों के बदले सुंदरी इधर भेजता है. आगे होनेवाले चुनाव के कारण पाकिस्तान ने हमसे रिश्ते सुधार लिये होंगे."

एक सुंदरी बोली, "हां साहब, वहां हुक्म हो गया है कि जितनी खूबसूरत औरतें चाहें, भारत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चली जायें.''

साहब ने कहा, ''सुंदरियो, यह तो बताओ कि इस इलाके में इतने साहब हैं, पर तुमने अपनी मेहरबानी के लिए मुझे ही क्यों चुना?''

सुंदरी—''इसलिए कि हमने आपकी बड़ी तारीफ सुनी है. सुना है, आप बड़े मेहमाननबाज हैं.''

साहब खुश हुए. बोले, ''तो फिर भीतर तशरीफ लाइए.''

सुंदरियों ने कहा, ''नहीं, हमें हिदायत है कि हम घर में नहीं, दफ्तर में ही रहें. हमें एक महीना भारत घूमते हो गया. कभी हम सेल्स टैक्स के दफ्तर में सो जाती हैं और कभी सिंचाई विभाग में. आज तो हम सर्वे के दफ्तर में ही सोयेंगी.''

साहब ने कहा, ''जैसी आपकी मर्जी. दफ्तर आपका है. जब तक जी चाहे रहिए.''

साहब उन्हें लेकर दफ्तर पहुंचे. वहां सुंदरियों ने कागजों के पुलिंदे देखे. पूछा, ''साहब, ये क्या है?''

साहब ने कहा, ''इस इलाके के नक्शे हैं. लड़ाई के वक्त काम आते हैं.''

सुंदरियों ने नक्शे उठा लिये. कहा, ''साहब, ये नक्शे हम ले लें?''

साहब ने कहा, ''नक्शे? मैं तो सोचता था, आप मेरी जान मांगेंगी. मैं जान निकालकर देने के लिए तैयार बैठा था. नक्शा तो मामूली चीज है. जितने चाहें, ले लीजिए. आप चाहें तो आपको मैं पूरा देश दे सकता हूं. देश ही उठा ले जाइए.''

सुंदरी ने कहा, ''मगर हिंद-पाक लड़ाई के वक्त ये नक्शे पाकिस्तान के काम आये तो?''

साहब ने कहा, ''वह लड़ाई होगी ही नहीं. जो पाकिस्तान हमारे पास हूरें भेजता है, वह लड़ाई भला क्यों करेगा? और नक्शों का क्या! दूसरे बनवा लेंगे.''

सुंदरियां नक्शे लेकर चलने लगीं तो साहब ने कहा, ''आधी रात को अब कहां जायेंगी. जमाना खराब लगा है. सुबह चली जाइयेगा.''

वे रुक गयीं.

थोड़ी देर बाद एक बोली, ''नहीं, नहीं, यह क्या करते हैं?''

साहब ने कहा, ''सर्वे का आदमी हूं न. सर्वे करना मेरी आदत बन गयी है. जरा तुम्हारे जिस्म का सर्वे कर रहा हूं. नक्शा बनवाऊंगा.''

रात गुजारकर सबेरे सुंदरियां नक्शे लेकर चलीं. साहब ने कहा, ''आज और रह जातीं तो कुछ नक्शे और दे देता.''

उन्होंने कहा, ''फिलहाल इतने ही काफी हैं. ये हम दे आयें. दुबारा फिर आ जायेंगी.''

साहब ने कहा, ''कुछ नये नक्शे बन रहे हैं. मैं खबर दूंगा तो लेने तो आ जाओगी न.''

सुंदरियों ने आने का वादा किया और चंपत हो गयीं.

कुल इतनी-सी बात है. मगर संसद में शोर कितना हुआ. इतनी दूर से सुंदर स्त्री बड़ी आशा लगाकर आये और हमारा अफ्सर क्या इतना हृदयहीन हो जाये कि दो-चार नक्शे भी न दे?

सुना है, केंद्रीय ब्यूरो मामले की जांच कर रहा है. हो सकता है कि ब्यूरो की जांच का नतीजा यह निकले कि यह सब झूठ है. कोई नक्शे दफ्तर से नहीं गये. फिर भी मेरा ऊपर दिया ब्यौरा जहां का तहां रहेगा—यानी अगर कभी आगे भी सर्वे के नक्शे पाकिस्तान जायेंगे तो इसी तरह जायेंगे.

इस मामले में एक ही बात मुझे अखर गयी और मैं बलराज मधोक को मुंह दिखाने लायक नहीं रहा. वह अफसर हिंदू है. बलराज मधोक का कहना है, ''हर हिंदू देशभक्त है और अहिंदू गद्दार.'' अब नारा यों बदलना पड़ेगा, ''हर हिंदू देशभक्त है—सुंदरी के आने तक.'' □

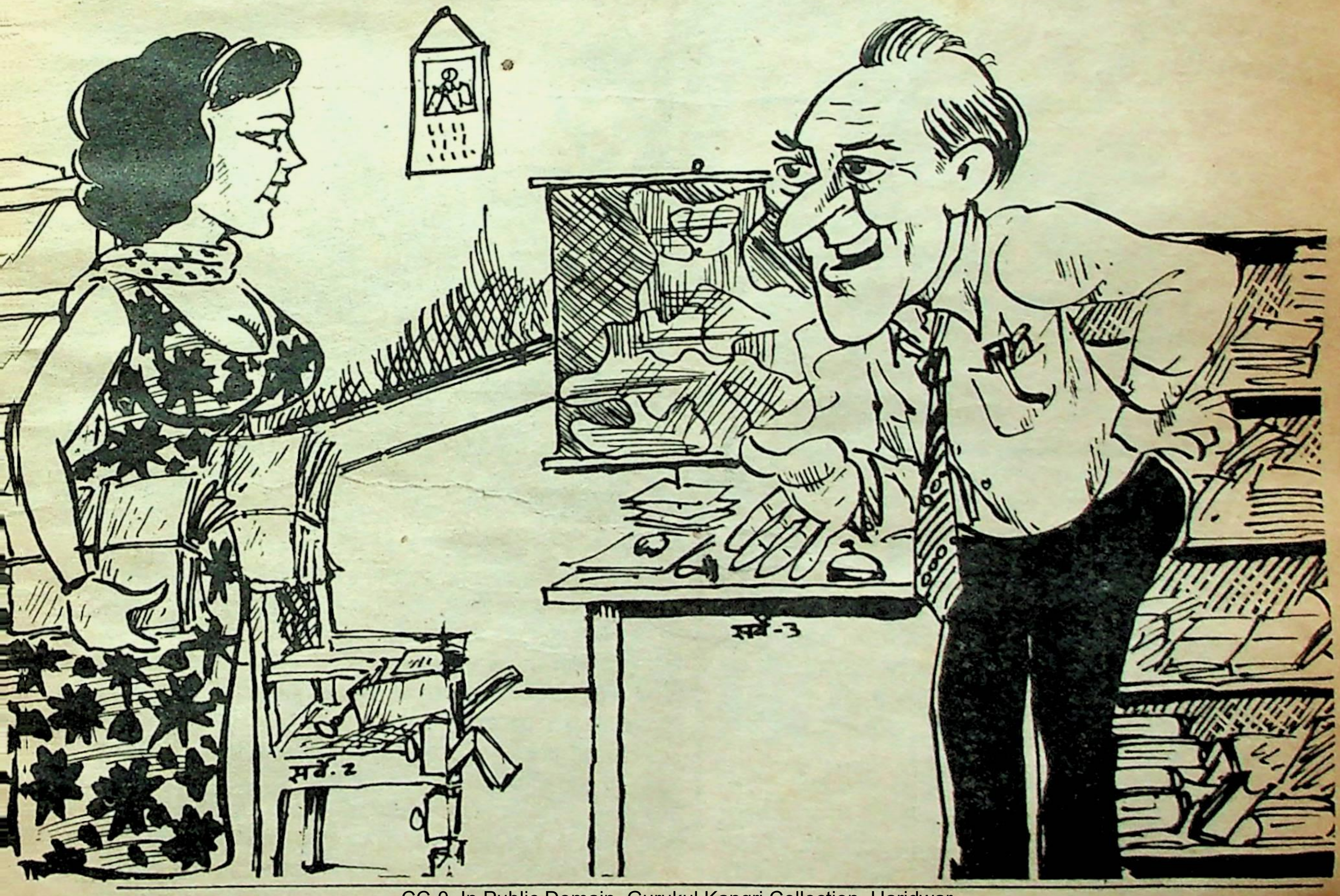

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : 1947
प्रमुख कृतियां : दरअसल, यह कल्पना लोक नहीं
संप्रति : सारिका संपादकीय विभाग से संबद्ध
संपर्क : 421 एफ पॉकेट 2, मयूर विहार, दिल्ली-110091

सुरेश उनियाल

विलक्षणा

विचक्षणा की मृत्यु की सूचना विलक्षणा को अपनी सखी मदिरा से मिली थी. मदिरा आर्य राक्षस की निजी सेविकाओं में से एक थी. उसी ने बताया था कि विप्लव हो गया है. राजा नंद को सत्ता से च्युत करके मृत्युदंड दे दिया गया है. चंद्रगुप्त मौर्य को चाणक्य ने राजा घोषित कर दिया है. आर्य राक्षस किसी अज्ञात स्थान पर चले गये हैं. विचक्षणा उस समय राजमहल में ही थी. चंद्रगुप्त की विजय का समाचार सुनते ही वह बधाई देने के लिए चंद्रगुप्त की ओर गयी कि तभी चाणक्य के एक संकेत पर चंद्रगुप्त ने अपनी कृपाण के एक ही वार से उसका शिरोच्छेद कर दिया.

वृहद् कथा, विशाखदत्त के नाटक 'मुद्राराक्षस', प्रसाद के निबंध 'चंद्रगुप्त मौर्य' तथा अन्य उपलब्ध स्रोतों के कंकाल पर कल्पना के मांस-मज्जा चढ़ाकर तैयार किया गया एक कथा प्रयोग

''लेकिन क्यों? क्या अपराध था मेरी भगिनी का?'' विलक्षणा ने मदिरा के दोनों कंधों को झकझोरते हुए पूछा.

''अपराध तो मैं नहीं जानती, परंतु जब वह चंद्रगुप्त की ओर बढ़ रही थी तो चाणक्य ने चंद्रगुप्त से कहा था, 'सावधान चंद्रगुप्त, यह विषकन्या तुम्हें भी डस सकती है. इसका जीवित रहना उचित नहीं.' यह सुनकर भी विचक्षणा जब न रुकी और चंद्रगुप्त से हाथ भर दूरी पर पहुंच गयी तो अपने गुरु के दृष्टि संकेत पर उसने तेरी भगिनी का शिरोच्छेद कर दिया.''

''हां, विषकन्या ही तो थी विचक्षणा. तभी तो उसने इसी चाणक्य और बूढ़े शकटार के कहने में आकर नंद के आठों बेटों को अपने अधरों के विष से समाप्त करके इस चंद्रगुप्त के लिए सत्ता पथ का मार्ग निष्कंटक कर दिया था... चाणक्य, तू कृतघ्न है... चंद्रगुप्त, मैं आज यह व्रत लेती हूं कि जब तक तू इस धरती पर सांस लेता रहेगा, मैं चैन से न बैठूंगी. चैन तभी लूंगी जब तेरा वध करके तुझे भी नंद और उसके बाकी आठ बेटों के पास पहुंचा दूंगी. मैं भी विषकन्या हूं, अब देखती हूं, चाणक्य तुझे कैसे बचा पाता है.''

विलक्षणा के इस क्रोध से मदिरा मन ही मन प्रसन्न हो रही थी. आर्य राक्षस भी कितनी दूर की सोचते हैं. अगर चाणक्य और शकटार ने नंद के आठ पुत्रों को समाप्त करने के लिए इसकी भगिनी विचक्षणा का प्रयोग किया था तो यह चंद्रगुप्त को समाप्त करने के लिए विलक्षणा का प्रयोग कर रहे हैं. मदिरा को विश्वास नहीं था कि उसके इस झूठ पर

विलक्षणा इतनी सहजता से विश्वास कर लेगी. अगर वह स्वयं अपनी आखों से आर्य राक्षस को विचक्षणा का वध करते न देख लेती तो शायद विलक्षणा से यह झूठा वृत्तांत कहते उसकी जीहवा कांपी न होती, उसकी दृष्टि भूमि पर चिपकी न होती. पर अपनी सहोदरा के वध का समाचार विलक्षणा के लिए इतना बड़ा आघात था कि मदिरा के इस झूठ को वह पकड़ न सकी. यों भी मदिरा उसकी बाल्यकाल की सखि थी. उस पर अविश्वास करने का प्रकटतः कोई कारण भी न था.

नंद के पुत्रों का वध विलक्षणा ने किया. यह बात मदिरा के लिए सर्वथा अज्ञात थी. यही माना गया था कि रात्रि में किसी विषाक्त सर्प ने उन्हें डस लिया होगा अथवा जो मदिरा उन्होंने उस रात पी, उसमें ही संभवतः किसी प्रकार का विष रहा होगा. लेकिन ऐसा उसने क्यों किया?

और जब मदिरा कारण के बारे में सोचने लगी तो एक नहीं, कारणों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की एक पूरी श्रृंखला ही वहां थी.

विचक्षणा नंद की दासी थी. सुंदर थी. आयु भी तब अधिक नहीं रही होगी. इसलिए बालसुलभ चांचल्य शेष था. एक दिन राजा हाथ मुंह धोकर हंसते-हंसते अपनी रानी के कक्ष की ओर जा रहे थे कि विचक्षणा भी उन्हें देखकर हंसने लगी. एक दासी को इस तरह हंसते देख राजा को क्रोध आ गया. उन्होंने तत्काल इस हंसी का कारण पूछा.

राजा के क्रोध और अचानक पूछे गये सवाल से हतप्रभ विचक्षणा के मुंह से निकल गया, "जिस कारण महाराज हंसे थे, उसी कारण दासी को भी हंसी आ गयी."

इस उत्तर ने राजा के क्रोध को और भी बढ़ा दिया. बोले, "तो यही बता, मैं क्यों हंसा था. यदि तूने सही उत्तर न दिया तो प्राण दंड मिलेगा."

अब तो विचक्षणा घबरा गयी. उत्तर के लिए उसने राजा से एक माह का समय मांगा. राजा ने समय दे दिया. लेकिन यह भी कह दिया कि एक माह बाद यदि उसने सही उत्तर न दिया तो उसे मृत्यु दंड दिया जायेगा

एक-एक करके दिन बीतने लगे. राज सभा के कई विद्वानों, वृद्धजनों के सम्मुख उसने अपनी समस्या रखी लेकिन किसी के पास भी उसका उत्तर नहीं था. सभी ने एक ही बात कही कि पूर्व आमात्य शकटार के अतिरिक्त कोई दूसरा व्यक्ति इसका उत्तर नहीं बता सकता. लेकिन शकटार तो बंदीगृह में थे.

शकटार यदि पूरे मगध में सर्वाधिक चतुर और विद्वान व्यक्ति थे, तो हठी भी कम न थे. नंद ने जब उन्हें पत्नी और सात बेटों के साथ बंदीगृह में डाल दिया तब भी उन्होंने हठ नहीं छोड़ा था. पूरे परिवार को भोजन

नष्ट हो गये. राजा को हंसी आ गयी."

यह सुनकर विचक्षणा ने उन्हें वचन दिया, "यदि आपके बताये इस उत्तर से मेरी जीवन रक्षा हो गयी तो मैं आपको इस बंदी-गृह से मुक्त कराने का यथा संभव प्रयास करूंगी और आजीवन आपकी दासी बनकर रहूंगी."

अगले दिन वह राजा के पास गयी और शकटार से मिले उस उत्तर को शब्दशः राजा के सम्मुख कह दिया. राजा को बहुत आश्चर्य हुआ. यही सब सोचकर तो वास्तव में वह हंसा था. राजा सोचने लगा कि इस दासी में तो इतनी बुद्धि नहीं हो सकती. अवश्य इसने किसी से पूछा होगा. लेकिन इतना बुद्धिमान तो शकटार के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं हो सकता.

"क्या तू शकटार से मिलने बंदीगृह में गयी थी?" राजा ने डांटकर दासी से कहा. अपने झूठ को वह छिपा न सकी और राजा के सम्मुख अपनी स्वीकृति प्रकट की.

"मैं समझ गया था, शकटार के अतिरिक्त किसी अन्य में इतनी बुद्धि हो ही नहीं सकती." राजा ने गर्व से कहा.

विचक्षणा ने उचित अवसर देखा तो पूछ लिया, "यदि महाराज क्षमा का वचन दें तो दासी एक निवेदन करना चाहती है."

राजा विचक्षणा पर प्रसन्न तो थे ही, हंसते हुए बोले, "कहो, क्या कहना चाहती हो?"

"महाराज, ऐसे विद्वान का स्थान बंदीगृह नहीं, आपकी राज्यसभा होनी चाहिए."

राजा को यह सलाह पसंद आ गयी और उसने शकटार को बंदीगृह से न केवल मुक्त कर दिया, बल्कि फिर से आमात्य पद भी दे दिया.

के लिए रोज दो सेर सत्तू मिलता था. शकटार सबसे कहते कि इस सत्तू को वही खाये जो नंद को समूल नष्ट करने में समर्थ हो. यह सामर्थ्य उनके किसी बेटे में नहीं थी. इसीलिए सातों ने बिना भोजन पाये, एक-एक कर प्राण त्याग दिये. अपने प्रत्येक बेटे की मृत्यु पर शकटार नंद को समूल नष्ट करने की अपनी शपथ को दोहराते. वह मात्र इतना ही अन्न-जल ग्रहण करते जितने से जीवित भर रह सकते. इतने वर्षों में तो वे कंकाल के समान ही रह गये थे.

विचक्षणा अपनी समस्या लेकर उनके पास पहुंची. शकटार ने उसकी पूरी बात सुनी. फिर बोले, "यह तो बहुत सहज बात है, राजा जब कुल्ला कर रहे थे तब उन्हें पानी के छोटे-छोटे छींटों को देखकर वट बीजों की याद आयी होगी और वे सोचने लगे होंगे कि इतने छोटे-छोटे बीजों में कितना विराट वट वृक्ष छिपा होता है. और वे छींटे जब भूमि पर पड़ते ही

राजा ने तो शकटार को क्षमा कर दिया पर शकटार ने राजा को क्षमा नहीं किया. उन्हीं दिनों तक्षशिला से अध्ययन और कुछ वर्ष अध्यापन करके आये विष्णुगुप्त को शकटार ने अपने साथ मिला लिया. विष्णुगुप्त वास्तव में शकटार के बालमित्र ब्राहमण चणक का पुत्र था. इसीलिए उसे चाणक्य भी कहते थे. राजा द्वारा अपमानित किये जाने के कारण चाणक्य भी राजा के समूल नाश की शपथ ले चुका था. चाणक्य का चंद्रगुप्त से अधिक स्नेह था. वह चंद्रगुप्त में मगध तथा समस्त आर्यावर्त के भावी सम्राट होने के सभी लक्षण देखता था. चंद्रगुप्त वास्तव में नंद के निष्कासित सेनापति मौर्य का पुत्र था.

शकटार और चाणक्य के उद्देश्य समान थे अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पहले तो उन्होंने विचक्षणा के विषकन्या होने का लाभ उठाते हुए उसकी सहायता से नंद के आठों पुत्रों का वध कराया और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर पंचनद के राजा पर्वतराज पुरु की सहायता से चंद्रगुप्त के नेतृत्व में अब यह विप्लव भी करवा दिया.

आमात्य परिषद के प्रधान आर्य राक्षस को इस सबका अनुमान पहले से ही था, तभी तो विप्लव होते ही वे सुरक्षित स्थान पर चले गये और अब मदिरा के जिम्मे इतना ही काम था कि विलक्षणा को चंद्रगुप्त के वध के लिए तैयार कर सके. इतना काम उसने कर लिया था. पूरी भूमिका तैयार करने के लिए मदिरा ने विलक्षणा से पूछा, "सखी, अब तू क्या करेगी. ऐसे तो तू चंद्रगुप्त का वध कर न सकेगी. इसके लिए कोई युक्ति करनी पड़ेगी."

"युक्ति?"

"हां युक्ति, ध्यान से सुन..."

"तुम्हें विश्वास है कि विलक्षणा तुम्हारी बतायी युक्ति के अनुसार ही आचरण करेगी?" राक्षस ने मदिरा से पूछा. वे पूर्णतः निश्चित हो जाना चाहते थे कि उनका यह वार किसी भी तरह निष्फल नहीं होना चाहिए.

"हां आर्य, शरीर तो उस विषकन्या का पहले ही विषैला था. मैंने उसके मन में ही चंद्रगुप्त-चाणक्य मंडली के विरुद्ध पर्याप्त विष भर दिया है." मदिरा नें राक्षस को आश्वस्त करने के लिए कहा, लेकिन राक्षस अब भी आश्वस्त नहीं था. एक और कौड़ी अभी उसके हाथ में थी, वह उसे भी चल देना चाहता था. मदिरा से बोला, "पर्वतराज के जिस चर को उत्कोच देकर हमने अपने पक्ष में कर लिया था, जरा उसे बुला लाओ."

राक्षस जानता था कि पर्वतराज बहुत महत्वाकांक्षी है. वीर भी है और उद्यमी भी लेकिन चतुर नहीं. यदि चतुर होता तो यवन पति अलक्षेंद्र के विरुद्ध युद्ध में विजय के कगार पर पहुंचकर उसके मैत्री के लिए बढ़े हाथ को स्वीकार न करता. यह अवश्य था कि उस दिन के युद्ध में पर्वतराज घायल हो गया था और नीति निपुण अलक्षेंद्र युद्ध भूमि पर ही उसकी प्रशंसा कर रहा था. जब अलक्षेंद्र ने पर्वतराज से पूछा था कि आपके साथ कैसा आचरण किया जाये तो पर्वतराज ने गर्व से कहा था, "जैसा एक राजा दूसरे राजा के साथ करता है." यद्यपि पर्वतराज तक एक संदेश पहुंचाया जा चुका था कि मगध और मालव के वीर युवकों का एक दल चंद्रगुप्त तथा सिंहरणा के नेतृत्व में उनकी सहायता के लिए तैयार है और युद्ध को अंतिम निर्णय तक पहुंचाये बिना और अलक्षेंद्र की सेना को वितस्ता नहीं, सिंधु के भी उस पार खदेड़े बिना यह युद्ध समाप्त न करे. पर्वतराज को तब लगा कि युद्ध लड़कर अपने क्षत्रियत्व की आन उसने रख ली और राज्य भी बचा लिया. मगध के विप्लव में चंद्रगुप्त की सहायता करने का उसका उद्देश्य भी यही था कि मगध का आधा राज्य उसे मिल जायेगा. लेकिन चाणक्य की यह सारी योजना मगध को दो भागों में बांटने की नहीं थी. वह तो समस्त आर्यावर्त को ही एक राज्य के

रक्तकंठ

विशाल खिड़कियों जैसे नेत्रवाले चाणक्य ने नंदपुर के सुनार भूदेव की बेटी सुकेशी को निहारा. सुकेशी अनिंद्य सुंदरी थी. दूध में घुली केशर जैसा वर्ण, नीलम जैसी आंखें, ताजे रक्त जैसे होंठ. उसके शरीर से यौवन की सुगंध आ रही थी—भीनी-भीनी, नशीली. चाणक्य ने सौ स्वर्ण-मुद्राएं उस सुनार के आगे फेंककर कहा, "तुम्हारी पुत्री पद्मिनी जाति की अनमोल स्त्री रक्त है, भद्र. अनुपम सुंदरी एक पुरुष की भोग्या नहीं हो सकती. और इस राज्य का चलन तो यह है कि मनोहर स्त्री को राज्य की सेवा करनी होगी—विष-कन्या बनकर."

अपनी भीगी आंखों को कुर्ते की आस्तीन से पोंछकर फिर वह सुनार चाणक्य को प्रणाम करके लौट पड़ा था. चाणक्य ने स्वर्णनाथ को आदेश दिये, "इसे गायन एवं नृत्य की शिक्षा दी जाये और नित्य सर्प का विष कम मात्रा में दिया जाये."

एक वर्ष बाद उसे चाणक्य की सभा में लाया गया. एक कुशल जौहरी की भांति चाणक्य ने सुकेशी का एक एक अंग अपनी तीव्र दृष्टि से परखा. और जब सुकेशी ने राग जोग में एक श्लोक गाया तब उसके कंठ से बिखरा स्वर सम्मोहन-अस्त्र की भांति सुनने वालों के हृदय को विदीर्ण करता गया.

तभी चाणक्य ने प्रसन्न होकर उसे एक नयी उपाधि दी थी—रक्तकंठ.

उसी दिन से रक्तकंठ विष-कन्याओं की प्रथम पंक्ति में आ गयी थी.

यूनान का वह सजीला योद्धा सिकंदर पंजाब में जम गया था. जैसे उसके साथ भी उसके देश का चाणक्य एवं गुरु आया था—अरस्तू.

और जिस दिन सिकंदर के दरबार में खबर आयी कि भारत के नरेश चंद्रगुप्त ने उसे एक अनमोल उपहार भेजा है तब अरस्तू संभलकर बैठ गया था.

दरबार में रक्तकंठ एक बेहद झीना वस्त्र पहनकर आयी थी. ऐसा लगता मानो रुई जैसे महीन बादल में लिपटा चंद्रमा धरती पर उतर आया हो.

सिकंदर अपनी सुध-बुध खोकर खड़ा हो गया. इतनी रूपवती स्त्री उसने पहले कभी नहीं देखी थी.

सिकंदर बोला, "तुम्हारे ओंठ जिंदगी की शराब से लबरेज प्याले हैं, हसीना." और तभी यूनान का चाणक्य अरस्तू खड़ा हो गया और ऊंची आवाज में बोला, "सिकंदर, कभी-कभी इनसान जिंदगी की शराब के धोके में मौत का शरबत भी पी लिया करता है."

सिकंदर को गुरु की बात अखरी. वह तो रक्तकंठ को उसी दम निगल जाना चाहता था.

और फिर अरस्तू ने आगे बढ़कर पास खड़े प्रहरी अगस्त्स से कहा, "अनजाने दोस्त की सौगात को भी सब तरह से आजमा लेना अक्लमंदी है. मैं तुम्हें शाह के उस्ताद की हैसियत से हुक्म देता हूं कि तुम इस हसीना के होंठों का चुंबन लेकर दिखाओ."

एक बार तो सिकंदर भी अपने गुरु की अवज्ञा करने को तत्पर हो गया. बगावत के आसार उसकी लाल लाल आंखों से झलक रहे थे. पर झपटकर फिर अरस्तू ने अगस्त्स से कहा, "तुमने सुना नहीं, आगे बढ़ो."

और सहमता हुआ भीमकाय शरीरवाला अगस्त्स बढ़ा और रक्तकंठ को बांहों में भरकर उसके माणिक जैसे होंठों पर अपने होंठ रख दिये. सिकंदर ने क्रोध से अपनी आंखें बंद कर लीं. और तभी धड़ाम से अगस्त्स भरे दरबार में गिर पड़ा—निर्जीव, मिट्टी के ढेर जैसा.

यह देखकर सिकंदर कांप गया. फिर वह अपने गुरु की ओर बढ़ा और उसका दामन थामकर चूमा.

अरस्तू ने उसके सर पर हाथ रखकर कहा, "इस विष-कन्या को वापस भेज दो, सिकंदर. और याद रखना कि हमेशा बेशबहार जाम में जहरीली शराब भरी जाती है." □

—बाला दुबे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में और एक राजा के अधीन लाने की योजना बना रहा था. ऐसे में आज नहीं तो कल, पर्वतराज का मोह भंग होना ही है. क्यों न आज ही हो.

यही सब सोचकर उसने पर्वतराज के विश्वस्त चर संबल को बुलवा लिया.

कुछ ही देर में संबल राक्षस के सम्मुख था.

''संबल, एक बहुत महत्वपूर्ण कार्य हम तुम्हें सौंपना चाहते हैं. इस कार्य में हमारा ही नहीं तुम्हारे स्वामी पर्वतराज पुरू का भी हित है.'' राक्षस का गंभीर स्वर कार्य की गंभीरता की ओर संकेत कर रहा था.

''दास प्रस्तुत है, आप आज्ञा कीजिए.''

''तुम्हें पर्वतराज को जाकर यह विश्वास दिलाना होगा कि चंद्र गुप्त के साथ रहकर उन्हें आधा राज्य क्या एक ग्राम भी नहीं मिल सकेगा. और यदि वे हमारे साथ मिल जायें तो मगध का पूरा राज्य भी उन्हें मिल जायेगा. इतना ही नहीं राक्षस जैसा अमात्य भी उनकी सेवा के लिए प्रस्तुत होगा.'' राक्षस ने उसे समझाते हुए कहा, ''क्या यह काम तुमसे हो सकेगा?''

''सेवक की बुद्धि पर इतना विश्वास तो आप कर ही सकते हैं. जाना कब होगा?'' संबल ने विनम्र स्वर से कहा.

''तत्काल, वहां तुम विलक्षणा नामक दासी से भी सहायता ले सकते हो... किंतु ध्यान रहे, वह विषकन्या है.''

संबल ने झुककर राक्षस को प्रणाम किया और बाहर निकल गया.

मगध के राजमहल में उल्लास का वातावरण था. अगर कोई उद्विग्न दिखाई देता था तो अकेला पंचनद नरेश पर्वतराज पुरु. वह शाम से ही मदिरापात्र लेकर बैठ गया था. लगातार पी रहा था और बड़बड़ा रहा था, ''चाणक्य और चंद्रगुप्त अपनी मंत्रणाओं में लगे हैं और मुझे इन मंत्रणाओं में सम्मिलित नहीं किया गया. यह तो सचमुच अपमान जनक है. विप्लव से पूर्व तो वे मुझे हर मंत्रणा में सम्मिलित करते थे. अर्थात यहां भी कोई दुरभिसंधि है. यह पाखंडी ब्राह्मण चाणक्य चाहता क्या है? इसके कुटिल जाल को छिन्न-भिन्न करना ही होगा. संबल राक्षस का संदेश लेकर आया है कि वह सहायता कर सकता है. पर जब वह अपने राजा नंद की सहायता नहीं कर सका तो किसी और की सहायता कैसे कर सकेगा! नहीं, कोई मेरी सहायता नहीं कर सकता. पर मुझे किसी की सहायता की आवश्यकता ही क्या है? एक चंद्रगुप्त ही तो मेरी राह का कंटक है. यदि उसे परलोक पहुंचा दूं तो चाणक्य बिना शरीर की आत्मा से समान रह जायेगा. जिसे अन्यत्र कहीं ठिकाना नहीं मिलेगा. यही उचित होगा.तो फिर आज रात्रि को ही...''

विलक्षणा ने भी योजना बना ली थी कि उसे क्या करना है. राजमहल की वह पुरानी दासी थी. राजमहल का कोई भी कोना ऐसा न था जो अपरिचित हो. चंद्रगुप्त के शयनकक्ष का पता करने में उसे जरा भी कठिनाई न हुई. विप्लव के बाद दास-दासियों की पूरी व्यवस्था परिवर्तित होनी थी अतः दास-प्रमुख से कहकर विलक्षणा ने चंद्रगुप्त के शयनकक्ष की देखभाल का काम हस्तगत कर लिया. इससे उसे यह सुविधा हुई कि वह स्वतंत्रता पूर्वक चंद्रगुप्त के शयनकक्ष में आ-जा सकती थी.

उसकी योजना थी कि चंद्रगुप्त के कक्ष में आते ही वह उसका आलिंगन करेगी तथा अपने अधरों को उसके अधरों पर रख देगी. चंद्रगुप्त युवा है, अभी अविवाहित है, ऐसे में इस रसमय निमंत्रण को ठुकराने की स्थिति में वह होगा ही नहीं. और इसके साथ ही उसके जीवन का अंत भी हो जायेगा. इसके बाद वह अपने सीने में छिपाकर रखी कटारी से अपने प्राण भी ले लेगी क्योंकि इसके बाद उसके जीवन का कोई लक्ष्य नहीं रह जायेगा. यों भी चंद्रगुप्त का वध करने के बाद वह उस कुटिल चाणक्य की दृष्टि से न बच सकेगी और तब भी मृत्युदंड ही निश्चित है.

संध्या से ही चंद्रगुप्त चाणक्य के कक्ष में थे. रात्रि के प्रथम पहर तक तो विलक्षणा चंद्रगुप्त के शयन कक्ष के द्वार के बाहर बैठी प्रतीक्षा करती रही पर अब उसे नींद आने लगी थी.

वह यह भी जानती थी कि यदि आज वह यह कार्य न कर सकी तो फिर कभी न कर सकेगी. जैसे ही चाणक्य को पता लगेगा कि चंद्रगुप्त के शयनकक्ष की देखरेख का भार विलक्षणा को दिया गया है, वह इस व्यवस्था को तत्काल बदल देगा और चंद्रगुप्त को उसकी छाया से भी दूर रखने के उपाय कर लेगा.

जब निद्रा का आवेग बढ़ने लगा तो विलक्षणा उठकर टहलने लगी. शयनकक्ष की व्यवस्था एक बार फिर से देखने के लिए वह भीतर गयी. चंद्रगुप्त की शैया को देखकर एक बार उसे अनुभव करने के लिए पहले वह उस पर बैठी और फिर लेट गयी. शैया के मृदु-मसृण अनुभव से प्रभावित हो घड़ी भर के लिए उसने आंखें बंद कर लीं. निद्रा की देवी संभवतः इसी प्रतीक्षा में थी, उसने तत्काल अपना आंचल उस पर फैला दिया.

एक पहर भर संभवतः वह गहरी निद्रा में रही. लेकिन अर्धरात्रि के लगभग उसे कक्ष में किसी के प्रवेश की आहट मिली. वह तत्काल शैया पर से उठी और प्रवेश करनेवाले से आलिंगन बद्ध हो गयी.

परंतु क्षण भर में ही वह समझ गयी कि भीतर प्रवेश करनेवाला चंद्रगुप्त न था, पर्वतराज था. तो क्या यह चंद्रगुप्त का नहीं, पर्वतराज का शयनकक्ष है? विलक्षणा क्षण भर के लिए सकुचा गयी. सकुचा तो पर्वतराज भी गया था, चंद्रगुप्त के स्थान पर एक सुंदरी को वहां पाकर और उसके इस अकस्मात आलिंगन से किसी स्वतः स्फूर्त प्रक्रिया से उसके दोनों बाहुओं ने उस सुंदरी को अपने में समेट लिया. अब सुंदरी स्वयं को छुड़ाने का प्रयास करने लगी. परंतु पर्वतराज की बाहों से स्वयं को छुड़ाना संभव न था.

''मुझे क्षमा करें, जाने दें.'' विलक्षणा ने अनुनय की.

पर मद्य और सुंदरी के आलिंगन के सम्मिलित नशे ने उसकी कुछ भी सुनने की शक्ति छीन ली थी. उसके अधर विलक्षणा से अधरों को पाने के लिए आगे बढ़े. विलक्षणा नहीं चाहती थी कि जो जाल उसने चंद्रगुप्त के लिए बिछाया है, उसमें फंसकर पर्वतराज अपने प्राण दे दें और चंद्रगुप्त बच निकले.

''सावधान, पर्वतराज, इसमें आपका अहित हो सकता है.'' विलक्षणा ने पर्वतराज को एक बार फिर चेताना चाहा.

''अपने हित-अहित की चिंता मैं कर लूंगा.'' पर्वतेश्वर उसकी कोई बात सुनने के लिए तैयार न था, ''अगर तू अपने प्रेमी चंद्रगुप्त के नाम का भय दिखाना चाहती है तो जान ले कि आज रात्रि में यह निर्णय भी हो जायेगा कि मगध का सम्राट कौन होगा—वह या मैं.''

''नहीं पर्वतेश्वर, मैं आपको भय नहीं दिखा रही हूं. मैं वास्तव में विषकन्या हूं. मेरा अभिसार आपके लिए चिरनिद्रा का कारण बन सकता है.'' विलक्षणा ने अपनी बात स्पष्टतः कह दी.

''आज तो मैं हर तरह का विष पीने के लिए तैयार हूं.'' कहते हुए पर्वतराज बलपूर्वक विलक्षणा को उसी शैया तक ले आया... कुछ ही क्षणों में पर्वतराज की मृतदेह को वह अपने शरीर पर से हटा रही थी.

अभी वह अपने वस्त्रों को ठीक भी न कर पायी कि सम्मुख चंद्रगुप्त, चाणक्य तथा अन्य कई व्यक्तियों को देखकर वह हतप्रभ रह गयी. उसने अपने सीने में छिपी कटार निकाली और चंद्रगुप्त की ओर झपटी. इससे पूर्व कि वह चंद्रगुप्त तक पहुंच पाती रक्षक सैनिकों ने उसे पकड़ लिया. अब विलक्षणा समझ गयी कि चंद्रगुप्त का वध वह कभी नहीं कर सकेगी. अंतिम प्रयास के रूप में उसने पूरी शक्ति से अपने को सैनिकों के हाथों से मुक्त किया और अपने हाथों में पकड़ी कटार को अपने हृदय में प्रविष्ट कर दिया.

चंद्रगुप्त ने गुरुदेव चाणक्य की ओर इस भाव से देखा, जैसे कह रहे हों, 'गुरुदेव, आपको भविष्य की घटनाओं का इतना स्पष्ट चित्र कैसे दिख जाता है?' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : दिसंबर, 1931
प्रमुख कृतियां : उनका फैसला, अकारण, अनायास, उपसंहार (उपन्यास) टूटा हुआ कोना, अबरक के फूल (कहानी संग्रह)
संप्रति : स्वतंत्र लेखन
संपर्क : 85 शिवाखंड, विश्वकर्मा कॉलोनी, शाहदरा, दिल्ली-32

योगेश गुप्त

घर-गमला

उसने वह गमला उस चौकोर खिड़की में सजा दिया.

दरअसल वह खिड़की नहीं थी. चारों दीवारें उठ जाने के बाद बनाने वाले को एहसास हुआ कि रोशनी आने का कोई रास्ता नहीं छोड़ा. पूरब को टटोला और उस दिशा की दीवार में से एक टुकड़ा कतरकर फेंक दिया. ईंट क्योंकि चौकोर होती हैं, लाख बेरहमी के बावजूद खिड़की चौकोर बनी और दीवार चिथड़ा-चिथड़ा होने से बच गयी. खैर, सबेरे-सबेरे घर में रोशनी आने लगी. और अब कहीं से लाकर यह गमला उसने इस खिड़की में फंसा दिया. रोशनी कम ही आये पर जरा खुशबूदार आये.

गमला चौकोर हो, यह उसने ध्यान रखा. और यह कि मिट्टी उसमें कम हो और ज्यादा फूल भी न हों, कहीं रोशनी आने के सारे रास्ते बंद हो जायें. यही सोचकर एक फूलवाला यह गमला वह खरीद लाया. छोटा-सा, थोड़ी-सी मिट्टी. मिट्टी के बीचोंबीच गड़ी एक डाल पर लगा एक फूल, फूल में चार पत्तियां, सोने के रंग की, पीली. सुबह, शाम, दोपहर को फूल की बदलती छवि उसके दिमाग में गड़ने लगी, अपने लिए सिंहासन खोदने लगी. रोशनी को भी घर में आने में स्वाद आने लगा. सूरज कुछ जल्दी उगने लगा. धरती के घूमने की गति मंथर हो गयी. उबासियां कम आने लगीं.

पर जिंदगी फूल नहीं होती. होती तो लोग घर में गमले न लाते.

> वह अंदर आ गयी. उस आदमी ने देखा, उसकी बगल में एक दरी है. उसने दरी बिछा दी और लेट गयी. बोली, ''किसी ने ठीक कहा है, एक से दो भले.
>
> उस आदमी ने जोर देकर कहा, ''बिल्कुल गलत बात, दो से एक भला. मरने में आसानी होती है, जीने में भी.''

वह आदमी देर से उठने का आदी था. उसका खयाल था कि सुबह-सवेरे पीछे छूटे बहुत से लोग मिलने आते हैं. जल्दी जागकर उन्हें निराश नहीं करना चाहिए. पर अब उसने अपनी चारपाई उस दायरे में बिछा ली है जहां सूरज की किरणें सबसे पहले आसमान से उतर कर खड़ी होती हैं. वह उसे जगा देतीं. वह करवट लेकर फूल की तरफ देखता. मन खिल उठता. दूर से आये लोग भी इस दृश्य का रस लेते. वह जाग भी जाता और मेहमानों का अपमान भी न होता. उसे जगाकर सूरज घूम जाता. उसके सारे शरीर को हवा बना देता. वह दिन बिताने को तैयार हो जाता.

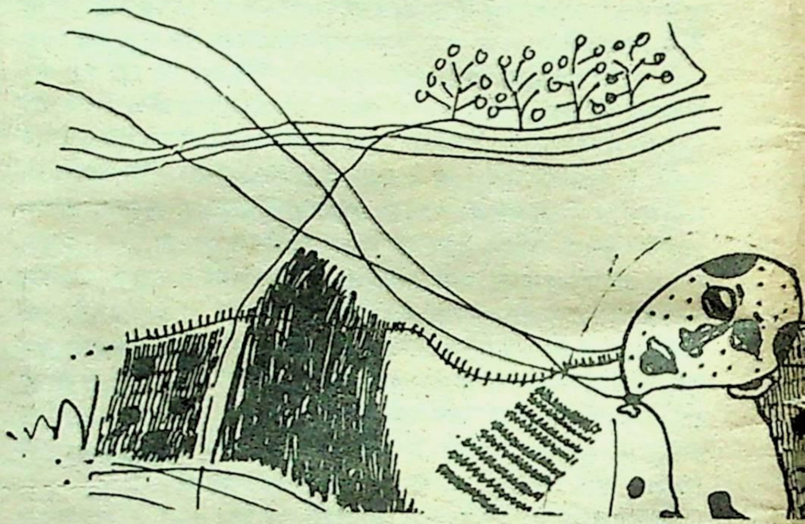

दिन! सूरज दिन में भी होता है. पर फूल की ओट के बिना.

इस कोठरी में इस आदमी के सिवाय कोई नहीं रहता पर बाहर बहुत चहल-पहल रहती है. चारों तरफ कोठरियां ही कोठरियां हैं. अलग-अलग कारखानों में, दूकानों पर काम करनेवाले लोग, उनकी बीवियां, उनके बच्चे, इधर-इधर बगूलों की तरह घूमते, खाते-खेलते-लड़ते, 'जीवन निस्सार है' के बोदे सत्य की पोल खोलते देखे जा सकते हैं. इन लोगों के एक-एक कमरे के घर भरे-पूरे हैं. बर्तन हैं, अंगीठी है, दरियां हैं, खूंटियां हैं और इक्का-दुक्का घर में तस्वीरें भी हैं. पर यह सच है कि किसी के भी घर में गमला नहीं है. इस आदमी के घर में जब गमला स्थापित हुआ (गमला खिड़की से दीखता है) तो पूरी गली चकित रह गयी. यह आदमी विशिष्ट हो गया. कुछ के लिए अजूबा और कुछ के लिए पागल, सनकी. लोग उसे देखकर, मुंह घुमा-घुमाकर हंसने लगे. सुबह भी, शाम को भी.

दिल्ली शहर में आपसी भेदभाव बिल्कुल नहीं है. गरीबों की बस्ती, बाबुओं के क्वार्टरों की कतार और अमीरों की कालोनी एक दूसरे से लिपटी थोड़ी-थोड़ी दूर पर पड़ी हैं. एक दूसरे में एक दूसरे का खून भी बहता है और एक दूसरे की खबर भी. यह खबर बाबू-अमीरों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुबह की हवा की तरह फैल गयी कि करखदारों की बस्ती में एक आदमी ऐसा रहता है जिसकी खिड़की में एक फूलवाला एक गमला रखा रहता है. घर में खाना हो न हो, वह आदमी उस फूल को पानी जरूर पिलाता है. सब हंसते हैं, वह गौर नहीं करता. सब टोकते हैं, वह टाल जाता है. कोई कोई खिड़की में रखे गमले पर पत्थर मारता है तो वह भेड़िये की तरह उस पर झपटता है. कुछ ही दिनों में अनेक कहानियां फूल, गमले और उस आदमी के बारे में प्रसिद्ध हो गयी हैं. बाबू लोग खूब खिल्ली उड़ाते हैं पर बड़े लोग अजीब उदात्त मुद्रा ओढ़कर उस आदमी की प्रशंसा करते हैं. "उस आदमी ने फूल के बारे में सोचा तो सही. नहीं तो ये लोग तो बस..."

एक दिन वह आदमी दरवाजे पर ताला लगा रहा था कि एक पड़ोसी ने उसे घेर लिया, "क्यों भैया, एक बात बताओ?"

उस आदमी ने पड़ोसी की तरफ मुंह किया.

"इस बस्ती को जंगल बनाने का इरादा है?"

"नहीं... पर तुम जंगली हो." उस आदमी ने कहा और आगे बढ़ गया.

इससे पहले कि पड़ोसी उससे उलझता वह आदमी उसकी नजरों से ओझल हो गया.

उस दिन वह बस स्टैंड पर खड़ा था. जाहिर है, बस की इंतजार में कि एक बाबू साहब जो बस की लाइन में ठीक उसके पीछे खड़े थे, उसको ठुंगा मारकर बोले, "तुम्हारे ही घर की खिड़की में एक

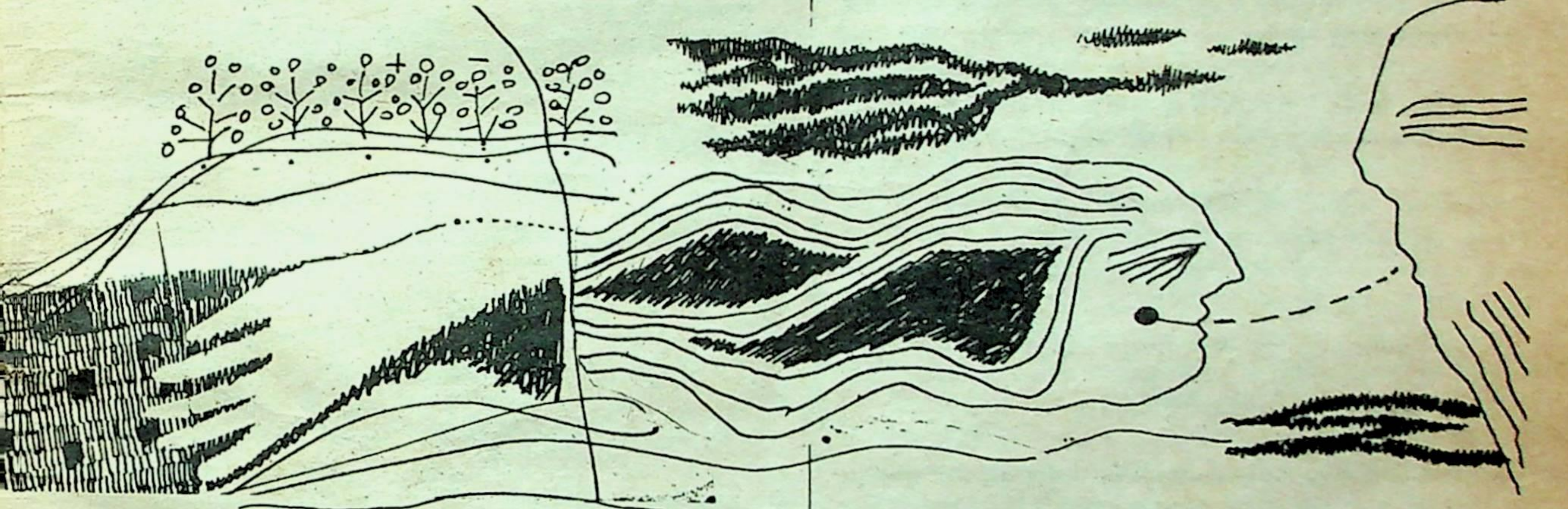

फूलवाला गमला है?"

"आपको चाहिए— फूल? या गमला? या खिड़की?"

बाबू साहब का चेहरा लाल हो गया, "क्या मतलब?"

"अखबार पढ़ा कीजिए, मतलब भी समझ में आ जायेगा."

"तुम मेरी खिल्ली उड़ा रहे हो?"

"नहीं देखिए वह... आप की बस आ गयी."

बाबू साहब की ठिठक, झुंझलाहट, आवेश और बस की ओर प्रयाण ने उस आदमी के चेहरे पर मुस्कराहट खींच दी. वह लाइन से निकलकर एक तरफ खड़ा हो गया और देर तक आप ही आप मुस्कराता रहा.

और उस दिन...सूरज निकला भी नहीं था कि किसी ने उसका दरवाजा ठकठकाया बेंत की मूंठ से. एक बार नहीं, कई बार. सूरज की किरणों के जगाने और इस जगाने का अंतर वह आंख खोलते-खोलते जान गया. शरीर की सारी नलियों में जैसे जहरीली गैस घूम गयी. मेहमानों को उसने चेहरे से चूंद कर परे फेंका. उठा और कुंडी खोल दी. उसने पाया कि सामने एक भव्य लंबा-चौड़ा, गोरा-चिटटा आदमी सिल्क का कुर्ता और पायजामा पहने, हाथ में बेंत लिये खड़ा था. उसके सिर के बाल मांग से बायीं तरफ रंगे हुए थे और दायीं तरफ सफेद. दरवाजा खुलते ही वह भीतर आ गया और बायीं तरफ घूमकर गमले के पास आकर खड़ा हो गया. वह आदमी उसके पीछे-पीछे.

"वाह! खूब! मेरे यहां सेंकड़ों गमले हैं पर ऐसा फूल और ऐसी एक फूलवाली डाल..."

उस आदमी ने बात काट दी, "आपके यहां नहीं हो सकता."

भव्य आदमी हंस पड़ा, "क्यों भाई, हमारे यहां क्यों नहीं हो सकता?"

"क्योंकि आपकी प्रतिभा अनेक मुखी है."

"मैं समझा नहीं." भव्य आदमी वास्तव में असमंजस में था.

"दरअसल मैं देर तक सोने का आदी हूं. बुरी आदत है, जानता हूं पर क्या करूं लाचार हूं."

"और क्या बुरी आदत है तुममें."

"मैं बेंत लेकर नहीं चलता."

"जैसा सुना था, तुम्हें वैसा ही पाया. आदमी तुम खासे बदतमीज हो." भव्य कठोरता बहुत प्रभावशाली लग रही थी.

उस आदमी ने मुस्कराते हुए कहा, "इसीलिए मैं बेंत लेकर नहीं चलता. बेंत से आदमी रेत पर दायरे खींचने लगता है."

"बाप रे! क्या भाषा बोलता है कमबख्त, और क्या स्वभाव है." कहकर आगंतुक एक झटके से बाहर हो गया. उस आदमी ने दरवाजा फिर बंद किया, फिर खाट पर लेट गया. और फिर आंखें बंद कर लीं. सूरज भी फिर उसे जगा नहीं सका. वह दिन भर पड़ा सोता रहा.

सोते हुए किसी को क्या पता चलेगा कि कितना समय बीत गया.

किसी शाम खिड़की के पास होते शोर ने उसे जगाया. जागकर उसने खिड़की की तरफ देखा—गमला अपनी जगह पर था. उसने चैन की सांस ली. दोनों हथेलियों से दोनों आंखों को रगड़ा. सिर में एक बड़ा गुबार चढ़ा. शरीर शांत हुआ. वह उठकर खड़ा हो गया. कोठरी का दरवाजा खोलकर वह बाहर आया और घूमकर खिड़की के नीचे आ गया. देखा—एक भीड़ है वहां. बच्चे, बड़े, औरतें. उसने आश्चर्य से उनकी तरफ देखा. वे खुद उसे आश्चर्य से देख रहे थे. जैसे वह कोई अजूबा हो. वह एक बच्चे की तरफ बढ़ा तो बच्चा डर गया. उसके मुंह से निकला, "फूल!?"

"क्या हुआ फूल को?"

"एक पत्ती लाल हो गयी."

"एक पत्ती?"

"हां."

उसने खिड़की के नीचे खड़े होकर फूल की एक झलक ली. फिर भागकर कोठरी में घुसकर दरवाजा अंदर से बंद कर लिया. गमले को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिड़की से उतारा और आंख भरकर फूल को देखने लगा, देखता रहा, देखता ही रहा. उसे महसूस हुआ कि फूल की खूबसूरती हजारगुना बढ़ गयी है. चटकदार पीले में घिरा चटकदार लाल. यह अलौकिक है. शाम के आकाश और सुबह के समुद्र जैसा सुंदर. उस विह्वलता में उसके मन में यह प्रश्न भी नहीं उठा कि यह 'अलौकिक' है क्या? इस 'अप्राकृतिक' का कारण क्या है और कि अलौकिक और अप्राकृतिक लौकिक और प्राकृतिक से अधिक सुंदर, अधिक सुखद क्यों लगता है. वह अतिरिक्त अनुभूति दरअसल है क्या?

कुछ भी हो, यह खबर भी बाबुओं के क्वार्टरों और अमीरों की कालोनी में गर्म हवा की तरह फैल गयी. सबके शरीरों को झुलसाती हुई. सबने एक ही तरह से सोचा—ऐसा चमत्कार वहां नहीं होना चाहिए था. अवतार भी हुआ तो किसके घर. ऐसे शानदार मकानों, इतने बड़े-बड़े गमलों, ऐसे परों जैसे मुलायम वातावरण की उपेक्षा करके उस कीकर की झाड़ी पर, उस रेगिस्तान में.. पर यह हुआ कैसे? इसे..

मन में आयी नष्ट करने की बात सबने वापस दिमाग में घुसेड़ दी. मुंह से निकल गयी बात में दम नहीं रहता. उसकी रीढ़ की हड्डी टूट जाती है. वह कभी पांव-पांव नहीं चल पाती.

कुछ ही दिनों में उस आदमी की वह छोटी-सी कोठरी एक छोटा-सा अजूबाघर बन गयी. बहुत दूर-दूर से लोग उस फूल को देखने आने लगे. जो भी आता उसे कोठरी हमेशा अंदर से बंद मिलती. उस आदमी ने खिड़की पर एक जाली लगवा दी. वहीं से फूल के दर्शन करके लोग चले जाते,आपस में सूत कातते हुए. कभी-कभी वह आदमी बाहर पकड़ा जाता तो उस पर सवालों की झड़ी लग जाती. सब पूछते—यह कैसे हुआ? उसने गमले की मिट्टी में क्या मिलाया? क्या कोई कलम लगायी है? इस पत्ती में कुछ इंजैक्ट किया है? यह क्या जादू-टोने में काम आनेवाला फूल है? किसी देवी-देवता ने यह गमला उसे दिया है? कौन-सा व्रत रखता है वह? कौन-सी सिद्धि उसे प्राप्त है? वगैरह वगैरह. लोगों में अनंत जिज्ञासाएं थीं. पर उत्तर के रूप में उन्हें एक ही बात सुनने को मिलती. "मैं कुछ नहीं जानता. मैंने कुछ नहीं किया. यह गमला मेरा है. इसकी रक्षा का भार मुझ पर है. यह फूल जादू का नहीं है. यह सुंदर फूल है."

वह भव्य आदमी भी फूल देखने आया. उस समय वह आदमी बाहर ही खड़ा था. भव्य आदमी ने उसके कंधे पर हाथ रखा, कहा, "भई, कमाल कर दिया तुमने तो."

"मैंने कुछ नहीं किया."

"अरे, ऐसा कैसे हो सकता है. साइंस का जमाना है, कोई भी काम अकारण नहीं होता. तुम बताना नहीं चाहते,जिससे कोई और ऐसा फूल न बना ले और तुम्हारी विशिष्टता बनी रहे."

वह आदमी कुछ पल उस भव्य आदमी की तरफ टक लगाकर देखता रहा. फिर बहुत महीन मुस्कराहट में सेबोला, "आप सुबह को कुछ देर जॉगिंग किया कीजिए. बुद्धि की धार थोड़ी बारीक होगी."

"फिर वही ऊल-जलूल तर्क. बात न बताने की चालाकी."

"आप जानना ही चाहते हैं."

"हां भई, हम भी चाहते हैं,ऐसे फूल हमारे बगीचे में भी हों."

"तो आप को इंतजार करनी पड़ेगी."

"कब तक?"

"सूर्यग्रहण तक एक चौथाई सूरज के ग्रहण वाला सूर्यग्रहण. उस दिन की धूप खाकर फूलों का रंग बदल जाता है."

"तुम मजाक कर रहे हो."

"नहीं, मैंने कुछ नहीं किया."

कहकर वह आदमी अपनी कोठरी में जाकर बंद हो गया. बाहर खड़े लोगों की आंखों से ओझल.

शाम तक सब लोग चले गये. वह आदमी तब तक सो चुका था.

उस आदमी के पथरीले व्यवहार से टकराकर लोगों की जिज्ञासा धीरे-धीरे मिट्टी के नीचे चली गयी. चारों तरफ सब सहज हो गया.

लोग उस पीले-लाल फूल के आदी हो गये. उस आदमी से लोगों ने बोलना बिलकुल बंद कर दिया. बाबुओं के क्वार्टरों और अमीरों की कालोनी के सैकड़ों मालियों ने फूलों के साथ अनेक प्रयोग कर डाले पर वैसा फूल न उगना था; न उगा. तभी बस्ती में एक धमाका हुआ. एक बहुत खूबसूरत लड़की आकर वहां बस गयी. एक कोठरी लेकर रहने लगी, अकेली. और दूसरा धमाका हुआ शहर में. पता चला कि युद्ध छिड़ गया है. किसी भी समय आकाश से बमों की बारिश हो सकती है. जो जिसने जोड़ा है, घटा में बदल सकता है. वर्ग त्रिकोणों में और त्रिकोण पंचभुजों में परिवर्तित हो सकते हैं. चारों तरफ अनिश्चय, आतंक और असुरक्षा का राज्य फैल गया.

पर उस आदमी के रूटीन या भाव-भंगिमा में कोई अंतर नहीं आया. सूरज के जगाने से सुबह उठना, गमले में पानी देना, बहुत देर तक फूल को निहारते रहना, फिर कपड़े पहनकर बाहर निकल जाना और शाम को आकर, गमले में पानी देकर पड़कर सो जाना. दिन बीतते रहे.

उसी बस-स्टैंड पर एक दिन वही बाबू साहब मिले, यकायक बोले, "घमासान लड़ाई चल रही है."

वह आदमी मुस्कराया, बोला, "हां, सुना है."

"सुना है! अखबार नहीं पढ़ते?"

"नहीं."

"तआज्जुब है, क्यों?"

"मैं रास्ते चलते लोगों से सवाल करना नहीं चाहता."

"सवाल? तुम्हें लड़ाई का कोई डर नहीं है?"

"नहीं."

बाबू साहब बहुत देर तक चुप रहे, फिर विस्फोट की तरह बोले, "तुम्हारे फूल का क्या हाल है?"

"राजी-खुशी है."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''सुना है तुम्हारी बस्ती में एक बहुत खूबसूरत लड़की आयी है?''
''मैंने नहीं सुना.''
''नहीं सुना? तुम बस्ती में नहीं रहते?''
''मुझे सुनाई कम देता है.''

पर इतिवार की शाम को उस लड़की की आवाज उस आदमी को सुननी ही पड़ी. वह सोने की तैयारी कर रहा था कि दरवाजे पर दस्तक हुई, बैंत की मूंठ से नहीं, हाथ से, धीमे-धीमे.

दरवाजा खोलकर उसने पूछा, ''कहिये.''
''बहुत अंधेरा है.''
''हां.''
''लड़ाई बहुत तेज हो गयी है.''
''मुझे नहीं मालूम.''
''बहुत डर लग रहा है.''
''किससे?''
''लड़ाई से, अंधेरे से.''
''तो?''
''आपकी कोठरी में सो जाऊं.''
''जमीन पर सोना पड़ेगा, चारपाई एक ही है.''
''कोई बात नहीं, ठीक है.''

वह अंदर आ गयी. उस आदमी ने देखा उसकी बगल में दरी है. उसने दरी बिछा ली और लेट गयी. बोली, ''किसी ने ठीक ही कहा है, एक से दो भले.''

उस आदमी ने जोर देकर कहा, ''बिल्कुल गलत बात, दो से एक भला. मरने में आसानी होती है, जीने में भी.''

इसके बाद बहुत देर चुप्पी रही.

फिर वह उठकर बैठ गयी और बोलने लगी. न जाने क्या क्या—वह कौन है. इस शहर में क्यों आयी है. यहां अकेली क्यों रहती है. दूर परदेस में कौन-कौन अपने-पराये हैं. उसने इस छोटी-सी जिंदगी में कैसे-कैसे दुख उठाये हैं. अब अपने पैरों पर खड़ी होना चाहती है. इसीलिए... फिर अचानक बोली, ''तुम इतना कम क्यों बोलते हो?''

''चाहता हूं, इतना भी न बोलूं.... और तुम्हें शायद मुझसे डर लग रहा है... मुझसे डरने की जरूरत नहीं है... चुप होकर सो जाओ... ठहरो, उठो, मैं जमीन पर सोता हूं, तुम खाट पर सोओ.''

''तुम तो सभ्य भी हो.'' कहकर वह हंस दी.
''मैं ही सभ्य हूं...दोबारा इस तरह का जुमला न बोलना.''

सुबह भी वह घर में ही रही. उसने चाव से फूल देखा, सराहा. वही जिज्ञासा दोहरायी. वह आदमी चुप रहा. लड़की ने अचानक पूछा, ''तुम्हारे घर में कोई नहीं?''

''कहां है, देख तो रही हो.''
''कहीं और?''
''नहीं.''
''मुझे नहीं बताओगे, यह पंखुड़ी लाल कैसे हो गयी?''
''नहीं... और देखो, जासूसी मत करो.कुछ हासिल नहीं होगा.''

वह सकपका गयी. उठकर निकलते हुए बोली, ''शाम को फिर आ जाऊं?''
''मुझसे डर हो तो मत आना.''
''नहीं, आऊंगी.''

वह चली गयी. बस्ती जाग रही है. लोगों ने अखबार खोल लिये हैं. जोर-जोर से पढ रहे हैं. लड़ाई तेज होती जा रही है. बहुत लोग मर रहे हैं. बहादुरी दिखा-दिखाकर. कुछ के लिए तमगों की घोषणा हो रही है. बूढ़ी मां और जवान विधवा — क्या करेंगी तमगों का. पर वीरता के संदर्भ में ऐसी बातें नहीं सोची जाती. जहां तक उसका संबंध है, न उसने कभी वीरता दिखायी है, न कायरता. आज तो उसका सिर्फ एक संदर्भ ही बचा है. 'इस फूल की पत्ती लाल कैसे हो गयी.' क्यों जानना चाहते हैं ये लोग. इनको क्या सरोकार है इस फूल से. क्या ये... और यह लड़की भी. कैसे पूछ रही थी — 'मुझे नहीं बताओगे'. यानी औरों को नहीं बताया, कोई बात नहीं, पर इसे... यह तो खास है. इसे तो बताना ही चाहिए. इनका बस चले तो शायद ये इस लाल पत्ती को नोच कर फेंक दें. इस लड़की से भी इस पत्ती को बचाना होगा. रात को फिर आयेगी. गहरी नींद नहीं सोना है.

गहरी नींद...

उस दिन वह बहुत गहरी नींद सोया हुआ था. वह आयी थी—दिन में भी. और इस पत्ती को छूकर चली गयी थी, उस दिन से यह पत्ती लाल है.

भला जो काम छाया ने किया हो उसे ठोस आदमी कैसे मिटा सकता है.

यह लड़की मिटा सकती है, बशर्ते कि यह छाया में बदल जाये. इसकी छवि उससे कुछ-कुछ मिलती तो है.

वह रोज रात को सोने आने लगी.

रोज पत्ती के बारे में घुमा-फिराकर पूछती. वह टाल जाता. उसे एहसास हुआ, उसके मना करने पर वह उदास हो जाती है. उस पर सकता-सा छा जाता है.

एक दिन उस आदमी ने पूछा, ''सच बताओ, तुम कौन हो?''

वह भयभीत हो उठी. उसे देखती रही, देर तक.

''डरो नहीं, मैं बुरा नहीं मानूंगा. और अगर तुमने सच-सच बता दिया कि तुम कौन हो, तो मैं भी तुम्हें सच-सच बता दूंगा कि यह पत्ती लाल कैसे हुई. पर एक शर्त है, तुम मुझ पर विश्वास करोगी और मैं तुम पर.

''पहले कौन बतायेगा.''
''जाहिर है, तुम.''

सच्चाई का आदान-प्रदान हुआ. उस लड़की ने बताया कि उसे उस भव्य आदमी ने भेजा है—फूल की सच्चाई जानने के लिए. वह यह सहन नहीं कर सकता कि ऐसा फूल... वगैरह वगैरह.

उस आदमी ने भी अपनी कहानी दोहरा दी. यह करिशमा उसका है, जो रोज सुबह सपने में आती है. एक दिन रोशनी में आयी और उसे विशिष्ट बना गयी. उस आदमी ने यह भी कहा कि उसकी शक्ल बिल्कुल तुमसे मिलती है.

''मुझसे!''
''हां! मैं समझ रहा हूं, तुम्हें मेरी कहानी पर विश्वास नहीं है.''
''और तुम्हें?''
''मैं पहले ही जानता था.''
''ओह!''

एक लंबे समय तक चुप रहकर उस आदमी ने कहा, ''मैं अपनी बात साबित कर सकता हूं.''

''साबित कर सकते हो? कैसे?''

एक बार फिर वह आदमी बहुत देर चुपचाप खड़ा रहा. फिर खिड़की के पास गया और गमला उतार लाया. लाकर उस लड़की के सामने रख दिया, बोला — ऐसे जैसे गुंबद में खड़ा बोल रहा हो, ''लाल पंखुड़ी को छुओ.''

उस आवाज की उपेक्षा करना मुश्किल था. रोबो की तरह लड़की के हाथ ने उठकर पंखुड़ी को छू दिया.

और पलक झपकते ही पंखुड़ी का लाल रंग पीला पड़ गया.

लड़की ने भयभीत होकर उस बदलते रंग को देखा. पर सकते की हालत में बहुत देर वह खड़ी नहीं रह सकी. उस आदमी ने जोर से उस गमले को पटक कर चूर-चूरकर दिया.

और पहली बार वह आदमी जोर से ठहाका मारकर हंसा, बोला, ''पर्दा गिर गया, मदाम, घर जाओ, आराम करो.''

अजनबी हो जाने के बावजूद उस लड़की ने पूछा, ''और तुम?''

''मैं बाहर निकालकर देखूंगा, क्या हो रहा है.'' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेवकूफी की कीमत

□ 'लेसू सेंत नोवेलेस नोवेलेस' से

बहुत दिन पहले की बात है, फ्रांस में एक आदमी रहता था. उसका काम था लोगों से कर की उगाही करना. बहुत दिनों से उसकी नजर अपने पड़ोसी की खूबसूरत बीवी पर लगी हुई थी. पर वह उसकी तरफ देखती ही नहीं थी. वह भी था कि ढीठों की तरह उसके पीछे लगा रहा और आखिरकार उसे सफलता भी मिल गयी. एक दिन पड़ोसी की बीवी ने कह ही दिया, "ठीक है, मेरे पति को सफर पर जाने दो. बस पहली ही रात तुम्हारी होगी."

कुछ दिन बाद ही यह मौका आ भी गया. उधर पति घर से चला, इधर वह पड़ोसिन तेज कदमों से चलती उस उगाहक के पास बिस्तर में जा पहुंची. खाने-पीने का सामान उसने पहले से ही इक्ट्ठा करके एक थाली में रख दिया था कि भूख लगे, तो रसोई तक न जाना पड़े.

लेकिन उनका खेल अभी शुरू ही हुआ था कि दरवाजे पर जोर-जोर से दस्तक होने लगी. साथ ही पड़ोसी महोदय की आवाजें आने लगीं, "दरवाजा खोलो!" वह अप्रत्याशित रूप से लौट आया था.

उगाहक ने महसूस किया कि अगर उसने तुरंत दरवाजा न खोला, तो पड़ोसी को शक हो जायेगा. वैसे भी पड़ोसी की बीवी का मन जीतने के लिए उसने इस तरह के अघोषित-अप्रत्याशित आवागमन को खुद ही बढ़ावा दे रखा था. सो, उसने महिला से कहा कि वह तुरंत बिस्तर में छिप जाये. खुद वह उठा और उसने दरवाजा खोल दिया. इसके बाद वह तुरंत अपने बिस्तर में जा घुसा.

"मैं अभी थोड़ी दूर ही पहुंचा था कि मुझे याद आया, मुझे तुमसे एक गुजारिश करनी थी," पड़ोसी शयनकक्ष में घुसते हुए बोला, "बात यह है कि मेरी बीवी बड़ी डरपोक है जरा-जरा सी बात से घबरा जाती है. मेरी गैरहाजिरी में उसका खयाल रखना."

"अरे, यह भी कोई कहने की बात है!" उगाहक ने बिस्तर पर लेटे-लेटे ही जवाब दिया. "अगर मैंने शादी की होती, तो मुझे यकीन है, तुमने भी मेरी बीवी का खयाल रखा होता."

लेकिन तभी पड़ोसी का ध्यान मेज पर रखे खाने-पीने के सामान की ओर गया. फिर उसकी नजर घूमी और उसे लगा, बिस्तर पर कोई और भी है. वह शरारत से बोला, "आज की रात तो लगता है, मेरी बीवी का खयाल रखने का तुम्हारे पास वक्त नहीं होगा! पड़ोसी महोदय, जरा हम भी उसकी सूरत देखें, जिसे आपने अपने बगल में दबा रखा है!"

इतना कहने के साथ ही पड़ोसी ने शमादान उठाया और आगे बढ़ा. उसकी बीवी थर-थर कांप रही थी. पड़ोसी ने चद्दर हटाने की कोशिश की, मगर उगाहक ने उसे रोक दिया, "यह भी कोई तरीका है!" वह बोला, लेकिन पड़ोसी किसी जिद्दी बच्चे की तरह अड़ गया. उससे पीछा छुड़ाना मुश्किल हो गया.

उगाहक ने खैर, चेहरा तो नहीं देखने दिया, एक झलक पेंदी की दिखा दी.

"अरे!" पड़ोसी बोला, "कमाल है! खुदाकसम, अगर मुझे यकीन न होता कि मेरी बीवी अपने घर में सो रही है, तो मैं यही कहता, मैं अपनी बीवी का ही पृष्ठभाग देख रहा हूं!"

"क्या कह रहे हो!" उगाहक बोला. "अपनी वफादार बीवी के बारे में ऐसी बात! जाओ, अपने घर जाओ. तुम्हारी बीवी तुम्हें वहीं मिलेगी."

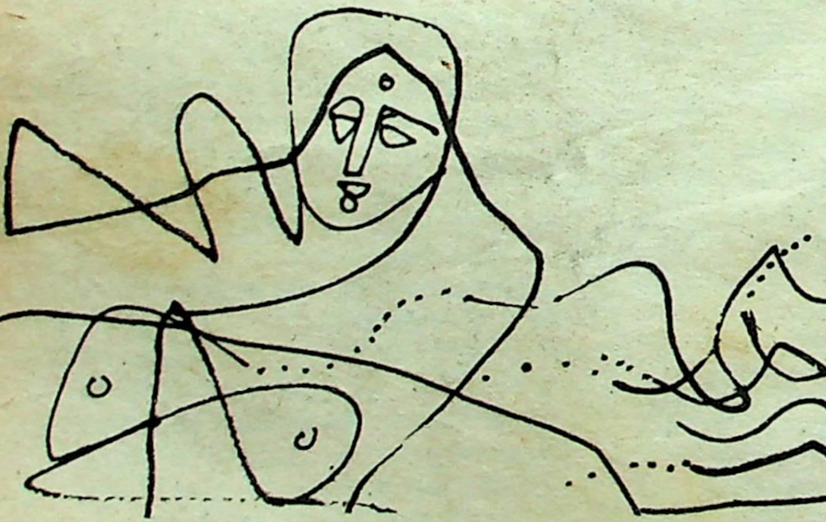

"जाऊंगा तो मैं हूं ही!" पड़ोसी ने कहा. "सच बात बताऊं तो जो नजारा मैंने अभी देखा है, उसने मेरी भूख जगा दी है... और इस भूख की तृप्ति बीवी से ही करनी पड़ेगी." इतना कहकर वह वहां से चल दिया.

उगाहक सिर झटककर रह गया. मगर पड़ोसी की बीवी के पसीने छूट रहे थे.

"अब जल्दी से भागो!" वह बोला. "पिछले दरवाजे से चली जाओ. उससे पहले पहुंच जाओगी." फिर जब तक वह अपने कपड़े समेटती रही, वह उसे समझाता रहा कि उसे अपने पति से किस तरह बात करनी है.

बीवी बस किसी तरह घर पहुंची ही थी कि उसे पति की दस्तक देती आवाजें सुनायी देने लगीं.

"कौन है?" वह कुछ गरमी से बोली.

"तुम्हारा प्यारा खाविंद," उसने जवाब दिया.

"मेरा खाविंद! मेरा खाविंद तो यात्रा पर गया है!"

"दरवाजा खोलो, प्रिय!" वह बोला. "मैं तुम्हारे बगैर एक रात भी नहीं रह सकता."

"गुंडे! बदमाश!" उसने जवाब दिया. "तुम जो भी हो, मैं तुम्हें अंदर नहीं आने दूंगी." उसने दरवाजा नहीं खोला और बेवकूफ पति को सारी रात दरवाजे के बाहर लगे पत्थर पर ही बिता देनी पड़ी.

सुबह बीवी ने दरवाजा खोला और पति को देखते ही बड़बड़ाने लगी, "शैतान की औलाद! तुमने मेरा इम्तहान लेने के लिए सफर पर जाने का बहाना बनाया! तुम इस लायक हो ही नहीं कि मेरे जैसी पवित्रा के पति कहला सको!" वह लगातार गुर्राती रही. पति की हालत यह हो गयी कि उसका रात भर का गुस्सा तो काफूर हो ही गया, वह माफिया मांगने लगा.

"मुझे अपनी बेवकूफी का अहसास हो रहा है," वह रुआंसा होकर बोला, "पिछली रात मैं दरअसल एक ऐसी जगह होकर आया था, जहां व्यभिचार चल रहा था. मैं आपा खो बैठा था."

"तो यह बात है!" बीवी बिफरकर बोली, "नीच! कामी! तुम अपनी वासना को किसी वेश्यालय में तुष्ट करके सीधे अपनी पवित्रा पत्नी के पास चले आये! शर्म नहीं आती!"

"बस, बस! अब और नहीं," वह बोला. "अब और कुछ मत कहना."

मन ही मन मुस्कराती, वह धीरे-धीरे शांत होने का नाटक करती रही. आखिर जब उसके पति ने वादा किया कि अब वह अपनी बीवी पर कभी शक नहीं करेगा, तब जाकर उसने उसे माफ किया.

उसके बाद पति की यात्राएं बढ़ गयीं और, पत्नी की मनमानी. □

प्रस्तुतिकरण : सुदीप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दूजे के लिए

बाला दुबे

आखिर हैंपशायर के लुहार की उस लड़की पर शक करता भी कौन. साधारण चलन, सादा लिबास, मन मौजी. उसे शाम को 'पब' में बैठकर खाने-पीने का शौक था. और फिर उसे शीघ्र ही नौकरी भी मिल गयी और वह ब्रिटिश नौ सेना की महत्वपूर्ण शाखा 'अंडरवॉटर वैपंस ऐस्टिब्लिशमेंट' में जो कि पोर्टलैंड में था. और वहीं पर उसे नौसेना का सेवा निवृत्त 'पैटी आफिसर' हैरी होटन टकराया था.

वैसे हैरी होटन परशु से परशुराम बना था. सोलह वर्ष की आयु में नाविक बना और फिर तेईस वर्ष बाद रिटायर हो गया. इसके बाद ही वह ब्रिटिश नौ सेना के वॉरसा स्थित नेवल अटैची में लिपिक बन गया. मोटी तनख्वाह, मुफ्त की शराब ने उसे लालची बना डाला था और सबसे पहले वह पोलेंड की एक लड़की कैरीजिया से टकराया. कॉफी की तस्करी से श्री गणेश किया और कमाई को 'रात्रि-जीवन' में खर्च करने लगा. हैरी की चखचख उसकी पत्नी पैगी से भी होने लगी पर हैरी बदस्तूर अपने धंधे में फंसा रहा. और जब वह पोलेंड से पोर्टलेंड में स्थित वैपंस विभाग में आया तो उसका साक्षात हैंपशायर के लुहार की लड़की ईथल गी से हो गया. ईथल का प्यार का नाम 'बंटी' था. और तभी पोलेंड की पुरानी मित्रा कैरीजिया के मित्र का फोन हैरी के पास आया. पहले पहल पैनिसिलिन का अवैध धंधा शुरू किया गया और उसमें घाटा खाकर ही बेहतर धंधे की जुगाड़ बनायी गयी—जासूसी का तानाबाना. हैरी की मुलाकात फिर रूसी एजेंट गॉर्डन लॉसडेल से हुई थी.

उन दिनों ब्रिटिश नौसेना और 'नेटो' कुछ नयी पनडुब्बियों पर अनुसंधान कर रहे थे और रूस इस क्षेत्र में बहुत पिछड़ा हुआ था. और तभी जासूसी का ताना-बाना बुन लिया गया. बंटी अनुसंधान विभाग में थी ही. उसे जाल में फंसाया गया और फिर एक दिन बंटी को रूसी एजेंट लांसडेल को अमरीकन दूतावास का कमांडर एलक जोंस बतलाकर मिलवाया भी गया. बंटी से यही कहा गया कि पनडुब्बी की खबरें इंग्लैंड के मित्र देश अमरीका को ही जा रही हैं. लांसडेल के साथ अमरीकन दंपत्ति मिस्टर और मिसेज क्रोगर या कोहन भी सोवियत एजेंट थे. कई हजार पाउंड पाकर हैरी जामे से बाहर होने लगा—नयी कार, नया ग्रामोफोन, रेस्टोरेंट में खाना-पीना.

सबसे पहले एक नौसेना के सुरक्षा अधिकारी का माथा ठनका था. फिर बंटी भी तो हैरी से रोज ही मिलती थी. कीमती शराब-शेंपेन से शाम संवारी जाती, पैसा पानी की तरह बहता. और उधर हैरी के घर पर उसकी पत्नी पैगी कुढ़ती रहती. वैसे पैगी ने ही पीछे लगे सुरक्षा अधिकारी को एक दिन एक बंडल दिखलाया था—ऐडमिरोलटी के दफ्तर के कुछ महत्वपूर्ण कागजों का छोटा-सा बंडल. बंडल देखते ही वह अधिकारी सतर्क हो गया और उसी दिन से जाल फैलाना शुरू कर दिया. मामला जासूस अधीक्षक जार्ज स्मिथ के हाथ में पहुंच गया और ब्रिटिश जासूस संस्था एम.आई.ई. एवं स्पैशल ब्रांच ने भी हाथ बंटाना शुरू कर दिया.

सन् 1962 की बात है. उस दिन बंटी एक 'शापिंग बास्कट' लेकर निकली थी. कुछ बाजार से सामान खरीद इस टोकरी में भर लिया गया पर टोकरी के नीचे नौसेना विभाग की चार महत्वपूर्ण फाइलें और खींची हुई 'फिल्म-रील' पड़ी थी. लंदन के 'ओल्ड विक' नामक थियेटर के पास ही हैरी और बंटी मिले थे. जब कि टोकरी का आदान-प्रदान हो रहा था तभी जासूस अधीक्षक जार्ज स्मिथ के दल ने दोनों को धर दबोचा. फिल्म को हाल के हाल धुलवाया गया जिसमें ब्रिटिश नौसेना के करीब तीन सौ जहाजों और सामान के चित्र थे. सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि अणु-पनडुब्बी 'ड्रेडनॉट' के चित्र भी खींचे गये थे.

हैरी होटन को चीफ जस्टिस लॉर्ड पार्कर ने पंद्रह वर्ष की सजा सुनाई थी-"तुमने 'हर मेजेस्टी' की नौ सेना के रहस्य बाहर के देश को भिजवाने का प्रयास किया." बंटी उर्फ ईथल एलिजाबेथ गी को भी पंद्रह वर्ष की सजा सुनाई गयी थी.

दस वर्ष बाद बंटी और हैरी एक दिन रिहा किये गये थे. जेल के फाटक से बाहर निलकते ही वे दोनों गिरजे की तरफ चल पड़े थे. और वहीं जाकर उन्होंने पादरी से कहा था 'हम दोनों शादी करना चाहते हैं, फादर.'

फिर हाथ में हाथ डाले वे दोनों चल पड़े एक नये जीवन की पगडंडी बनाने. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उर्दू की सुपरिचित कथाकार, किस्सागोई शैली में भीतर तक मार करने वाली कहानियां लिखती हैं...
संपर्क : 3 इंडस कोर्ट, चर्च गेट रोड़ नं.-1, बंबई-1

इस्मत चुगताई

सोने का घूंट

"हैलो डार्लिंग."

लीना ने अपने चमकदार दांत और भी चमकाये. अपने ब्वॉय फ्रेंड के साथ बहती हुई निकल गयी. हम जितनी भी भली बीवियां वहां फूलदार सोफों पर विराजमान थीं, सुलगकर रह गयीं–दीदा तो देखो नामुराद का!. हेलो डार्लिंग की सगी!.

लोग समझते होंगे, वह हमारी कोई सगी-सौतेली होगी, या कम से

सूती कुर्ती और चूड़ीदार पायजामा-अब तो खैर दुपट्टा बिल्कुल बेकार चीज बन गया है. जब चुन्नी-दुपट्टे का फैशन था तब भी वह दो मिनट बाद उसे कहीं रखकर भूल जाया करती थी. कुछ आगा-पीछा भी ज्यादा पुरकशिश नहीं. मगर है मनहूस पहले दर्जे की वो.

शादी, बल्कि शादियां रचा चुकी है. मौसम के हिसाब से शौहर बदलती है. भटनागर साहब हर पार्टी में अपनी मौजूदा सुघड़ और हसीन

लीना कभी भी उम्र नही छिपाती, उम्र वे छिपाते हैं जिनके पास सिवाय जवानी के और कुछ न हो. लीना के पास दुनिया है. उम्र के कभी उसे धक्का नहीं खाना पड़ा, उसके आशिकों में ज्यादातर कमसिन लड़के हैं.

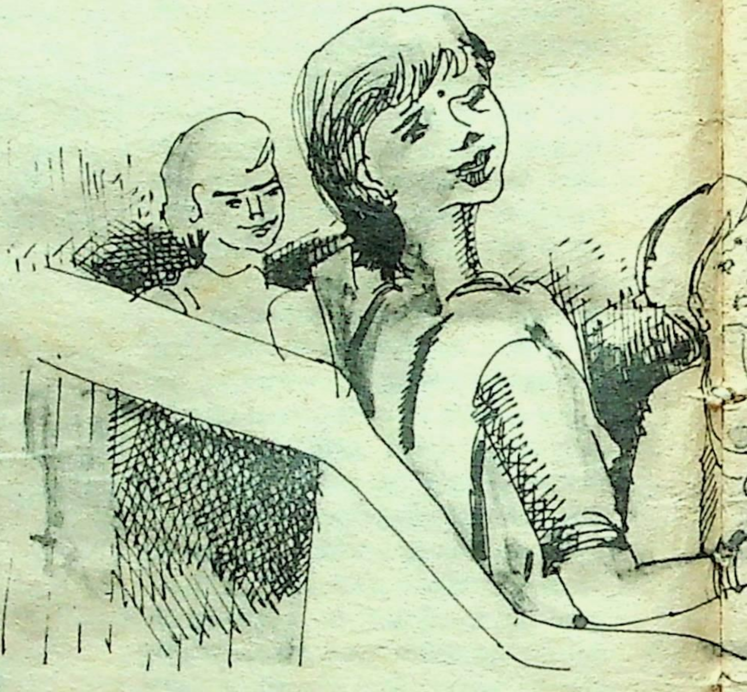

कम सहेली तो होगी-खाक भी नहीं. मगर मुसीबत तो ये है कि हम सबके शौहर उसके बाप के नौकर हैं. इसका ये मतलब नहीं कि वे कोई मेहतर, बैरे हैं, बड़ी-बड़ी नौकरियों पर लगे हुए हैं-तभी तो उसे झेलते हैं. वैसे भी किसी पार्टी में उसके बगैर रंग नहीं जमता-इसलिए उसे बुलाना भी पड़ता है और जहर के घूंट पीकर उसके यहां जाना भी पड़ता है-अगर कोई भूल की आड़ लेकर उसे न बुलाये तो पार्टी ही गारत हो जायेगी-तमाम वक्त मर्द उसका ही नाम लेकर ठंडी सांस भरते रहेंगे. कोई कबूलता तो खैर नहीं मगर हकीकत ये है कि मर्द जात उस पर बुरी तरह लट्टू है. वैसे सब अपनी बीवियों के डर के मारे उसके जन्म में थूकते रहते हैं.

न जाने उस कमबख्त में क्या बात है-'सूरत न शक्ल, भाड़ में से निकल' वाली हालत है-कुछ बनती-संवरती भी नहीं. बस गंदे से कपड़े

बीवी के साथ उसकी पार्टियों में आते और उस पर सदके वारी जाते हैं. लीना के तलाक के बाद भी उनकी नौकरी उसके बाप की एक फर्म में कायम रही. वह जिसे छोड़ती है, उनका दिल जरूर तोड़ती है, पेट पर लात नहीं मारती. उसके सब भूतपूर्व शौहर अलग-अलग फर्मों में डटे हुए हैं और पाबंदी से उसकी पार्टियों में हाजिरी देते हैं-वह बगैर पलक झपकाये उन सबसे फ्लर्ट करती है-उनकी बीवियां मुस्कराकर सब बर्दाश्त करती हैं, लेकिन पीठ पीछे उसे कच्चा खा जाने की धमकियां देती हैं, वह उन सबको 'हैलो डार्लिंग' कर डालती है. भटनागर साहब भूखी-भूखी नजरों से उसे तकते हैं. फिर बीवी की निहायत प्राइवेट, चुटकी पर दुबक लेना. वाकई 'बिच' है. ऐसी औरतों को समझदार लोग उछाल छक्का कहते हैं, हालांकि लीना ने अभी सिर्फ पंजे उछाले हैं, उसके पांचवें शौहर से उसका इश्क मेरी ही मदद से फला-फूला था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके हर इश्क पर यही शक होता है कि ये उसका पहला और आखिरी इश्क है-उन दिनों उसकी हालत जुनूनी-सी हो जाती है. शादियों से अब कुछ दिन से बोर-सी नजर आती है. छठे से अभी उसने बंधन नहीं बांधा है. उसके शौहरों की लत से ज्यादा कलेजा फाड़ ब्वॉय फ्रेंड की रद्दोबदल है.

''अच्छा तो आनंद से कब शादी कर रही है?'' एक दिन मैं उसके मौजूदा ब्वॉय फ्रेंड के बारे में पूछती हूं.

''ना बाबा- तौबा मेरी.'' वह कान छूकर कहती है.

''क्यों? इस तरह उसके साथ रहते हुये शर्म नहीं आती?''

''क्यों, क्या बुराई है इसमें?''

''कोई बुराई नहीं-आनंद के मर्दाना हुस्न की लपक से कौन इंकार कर सकता है.''

''तो फिर क्यों कर लूं शादी?''

''एक दिन जी भर गया तो छोड़कर चलता बनेगा.''

''और जो शादी के बाद छोड़कर चला गया तो?''

''वह ऐसा कमीना नहीं लगता.''

''बलराम भी बड़ा शरीफ लगता था.''

''उसने तुम्हें नहीं छोड़ा, तुमने ही उसका पत्ता काट दिया, दीपक के चक्कर में पड़कर.''

''तो क्या करती? दीपक के बगैर मैं जिंदा नहीं रह सकती थी.''

''और पांच महीने बाद उसे दुतकारकर जीने लगी.''

लीना को कुछ बदहजमी होने लगी है. वह हर खेल से थोड़े दिन बाद बोर हो जाती है.

एक रोज मैंने लीना से कहा, ''असल बात ये है कि लोग-यानी मर्द लोग जो तुम्हारे करीब आते हैं; उन्हें एहसास-कमतरी होने लगती है-तुम उन्हें जो पोस्ट दिलवाती हो वह खुद तुम्हारी पोस्ट के लगे की नहीं होती, हालांकि दुनिया जानती है तुम खाक भी काम नहीं करती, सारे यूरोप के बिजनेस ट्रिप अय्याशी के लिए होते हैं, लेकिन कंपनी के हिसाब में...''

''फिर मैं अपने पापा की बेटी जो हूं. ये गधे इतना क्यों नहीं समझते! मैं भी डायरेक्टर हूं, बड़ी शेयर होल्डर भी...''

''वैसे तुम्हारी अंधी मासी भी तो हिस्सेदार है, दोनों मामा और ग्वालियरवाली बुआ भी?''

''और क्या, ये सब कुछ तो हर कंपनी में करना पड़ता है. मेरी अकेली जान-खाली मेरे नाम से कितने शेयर खप सकते हैं? यही तो कंपनियों की मुसीबत है. सारे कुनबे को लपेटना पड़ता है. क्या कानून निकाल दिये हैं-सुना है अब सौ के नोटों की गड़बड़ होने वाली है. पापा ने तो दस रुपये के नोट जमा करने शुरू कर दिये हैं...'' वह मुझे अपनी फाइनेंसियल मुश्किलें समझाकर बोर करने लगी. इससे दिलचस्प तो उसके आशिकों के किस्से हैं- उसके यहां ब्लैक आशिकों में भी चलती है. वैसे आफिसियल ब्वाय फ्रेंड तो आनंद है. मगर दो-एक से साइड में भी मामला चल रहा है.

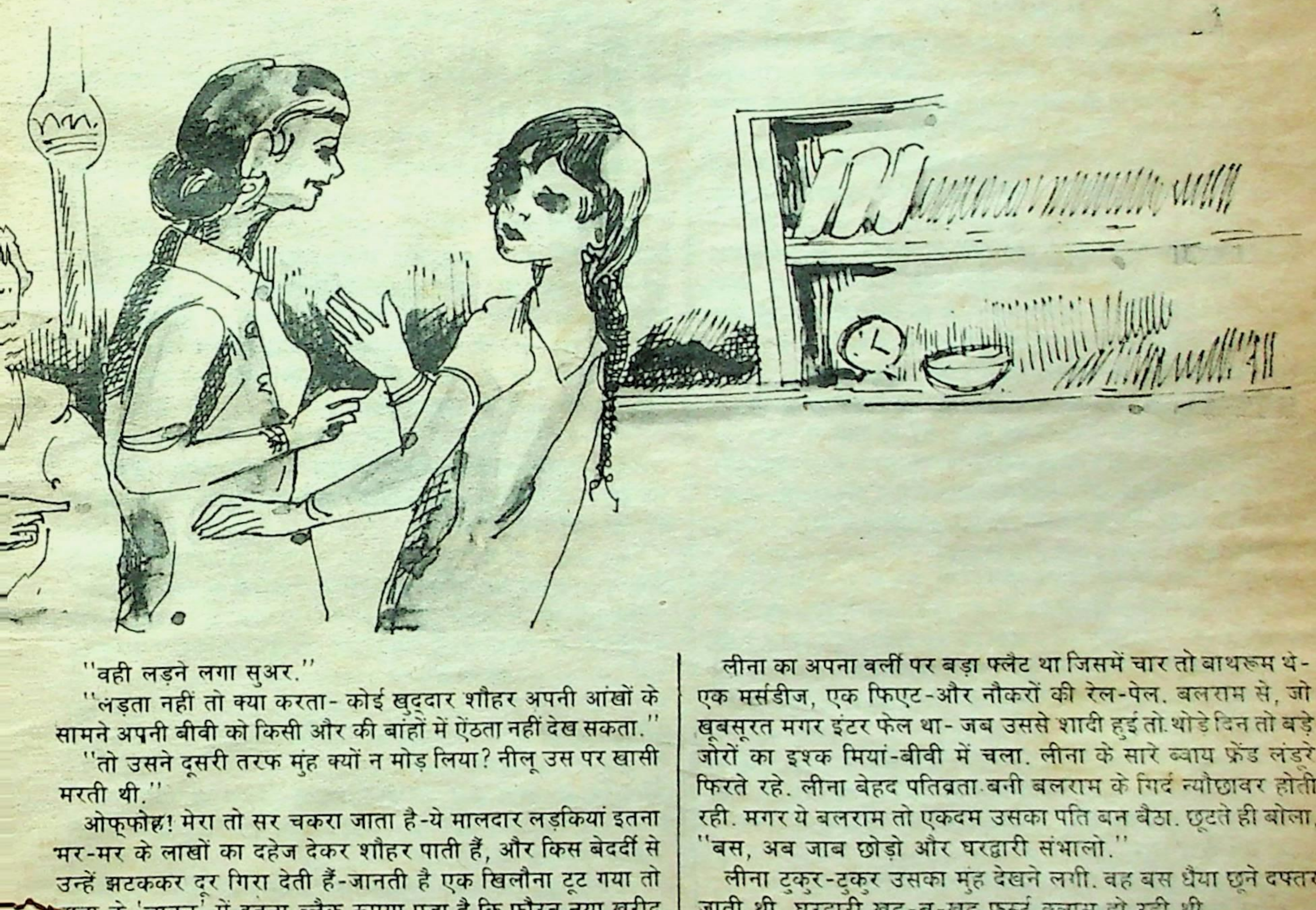

''वही लड़ने लगा सुअर.''

''लड़ता नहीं तो क्या करता- कोई खुद्दार शौहर अपनी आंखों के सामने अपनी बीवी को किसी और की बांहों में ऐंठता नहीं देख सकता.''

''तो उसने दूसरी तरफ मुंह क्यों न मोड़ लिया? नीलू उस पर खासी मरती थी.''

ओफ्फोह! मेरा तो सर चकरा जाता है-ये मालदार लड़कियां इतना मर-मर के लाखों का दहेज देकर शौहर पाती हैं, और किस बेदर्दी से उन्हें झटककर दूर गिरा देती हैं-जानती है एक खिलौना टूट गया तो पापा के 'लाकर' में इतना ब्लैक रुपया पड़ा है कि फौरन नया खरीद लेंगा. उधर बेचारी गरीब लड़कियों को वर जुड़ता ही नहीं. वही अनाजवाला मामला है. कहीं लोग भूखे मर रहे हैं-कहीं स्वादिष्ट खानों की ज्यादती से हाजमा खराब हो रहा है. शादी के मामले में वाकई अब

लीना का अपना वर्ली पर बड़ा फ्लैट था जिसमें चार तो बाथरूम थे- एक मर्सडीज, एक फिएट-और नौकरों की रेल-पेल. बलराम से, जो खूबसूरत मगर इंटर फेल था- जब उससे शादी हुई तो थोड़े दिन तो बड़े जोरों का इश्क मियां-बीवी में चला. लीना के सारे ब्वाय फ्रेंड लंडूरे फिरते रहे. लीना बेहद पतिव्रता बनी बलराम के गिर्द न्यौछावर होती रही. मगर ये बलराम तो एकदम उसका पति बन बैठा. छूटते ही बोला, ''बस, अब जाब छोड़ो और घरद्वारी संभालो.''

लीना टुकुर-टुकुर उसका मुंह देखने लगी. वह बस धैया छूने दफ्तर जाती थी. घरद्वारी खुद-ब-खुद फर्स्ट क्लास हो रही थी.

''तुम्हें मेरी तनख्वाह में गुजारा करने की आदत डालनी चाहिए.'' बलराम ने एक और बात साफ की.

लीना का जी चाहा फट से कह दे-'तुम्हारी नौकरी भी तो मेरे दम से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है.'.

"तुम समझते क्यों नहीं?" लीना ने समझाना चाहा.

"मैं बीवी की कमाई खाना हराम समझता हूं."

"बीवी की कमाई?" लीना जोर से हंस पड़ी, "डार्लिंग, तुम्हारी तनख्वाह से तो मकान का किराया भी पूरा न होगा."

"कुछ भी हो, कहीं सबर्ब में ले लेंगे."

"सबर्ब में पापा के बारह फ्लैट हैं, मगर खाली एक नहीं."

"तुम्हारे पापा के फ्लैट में मुझे दिलचस्पी नहीं." बलराम अजीब-अजीब बातें कर रहा था, "वर्ली पर मेरे दोस्त का दो कमरों का फ्लैट है."

"दो कमरे और ड्राइंग, डाइनिंग?"

"नहीं, बस दो कमरे."

"डोंट बी सिली डार्लिंग." लीना और हंसी.

पहले झक-झक, फिर गाली-गलोच, मार-पीट—कभी किसी ने लीना को झूठी उंगली न छुआयी थी. बलराम ने जो उसकी ठुकायी की तो कितना अजीब-सा लगा यानी काफी थ्रिलिंग लगा. वह बड़ी रोमांटिक-सी बनी अपने दोस्तों को इस दिलचस्प तजुर्बे के बारे में बताती फिरी. मगर जब ठुकाई रोमांस की हदों को तोड़कर सीधी-सादी जूतेकारी रह गयी तो लीना रोती-पीटती विलायत के ट्रिप पर चली गयी. बलराम को निकाला नहीं गया, हांगकांग की ब्रांच में ट्रांसफर कर दिया गया. शादी रजिस्टर्ड हुई थी, फेरे भी डलवाये थे, न जाने क्या तिकड़म लगायी कि फट से तलाक हो गया.

लीना जब फोरन ट्रिप से लौटी तो एक खुर्रा हुआ-सा विलायती झमेला अपने साथ लायी. बड़ा सब पर रोब बैठा— फॉरेन माल का मार्केट दिन ब दिन चढ़ता ही जाता है. मगर ये विदेशी माल अपने देशी माल से भी ज्यादा कच्चा निकला-डीन को मैल से बड़ा प्यार था. मैल को वह हिंदुस्तान की देन समझता था. ये जताने के लिए वह देशी-विदेशी का फर्क मिटाना चाहता है, इतना मैला रहता कि दूर से ही नाक सड़ जाती.

डीन जितना हिंदुस्तानी बनने की कोशिश करता, उतना ही लीना विलायती बनने पर तुली थी. डीन धोती और बड़ा-सा पग्गड़ बांधे फिरता. लीना मिनी से मिनी स्कर्ट पर आमादा थी. दोनों में नजदीकी पैदा होने की जगह अजीब उल्टी किस्म की दूरी पैदा हो गयी. डीन पीता खूब खुल के था. फिर वह कुछ दूसरी लतों में भी पड़ गया था.

डीन कोई उठाईगीर नहीं था. अपने मां-बाप का इकलौता था. उनकी मोहब्बत और दौलत से ऊबकर घर से बे-घर हो गया था. अब वह दीपक को विलायत ले जाने की धमकी देने लगा. मगर दीपक एक दफा वहां धक्के खा आया था. उसे यकीन था, डीन के बाद उसको यहीं अच्छा चांस मिलेगा. मगर डीन से तलाक लेने से पहले ही लीना का दिल प्रमोद पर मचल गया.

वैसे लीना ने तो नर्वस ही पढ़ाई छोड़ दी थी. अंग्रेजी फर्राटे से आती ही थी. फ्रेंच भी आ गयी-थोड़ी जर्मन भी चलती है. उसे तो मिसाली बीवी होना चाहिए था. मगर दौलत ने उसका दिमाग खराब कर रखा है. यही उसके शौहरों और आशिकों की बड़ी मुसीबत है. वे उससे ज्यादा उसकी दौलत पर ही परवानावार गिरते हैं और फिर दौलत ही उनकी खुशियों की दुश्मन साबित होती है.

"अच्छा, प्रमोद में क्या ऐब था?" एक रोज मैंने लीना से पूछा.

"मिस्टर इंडिया था-बड़ा ऐंठता था अपने डंड किये हुए बाहुओं पर. कमबख्त पीता बहुत था. मेरी मर्सडीज में लौंडिया भरे घूमता-फिरता था. मैंने सब कुछ झेला."

"खाक झेला. तुम क्या बैठी इन दिनों जाप कर रही थी?"

"तो क्या पागल हो जाती- अगर वह मुझे इतना परेशान न करता तो कसम से, मैं उसके लिए सबको भगा देती, मगर उसके दिमाग में तो ढाई हजार की नौकरी ने गोबर भर दिया था, सांड कहीं का. मुझे बेबात मारता था. कोई बात नहीं. मैंने ये भी सहा... मगर उस दिन पापा ने बड़े जोर की दावत दी थी. और वह अपनी बिच के साथ पड़ा था. और वह भी मेरे अपने डबल बेड पर-तुम्हीं बताओ, फिर मैं क्या करती?"

"क्यों,तुम्हें जमा हुआ घर, शौहर और प्यारे बच्चे पसंद नहीं?" मैंने पूछा, वैसे शौहरों को पसंद करने का उसके पास काफी सबूत था.

"अरे पसंद क्यों नहीं? बच्चे तो मेरी जान हैं- कहां है आशू आज, दिखायी नहीं दिया. बुलाओ ना."

आशू भागा हुआ आया और वह उस पर न्यौछावर होने लगी.

"उफ मेरी जान, मेरे चुन्नू-मुन्नू मामा-आशू राजा—ओह, आई लव चिल्डेन."

"तुम्हें खुद मां बनने का शौक नहीं?"

"कोई फर्क पड़ जाता है?"

"बिल्कुल-अपनी औलाद की और ही बात होती है."

"मुझे तो फर्क नहीं लगता."

"तुम ममता का मजा क्या जानो."

"जानती हूं, कुछ ज्यादा चटपटा नहीं."

"तुमने कभी किसी को नौ महीने कोख में नहीं पाला. किसी के नन्हें-नन्हें हाथ अपने दिल पे नहीं महसूस किये." मैं बड़े जज्बाती जुमले बघारने लगी.

"शट अप! डंकी मेरा बाबा है तो."

"ऐसा मुंह बोला बाबा नहीं. तुम्हारी मम्मी ने गोद ले लिया तो तुम्हारा कैसे हो गया?"

"तुम गधी हो. सच, तुम्हें कुछ नहीं मालूम."

"क्या?"

"यही कि डंकी मेरे पेट का बच्चा है-लगता नहीं कि मेरे इतना बड़ा लड़का हो सकता है?"

"क्या बक रही हो? डंकी तेरह-चौदह साल का है."

"तो मैं भी तो इकत्तीस साल की हूं-जब तो मैं बिल्कुल छोटी-सी थी."

लीना कभी अपनी उम्र नहीं छुपाती-उम्र वे छुपाते हैं जिनके पास सिवाय जवानी के और कुछ न हो-लीना के पास दुनिया है. उम्र से कभी उसे धक्का नहीं खाना पड़ता- उसके आशिकों में ज्यादातर कमसिन लड़के हैं."

"वह पारसी लड़का था. पापा बोले, पारसी नहीं चलेगा."

"जमशेद शहेर भी तो पारसी था—उससे शादी क्यों करने दी?"

"पापा तो बहुत बिगड़े-हम लोगों ने जनेवा में शादी की थी."

"तुम्हें उस पारसी लड़के से मोहब्बत थी?"

"बहुत-मगर जब पेट फूला तो सब प्रेम-वरेम रफूचक्कर हो गया."

"हम समझते थे बलराम तुम्हारा पहला शौहर था-उसे इस झगड़े का पता था?"

"अरे उसी ने तो सब कुछ किया था. वरना मैं तो पागल हो जाती."

लीना ने आशू को गोद से उतार दिया और बेचैनी से टहलने लगी.

"और दीपक?"

"दीपक—दीपक ने तो बोर कर दिया. अल्टीमेटम दिया है जहर खा लेगा, छत पर से कूदकर जान दे देगा."

"वरना शादी करो?"

"हां—कहता है, लोग मुझे तुम्हारा रखैल कहते हैं."

"सच बताओ, तुम्हारा उससे ताल्लुक है ना?"

"दीपक से? तोबा करो, वह तो छक्का है-डीन के काम का होगा."

"अच्छा, वह जो सितार का शौक चर्राया था?"

लीना कहकहा मारकर लोट गयी.

"तो तुम्हें पता है इसका? कसम से, अब कभी उसका प्रोग्राम सुनती हूं तो कलेजे पर घूंसा-सा लगता है."

"खाक."

"डंकी की कसम, उन दिनों तो सच्ची पागल-सी हो गयी थी. एक वही ऐसा है जिसका जख्म हरा है. तीन साल गुजर गये, मगर ऐसा लगता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे कल की बात हो. फिर भी अगर धर्म छोड़ने की बात न होती तो... मगर पापा ने कहा...."

"ओफ़्फोह. भई, तुम्हारे पापा ने बड़ा नाक में दम किया है."

"क्यों? मैं खुद बाबा की मर्जी के बगैर कोई काम नहीं करती. उनसे बड़ा बिजनेस मैन इस सदी में तो पैदा नहीं हुआ. बस एक लुटिया और धोती लेकर बंबई आये थे. कालबा देवी में अब तक खोली मौजूद है. पापा उसका किराया देते हैं. जब कोई मुश्किल पड़ती है तो वही पुरानी लुटिया और धोती लेकर कई-कई दिन के लिए वहां चले जाते हैं. एक काली कढ़ाई और पुरानी लकड़ की डोई अब तक पड़ी है. वहीं अपने हाथ से खाना बनाकर खाते हैं. वह कोठरी ऐसी भाग्यवान है कि उनकी हर विपदा वहां कट जाती है. जिस जमाने में उन्हें मीना कुमारी से प्रेम हो गया था सारी-सारी रात जाप करते थे."

"मगर मीना कुमारी तो नहीं मिली."

"जर्मनी का इतना कंट्रेक्ट तो मिल गया कि पापा का सारा इश्क गायब हो गया.

मैं फिर उसके आशिकों की बात ले आयी.

"अच्छा भई, रमेश से क्यों खटपट हो गयी?"

"रमेश उसका असली नाम थोड़े ही था."

"फिर?"

"अब्दुल सचार था."

"पापा बीच में कूद पड़े? धर्म की बात आड़े आ गयी?"

"नहीं जी, पापा को मालूम है मेरी तबीयत किसी ने ख़ट्टी हो गयी तो फिर नहीं जमूंगी. दूसरे पूछताछ से ये भी पता चला कि वह जब फट से मुझे तलाक दे सकेगा. मैं चाहूंगी तो झमेले होंगे. फिर एक मुश्किल और भी थी."

"वह क्या?"

"वह सर में तेल बहुत डालता है." वह इधर-उधर देखकर राजदारी से बोली, "और वह भी शुद्ध सरसों का. सारा तकिया चिप-चिप करने लगता था. उफ." वह उबकायी लेकर हंसी.

"तो तकिया तब नौबत पहुंच गयी थी."

"और क्या, वरना पता ही कैसे चलता?"

"आनंद पर याद आया – तुम्हारे आनंद का क्या हाल है?"

"पहले एक बात बताओ."

"पूछो."

"कहते हैं मर्द की जात बेवफा होती है. मगर मेरे पीछे तो मर्द चमड़ी की तरह लग जाते हैं."

जी चाहा, कह दूं– 'अपने-अपने नसीब की बात है. मुल्क में लाखों लड़कियां एक अदद शौहर को तरस रही हैं. तुम पांच छोड़ चुकी हो. तुम्हारी उतरन ही औरों का सुहाग है. ये सब तुम्हारे पापा की कारोबारी दिमाग का इनाम है.

"मैं जानती हूं. वे सब मेरी दौलत पर आशिक होते हैं, मुझे आड़ बनाते हैं, मैं उनके नसीब के ताले की कुंजी हूं. अगर मैं इनकार करूं तो वे इस तरह रोते-बिसूरते हैं जैसे मैंने उन्हें रेप किया हो. उनसे शादी करके ही मैं उनकी आबरू बचा सकती हूं. अरे, मैंने इन हरामजादों के लिए क्या नहीं किया. शानदार फ्लैट, अपनी मोटर, पत्ती के काम के कुर्ते. लखनऊ का किवाम – क्या कुछ नहीं मंगवाती – फिर भी शादी के पीछे पड़े रहते हैं."

"वे अपने हक पक्का करना चाहते हैं. उन्हें डर रहता है कि वैसे उनकी पोजीशन कुछ नहीं होगी. तुम्हारा जी भर जायेगा तो घर से निकाल दोगी."

"तो शादी के बाद भी तो तलाक लेनी आती है मुझे."

"इस मैदान में भी तुम किसी से पीछे नहीं, मगर मर्द की ये आदत है, वह कब्जा करना चाहता है यानी अपनी जागीर बनाना चाहता है."

"पता है, डेढ़ हजार भेजती हूं."

"किसे?"

"आनंद के बीवी-बच्चों को."

"क्या?" मैं चीख पड़ी.

"और क्या? जरा भी देर हो जाये तो खत पर खत आने लगते हैं, चौथे दिन आ धमकते हैं. कहते हैं बीवी को तलाक दे दूंगा."

"ये अच्छी धमकी है."

"हां, यहां मेरी जान पर सवार होकर रोज ड्रामे करेंगे. पापा को थोड़ा ही बताया है. वह समझते हैं आनंद का किस्सा खत्म हो गया."

"बात काम की है.जब सारे आशिक रूठ जायें तो बस आनंद की बीवी बच्चों को रुपये भेजना बंद कर देना. तुम्हारे मन-मंदिर का देवता आ धमकेगा–अच्छा ये बताओ–पाप के बारे में तुम्हारी क्या राय है?"

"तुम्हारे हिसाब से तो मैं सीधी नरक में जाऊंगी...ऊं हूं... तब की बात तब देखी जायेगी. पापा कुछ तिकड़म लड़ा ही लेंगे. वहां भी पापा का बड़ा असर है." वह हंसी.

"चलो, एक तरफ से तो तुम्हें इतमीनान है. बदनामी का तुम्हें डर नहीं. कोई तुम्हारा हुक्का-पानी नहीं बंद कर सकता. क्योंकि तुम्हारे पापा के पास न हुक्कों की कमी है न पानी की. तुम्हारे हाथों में समाज की नकेल है. जिधर चाहो मोड़ दो."

"मेरी जिंदगी में क्या कमी है? और फिर भी मुझे खुशी क्यों नहीं मिलती. क्यों कलेजा कोई हरदम काटता रहता है? भीड़ में क्यों अकेली रहती हूं."

'तुम्हें जेहनी और रूहानी बदहजमी की शिकायत है. तुमने इतनी छोटी-सी उम्र से इतनी अय्याशी की है कि अब तुम्हें ऐश भी सजा लगने लगा है. इतने आशिक चखे हैं कि जबान पर गिट्ठे पड़ गये हैं.' मैंने कहना चाहा, मगर नहीं कहा. मैं खुद भी तो उसके बाप के खैरात पर पलने वाले एक स्कूल में पांच सौ रुपये माहवार पर नौकर हूं. लीना की जिगरी दोस्त भी हूं. इसलिए जब जी चाहता है, उसकी आड़ में दुबक जाती हूं.

"लीनाजी, वे सब बेचारे तुम पर मरते हैं."

"हां. वे मुझ पर मरते हैं." लीना ने बड़ी हसरत से ठंडी सांस भरकर कहा, "जब मैं बूढ़ी हो जाऊंगी तो उनकी तादाद और भी बढ़ जायेगी–तब मेरे डंकी के हमउम्र मुझ पर जान देंगे." वह रुआंसी हो गयी.

"हां, और तुम कुछ भी न कर सकोगी, कि यही तुम्हारा एचीवमेंट है. जानती हो लीना?"

"क्या?"

तुम्हारी तरह एक दिन बोर होकर महात्मा बुद्ध भी राजपाट छोड़कर निकल खड़े हुए थे. उनके यार-दोस्त और बेचारी प्रेमिकाएं हाथ मलती रह गयी थीं." मैंने मस्का लगाना शुरू किया.

"तुम्हारा मतलब है मैं ये दुनिया छोड़कर हिमालय की चोटी पर जाके बैठ जाऊं."

"नहीं, क्योंकि इससे कोई फायदा न होगा. तुम्हारे पापा सारी बर्फ पिघलाकर कोई फैक्ट्री लगा देंगे. होटल शेरेटन की एक ब्रांच खोल देंगे, और वहां भी तुम्हारे आशिक टिड्डी दल की तरह गिरने लगेंगे."

वह डरी-डरी, खाली-खाली नजरों से न जाने कहां देखने लगी.

"एक बादशाह था, वह जो चीज छू लेता सोना बन जाती थी." वह उठती आवाज में बोलने लगी, "उसके हल्क में पानी का घूंट सोने का डला बन जाता था – मैं भी सोने के घूंट हल्क में फंसाए जा रही हूं."

मेरे पास से जाकर उस रात लीना ने मुट्ठी भर नींद की गोलियां फांक लीं, मगर वह भी शायद सोने की डलिया बनकर अटक गयीं. वह हफ्ता भर नर्सिंग होम में रहने के बाद एक डाक्टर के इश्क में दीवानी होकर लौटी. डाक्टर अपनी नौकरी को लात मारकर उसके साथ हनीमून मनाने जापान चला गया. बेचारे ने अपनी तीन साल की मंगनी तोड़ दी. □

अनुवाद : अशफ़ाक अहमद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताजो-तख्त दिलाने वाली ताजो-तख्त हिलाने वाली हसीनाएं

नीलकमल

मोहन लाल भास्कर

वैसे तो मुस्लिम शासकों के जीवन में - प्रशासन में नारियों का बहुत प्रभाव रहा है. मुहम्मद बिन कासिम से लेकर जहांगीर तक - अलाउदीन खिलजी से लेकर औरंगजेब तक - कभी बीवी, कभी बहन, कभी प्रेयसी, कभी बेटी - हर रूप में नारियों ने उनकी हकूमत में अपना सिक्का चलाया है—युद्धों में उलझाया है— रेगिस्तानों में दौड़ाया है- तख्तो-ताज दिलवाया या छिनवाया है. कभी रजिया सुल्तान - कभी नूरजहां - कभी जहांनआरा-कभी मुमताज महल-यह सबकी सब और कई अन्य मुस्लिम प्रशासकों के जीवन पर किसी न किसी रूप में हावी रही हैं और इतिहास को कई मोड़ दे गयी हैं. किंतु अभी हम केवल चर्चा करेंगे इस्लामी मुल्क पाकिस्तान की जहां आजकल अवैध संबंधों पर कोड़े लगाये जाते हैं. जनसमूह के हाथों उन्हें संगसार किया जाता है (पत्थर मार-मारकर मार दिया जाता है) वहां के शासक पिछले चालीस वर्षों में क्या गुल खिलाते रहे हैं और वे हसीनाएं जो या तो दरपर्दा हकूमत चलाती रही हैं या वहां के हाकिमों को अपनी अंगुलियों पर नचाती रही हैं. उनके एक इशारे पर लोगों के मुकद्दर बदल जाते थे, तकदीरें खुल जाती थीं. उनकी भवों पर बल पड़ते ही देखनेवालों के कलेजे दहल जाते थे.

पाकिस्तान के आरंभिक शासक अपने जीवन काल में लड़खड़ाते हुए दुनिया से कूच कर गये. मुकद्दर ने उनको इतना वक्त ही नहीं दिया कि वे अपने पांव जमाने की फिक्र से आजाद होकर किसी शोख हसीना के चंगुल में गिरफ्तार होते. इनमें स्वर्गीय मोहम्मद अली जिन्ना सोहरावरदी और सिकंदर मिरजा मुख्य हैं. डिक्टेटर सदर मोहम्मद अयूब खान अपने मुल्क में तो बहुत माकसाफ बने रहते थे लेकिन मुल्क से बाहर निकलते ही उनके पर निकल आते थे. दुनिया की नजरों से दूर वो अपने लिए ऐश के पहलू और सामान जुटा लिया करते थे. ऐसा कहते हुए एक बार जब वो परफ्यूमों कांड के मुख्य पात्र डाक्टर वार्ड के यहां स्वीमिंग पूल में क्रिस्टीन किलर के साथ केवल जांघिया पहनकर नाच रहे थे तो खान साहब की रंगीन तबीयत ने जोश मारा और उन्होंने ब्रिटिश हकूमत को हिला देने वाली क्रिस्टीन किलर को दोनों हाथों से जांघों से पकड़ा और पानी से बाहर हवा में टांग दिया और उधर वह इस हालत में कैमरे की आंख में कैद होकर रह गये. जब यह तस्वीर अखबारों में छपी तो पाकिस्तान के कट्टर मजहबी नेताओं और मुल्लाओं के माथे पर बल पड़ गये और दबे स्वर में 'लाहौल बिला लाहौल बिला' (लानत है इस पर) के बोल उनके मुंह से निकल गये लेकिन तब सदर अयूब का अपने मुल्क में इस कदर दबदबा था कि किसी को उनके खिलाफ चूं करने की हिम्मत तक नहीं हुई, भले ही बाहरी दुनिया के प्रेस में उनकी तस्वीर इस हाल में छपती रही और चर्चे होते रहे. अयूब का बाहरी मुल्कों में गुप्त यौन जीवन भले कैसा भी क्यों न रहा हो लेकिन अपने मुल्क में उन्होंने न तो किसी हसीना को अपने हरम में दाखिल होने की इजाजत दी और न ही किसी से एकांत में कोई संबंध रखे.

भुट्टो ने जो बगावत 1967 में अयूब के खिलाफ शुरू की थी, वह 1969 में अपनी चरम सीमा पर पहुंच गयी. पाकिस्तान के नौजवान मजदूर और किसान, अध्यापक वर्ग, विद्यार्थी वर्ग, वकील, सभी अयूब शाही को मिटाने के लिए सर पर कफन बांधकर निकल पड़े. मजबूरन फील्ड मार्शल मोहम्मद अयूब खान को हकूमत की बागडोर जनरल याहिया खान को सौंपकर हर किस्म की सियासत से संन्यास लेना पड़ा.

पाकिस्तानी जेलों में कई साल गुजारकर आये और 'मैं पाकिस्तान में भारत का जासूस था' नामक चर्चित और विवादास्पद पुस्तक के लेखक मोहनलाल भास्कर सुना रहे हैं पाकिस्तान के शासकों की प्रेमिकाओं के दिलचस्प किस्से.

यह शख्श याहिया खान इतना रंगीन मिजाज निकला, इसने अपने सभी भूतपूर्व शासकों की कसर पूरी कर दी. सबसे पहले तो पाकिस्तान की एक मशहूर फिल्मी हस्ती और गायिका को अपने बिस्तर की जीनत बनाया और उसे देश के बड़े से बड़े खिताब से नवाजा. अक्सर या तो याहिया खान उसकी कोठी में पड़े होते या वह उनके यहां जाकर उनकी मेहमाने-खास बनी हुई होती. चंद साल इसने याहिया खान के दौर में चमड़े का सिक्का चलाया. सैकड़ों को फर्श से उठाकर अर्श पर बिठाया और कई कातिलों को फांसी के फंदे से बचाया. उन दिनों हर कोई अपना काम निकालने के लिए इसकी पनाह में जाया करता और पलक झपकते ही उसका काम बन जाता था और मजे की बात यह है कि यह हसीनो-जमील फिल्मी हस्ती याहिया खान के संपर्क में आने तक छह शादियां रचा चुकी थी और छह बार तलाक ले चुकी थी लेकिन जब इसने युसफ खान से, अपनी उमर से पच्चीस बरस कम नौजवान से शादी रचायी तो एक बार तो याहिया खान हाथ से उखड़ गया और उसने इससे मिलना-जुलना बंद कर दिया. लेकिन यह जुदाई अधिक देर कायम न रही और वह फिर पहले की तरह ही याहिया खान की कोठी में आने-जाने लगी. इस फिल्मी हस्ती के बारे में उसके भूतपूर्व पति शौकत हुसैन रिजवी ने लिखा है, "उसे पलंग-पलंग कूदने की आदत है; वह शीघ्र ही मनपसंद पुरुष पर मोहित हो जाती है. जैसे उसे देखा ही न हो—वह एक तवायफ है और टकसाली तवायफ. उसकी नजर सदा अपने चाहने वाले की जेब पर होती है. जब जेब खाली होती है या उसके हाथ से ताकत चली जाये तो वह उसे चूसे हुए आम की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनरल रानी

गुठली की तरह फेंक देती है."

उसके एक करीबी मित्र लुकमान ने उसके और याहिया खान के बीच गहरे संबंधों का जिक्र करते हुए बताया कि एक बार हम किसी साहब की याहिया खान से सिफारिश करवाने उसके पास गये तो उसने याहिया खान को फोन किया और बातचीत इन शब्दों से शुरू की, "सरकारी जनाब की बांदी बोल रही है..." एक बार याहिया खान के लड़के की शादी थी. वहां जनरल गुल हसन (जिसने बाद में याहिया खान को गिरफ्तार करके हकूमत भुट्टो के हवाले की) और जुल्फिकार अली भुट्टो धीरे-धीरे कोई बात कर रहे थे कि इस फिल्मी हस्ती ने उन्हें टोकते हुए कहा, "चुप करो, आये तुसी की बड़-बड़ लाई होई है," (चुप करो तुम क्या बक-बक कर रहे हो) इससे स्पष्ट पता चलता है कि इस फिल्मी हस्ती का याहिया खान पर क्या प्रभाव था.

याहिया खान की दूसरी महबूब — बेगम अकलीम अख्तर उर्फ जनरल रानी.

वह अपनी मलहनुमा कोठी के ड्राइंग रूम में बनी बार में बैठी शराब नोश फरमा रही थी—उसकी पारदर्शी नाईटी में से उसका संगमरमरी बदन झांक रहा था. वह धीमे-धीमे गुनगुना रही थी कि तभी नौकरानी ने आकर कहा, "बेगम साहिबा, बेगम शहबाज़ आपकी खिदमत में सलाम अर्ज करने आयी हैं."

"उससे कह दो सुबह मिले, इस वक्त मुझे फुर्सत नहीं है. तुम्हें पता है कि इस वक्त मैं सिवाय खानसाहब के और किसी से नही मिलती. इन लोगों को तो बीमारी है जब देखो मुंह उठाये चले आते हैं, मिलने के लिए. जैसे मुझे और कोई काम ही नहीं है. कह दो उसे दफा हो जाये."

"बेगम साहिबा, खुदा के लिए एक बार मिल लें. बेचारी जार-जार रो रही है. रो-रोकर उनकी आंखें सूज रही हैं."

"आये-हाये, बड़ी सिफारिश कर रही हो हर्राफा (रंडी). लगता है उस गश्ती ने कोई तगड़ा लालच दिया है तुम्हें. जाओ ले आओ और बोलना कि अपनी बात मुख्तसर (संक्षेप में) करे, ज्यादा किस्से ब्यान करने ना बैठ जाये."

"जो हुक्म बेगम साहिबा," कहकर नौकरानी चली गयी और अपने साथ एक बहुत हसीनो-जमील औरत को ले आयी. उसके पहरावे से उसकी अमीरियत झलक रही थी लेकिन इस वक्त उसके चेहरे पर हवाईयां उड़ रही थीं. — बाल बिखरे हुए थे—आंखें रो-रोकर सूजी हुई थीं. वह आते ही बेगम अकलीम अख्तर रानी के कदमों से लिपट गयी और गिड़गिड़ाकर बोली, "हुस्नैन के सदके, मुझे बर्बाद ना करें—परसों रात चार नकाबपोशों ने, उस वक्त जबकि हम एक पार्टी में शरीक होने गये हुए थे, हमारी कोठी के नौकरों को बंदूक की नोक पर दरख्तों के साथ बांध दिया और कोठी नजरे आतिश कर दी. पड़ोसियों ने फायर ब्रिगेड को फोन किया. वह तब आया जब सारी कोठी ब-मय सामान जलकर राख हो गयी थी—हम सब्र करके दूसरी कोठी में आ गये तो आज पुलिस पार्टी ने हमारे घर छापा मारकर दो किलो अफीम बरामद कर ली. अब वो उन्हें पकड़कर ले गयी है और उन पर जुल्म तोड़ रही है. खुदा गवाह है बेगम साहिबा, मेरे शौहर बिलकुल बेकसूर हैं. वह किसी गलत शै को छूते तक नहीं. पांचों वक्त नमाज अदा करते हैं, खुदा को सजदा करते हैं."

"जो शख्श खुदा को तो सजदा करे लेकिन खुदा के उन बंदों को जिन्हें खुदा ने जमीन पर हकूमत सौंप रखी हो, हिकारत की नजर से देखे—उस पर खुदा का कहर नाज़ल होता है. तुम्हीं ने बेगम राजदान से कहा था ना कि यह रानी ही है जो उस पीपे (जनरल याहिया खान) को बर्दाश्त करती है, मैं तो उस पर थूकूं भी नहीं."

"हाये मुझ करमजली की जुबान कट जावे जिससे यह अल्फाज निकले. यकीन मानिये, वह दो औरतों में मजाक की बात थी. उस कमीनी ने सारी बात मुझ पर डाल दी."

"तुमने मेरे महबूब को पीपा कहा था ना, अब जब तक तुम उसी पीपे के सामने बरहना (निर्वस्त्र) नाचने पर आमादा नहीं होती हो तुम्हें बख्शगी नहीं."

"आप बरहना रक्स करने की बात करती हैं, आप और भी जो कुछ कहें, मैं करने को तैयार हूं. बस आप मुझे बर्बाद होने से बचा लीजिये. आपको रसूले-अकरम का वास्ता." यह कहते हुए वह फिर उसके कदमों से लिपट गयी.

"ठीक है, ठीक है. अब अपने तेवर दुरुस्त करो. जनरल साहब आने ही वाले हैं. उन्हें रोनी सूरतें पसंद नहीं हैं—मैं तुम्हारे शौहर की रिहाई के लिए फोन करती हूं." यह कहते हुए उसने अपने पति (जो याहिया खान की नजरे इनायत से एक पुलिस इंसपेक्टर से एस.एस.पी. बन गया था) का नंबर घुमाया और बोली, "सुनो अख्तर, मैं रानी बोल रही हूं. अब से ठीक दो घंटे बाद शहबाज साहब को रिहा कर देना और अपने आदमियों को ताकीद कर देना कि अब कोई उसे हाथ न लगाये." — फोन के दूसरे तरफ से कुछ ऐसा कहा गया जिसे सुनकर वह एक लहजा ठहाका लगाकर हंसती चली गयी.

फोन पर यह बातचीत सुनने के बाद बेगम शहबाज उसके बैडरूम में जाकर अपना मेकअप संवारने लगी. थोड़ी देर बाद नौकरानी ने याहिया खान के आने की इत्तिला दी तो वह लगभग दौड़ती हुई दरवाजे पर उसके इस्तकबाल को गयी और उसके भीतर आते ही उससे बगलगीर हो गयी.

"क्या बात है, बहुत खुश नजर आ रही हो?"

"मैंने तो जो खुश होना था हो लिया, अब तो आपके खुश होने की बारी है. हजूर की नजर ऐसा तोहफा पेश करने जा रही हूं कि देखेंगे तो खिल उठेंगे."

"भई ऐसा कौन-सा तोहफा है, जरा हम भी तो सुनें."

"बेगम शहबाज."

"नामुमकिन. वह तो हमारी तरफ आंख उठाकर देखती भी नहीं... सलाम तक नहीं करती."

"आप सलाम की बात करते हैं, वह आपके सामने बरहना रक्स करेगी. आपकी बांदी कोई कच्ची गोलियां नहीं खेली. बस जरा इत्मिनान से इंतजार फरमाएं," यह कहते हुए जब तीन बार ताली बजायी तो बेगम शहबाज ने अपने कयामतेखेज जलवों के साथ कमरे में प्रवेश किया—याहिया खान आंखें फाड़े उसके बेपनाह हुस्न को देखता ही रहा गया—उसकी सांसें उसके गले में अटकने लगीं और उसे अपने दिल की धड़कन बंद होती महसूस होने लगी...

इस तरह ना जाने कितनी मासूम आंखों की पाकीजगी (पवित्रता) उसने याहिया खान की नजर कर दी. उसके उत्थान की और पतन की एक अपनी ही दास्तां है. पतन की बात बाद में करूंगा पहले उसके उत्थान की कहानी सुनाता हूं.

याहिया खान की कोठी पर पार्टी चल रही थी. याहिया खान मेहमानों के बीच बिचर रहे थे. उनका हाल-चाल पूछते हुए कि तभी उनके कानों में दो औरतों की सरगोशियां पड़ीं.

"तुम्हारे मालिक का नाम क्या है?"

"कौन मालिक —हम सबके एक ही मालिक हैं, हजूरे अनवर सदर मुहम्मद याहिया खान.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैसे मेरे शौहर का नाम अख्तर है.'' बेगम अक्लीम अख्तर ने कहा.

याहिया खान ने पलटकर देखा तो उस हुस्न के मुजस्में को देखता ही रह गया. वह औरत उन अल्फाज से कहीं प्यारी थी जितने प्यारे अल्फाज उसने बोले थे. और जो अब भी घंटियों की तरह यहिया खान के कानों मे गूंज रहे थे. और तभी उसके दिल में एक तड़प ने जन्म ले लिया कि वह उसके साथ तनहाई में बातें करेगा. वह किसी बहाने से मेहमानों को लान में छोड़ कोठी में चला गया और उसके बाद एक बांदी बड़ी राजदारी से बेगम अक्लीम अख्तर को भीतर ले गयी.

''तुम्हें याद हैं अपने अल्फाज जो तुमने मेरे बारे में कहे थे?''

''बांदी ने कुछ गलत नहीं कहा था हजूर.''

''यह भी जानती हो कि मालिक को क्या हक हासिल होता है?''

''आप हुक्म तो करें हजूर,बांदी हर हुक्म की ताबेदार है.'' उसने यहिया खान की आंखों में आंखें डालते हुए कहा. उसकी आंखों में लाल डोरे तैर रहे थे और वह उसके सामने बिछती चली गयी.

''तुमने हमें अपना मालिक माना है, आज से तुम हमारी मलिका हो. हमारे दिल की रानी हो.'' याहिया खान ने उसे अपने आगोश में लेते हुए कहा और इस तरह से एक हकीर पुलिस इंस्पेक्टर की बीवी एक अदना औरत से बेगम अक्लीम अख्तर रानी बन गयी और बाद में जनरल रानी के नाम से जानी जाने लगी. एक बार उसके पति पर ताना कसते हुए किसी ने उससे कहा, ''तुम्हें शर्म नहीं आती तुम्हारी बीवी को जनरल लिये घूमता है?''

उसने शराब के गिलास में से चुस्की भरते हुए कहा, ''हमने जीने के लिए सोचने का अंदाज बदल लिया है, मैं सोचता हूं कि वह बीवी ही जनरल यहिया खान की है जिस पर कभी-कभी मुझे भी हाथ मारने का मौका मिल जाता है.

भुट्टो ने यहिया खान के दौर में कई बार उसके करीब होने की कोशिश की लेकिन उसने हाथ नहीं रखने दिया. एक पार्टी में भुट्टो ने उस सलाम कहा तो जवाब में वह फट पड़ी,'' किससे बात कर रहे हो? किसी वाकिफ से बात करो, तुम्हें इतना भी शऊर (तमीज) नहीं कि मुहज्जब मस्तुरात (सभ्य स्त्रियां) किसी नावाकिफ गैर मर्द का सलाम कबूल नहीं करती.''

भुट्टो इस जुमले पर कटकर रह गया. और शायद उसने दिल ही दिल कसम खायी हो कि, 'मेरा वक्त आने दे फिर मैं तुझसे इस हिकारत और तौहीन का बदला लेकर दिखाऊंगा.' और सचमुच अपना दौर आने पर उसने इससे भरपूर बदला लिया अपने अपमान का. वह किस तरह, इसका जिक्र बाद में करूंगा. पहले जरा अपनी महबूबा का जिक्र भी हो जाये.

भुट्टो की महबूबा – बेगम हिना खर

औरत के मामले में भुट्टो का चुनाव दूसरों से कुछ भिन्न था. वह सिर्फ 15 से 25 साल के बीच की औरत ही पसंद करता था. जनरल रानी के निकट होने की उसकी कोशिश महज इसलिए थी क्योंकि उसके साथ शोख हसीनाओं की टोली होती थी वह आंटी कहलाया करती थी. उनमें नीलकमल बहुत ही दिलकश और मशहूर थी. उसका जिक्र भी बाद में करूंगा.

भुट्टो मुर्गी चबाकर उसकी हड्डियां गले बांधने का आदी नहीं था–रात गयी रात गयी–हर रोज एक नयी हसीना उसकी आगोश में होती थी और सप्लाई करनेवालों की कोई न थी–लेकिन सबसे ज्यादा जिस लड़की ने उसे मुतासिर (प्रभावित) किया और जिसके साथ उसने एक से अधिक रातें गुजारीं, वह थी पंजाब के गर्वनर गुलाम मुस्तफा खेर की बीवी. जिसका असली नाम तो मैं भूल गया हूं लेकिन प्यार से भुट्टो उसे हिनी कहा करते थे.

वह प्यारी सी गोल-मटोल गुड़िया अपने आप में सौंदर्य की मूरत थी कि जो भी उसे देखता, देखता ही रह जाता. गुलाम मुस्तफाखेर की शादी थी और भुट्टो उसमें चीफ गेस्ट था और यों लगता था कि असली दूल्हा गुलाम मुस्तफा खेर नहीं बल्कि जुल्फिकार अली भुट्टो है–हर कोई उसके कदमों में बिछा जा रहा था और यह बत कुदरती थी क्योंकि भुट्टो के पास उस वक्त तीन ओहदे थे–पाकिस्तान का सदर - पाकिस्तान का प्रधानमंत्री और पाकिस्तान का चीफमार्शल-ला-एडमिनिस्ट्रेटर. तीनों वही था. भला ऐसी शख्सीयत को नजरंदाज करके उससे अधिक गुलाम मुस्तफा खेर की कदर कौन करता. शादी हुई तो उसने गुलाम मुस्तफा खेर और उसकी बीवी के बीच बैठकर तस्वीर खिचायी. खैर यहां तक तो ठीक था लेकिन उसके बाद जो कुछ हुआ उसने लोगों को हैरान कर दिया कि गुलाम मुस्तफा खेर सुहागरात मनाये बगैर मुल्क से बाहर चले गये और भुट्टो साहब दस दिन तक गर्वनर हाऊस में पड़े हुए उनकी बीवी के साथ रातें रंगीन करते रहे और उसके बाद भी अक्सर हर महीने उनकी कुछ ना कुछ रातें वहीं गुजरती और गुलाम मुस्तफा खेर किसी न किसी बहाने उस वक्त मुल्क से बाहर भेज दिया गया होता.

याहिया खान जनरल गुलहसन के हाथों कैद में डाल दिया गया था और जनरल रानी दर-दर भटक रही थी. वही शाही खर्च, वही शाही शौक. दिन में भी शराब पीना और गम गलत करते रहना. आखिर वह तवायफ के स्तर तक उतर आयी. जुल्फिकार अली भुट्टो उस पर ताव खाये हुए था और पुराने अपमान का बदला लेने की फिक्र में था. उसने सभी खुफिया महकमों को ताकीद कर रखी थी कि जब भी यह औरत कहीं रंगे हाथों पकड़ी जाये तो उसका भरपूर जलूस निकालना है.

एक रात पुलिस को खबर मिली कि जनरल रानी लाहौर के क्लैरीज होटल में पाकिस्तान शिपिंग कंपनी के डायरेक्टर अजीज अहमद के साथ रंगरलियां मना रही है. चुनांचे पूरी पुलिस फोर्स के होटल पर छापा मारा गया – वैसे वहां और भी जोड़े ऐश कर रहे थे लेकिन पुलिस ने किसी को तो कुछ नहीं कहा, सीधे बेगम रानी को जा घेरा. वह एक कमरे में व्हिस्की पी रही थी और उसके पिछवाड़े पड़ने वाले कमरे में पाकिस्तान शिपिंग कंपनी के डायरेक्टर अजीज अहमद की एक जांघ पर इसकी लड़की और दूसरी जांघ पर मशहूर सहयोगी नीलकमल बैठी थी. तीनों शराब में चूर मस्ती मार रहे थे. पुलिस चारों को गिरफ्तार करके थाना नौलखा लाहौर ले आयी और वहां बंद कर दिया. सारी रात थाना नौलखा उसकी ऊल-जलूल बकवास और गालियों से गूंजता रहा.

उसके बाद उसे हवालाती बनाकर कोटलखपत जेल लाहौर भेज दिया गया. यह 1973-74 की बात है तब वहां मैं भी कैदी था और कैदियों के तबादले के लिए अपनी बारी का इंतजार कर रहा था. वहां उसने जेल दरोगा हमीद खान पिस्तौल को फांस लिया. सुबह दस बजे ही वह उसे अपने दफ्तर बुला लेता. दोनों बंद कमरे में शाम तक बैठे रहते. अपने आसपास की दुनिया से बेखबर. दरोगा को हमीद खान पिस्तौल इसलिए कहते थे कि वह बात बात पर 'गोली मार दूंगा' की धमकी दिया करता था.

एक रोज उसके दफ्तर के पास दो कैदी झगड़ पड़े. यह फौरन अपनी पैंट ऊपर को खिसकाता हुआ बाहर निकला और बोला, ''ड्योढ़ी में दंगा करते हो, शर्म नहीं आती! गोली मार दूंगा!''

इसकी शक्ल देखकर दोनों कैदी लड़ना भूलकर हंस पड़े और उनमें से एक बोला, ''यहां तो चाकू चल गये पर कतराभर खून नहीं निकला फिर आपका मुंह क्यों लाल हो रहा है जाईये चेहरा पोंछियें आपके चेहरे पर जनरल रानी के लबों की सुर्खी लगी है...'' दरोगा सकपकाकर अपने दफ्तर में घुस गया और दोनों कैदी उसे देर तक गालियां देते रहे.

उसके बाद जनरल रानी रिहा कर दी गयी. भुट्टो साहब को फांसी दे दी गयी. यहिया खान दिल का दौरा पड़ने से मर गये. कुछ बरस पहले जनरल रानी हैराईन की स्मगलिंग करती हुई अमरीका में पकड़ी गयी और शायद आज भी वहां कैद है या वहां से रिहा होकर पाकिस्तान आ गयी है. उसे वहां तीन साल कैद का हुक्म हुआ था.'' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े-बड़े देशों के जासूसी तंत्र एक दूसरे के गुप्त भेद पाने के लिए कई तरह के जाल बुनते हैं. उनमें सबसे घातक लेकिन असरदार होता है यह शहद का जाल.

'शहद का जाल'

बाला दुबे

जासूसों की भाषा में इस विधि को 'शहद का जाल' ही कहते हैं. जैसे लोभी मक्खी फंसती है शहद में वैसे ही प्रवर अधिकारी फंस जाते हैं स्त्री-जाल में.

मोश्ये डि जीन भी एक माना हुआ भ्रमर था सुंदरियों की फुलवाडी में. वैसे डि जीन फ्रांस के राष्ट्रपति डि गोल का विश्वस्त मित्र भी था और सोवियत यूनियन में फ्रांस का राजदूत भी. और मजे की बात यह थी कि इस बात का भंडाफोड़ अंग्रेजों की जासूस सेवा द्वारा हुआ था जहां छप्पन वर्षीय राजदूत यूरी क्रॉटकॉव ने अपने को समर्पित करते हुए सभी पत्ते खोल डाले थे. क्रॉटकॉव ने कोई जघन्य अपराध भी नहीं किया था—हां वह सुंदर सलोनी सूरतों का मतवाला जरूर था.

और जब डि जीन ने भी प्रणय-पंख फड़फड़ाये तब रूसी जासूसी संस्था के.जी.बी. के गण प्रसन्न हुए. वे समझ गये थे कि यह फ्रांसीसी बुलबुल शीघ्र ही उनके पिंजड़े में आ जायेगी. फिर उन्होंने 'शहद का जाल' बिछा डाला जिसमें उन्होंने अपनी एक सहायिका को डि जीन की ओर बढ़ाया. यह सब निकीटा क्रुश्चेव के संकेत पर ही किया गया था क्योंकि उन्हें पता था कि डि जीन फ्रांस के राष्ट्रपति डि गोल का अभिन्न मित्र है और इस नाते वह शीघ्र ही किसी महत्वपूर्ण पद को हथियायेगा भी. और रूसी एजेंटों ने उस सलोनी रुहायिका को डि जीन के शयन-कक्ष में भिजवा कर ही चैन लिया. इस प्रयोग के बाद उन्होंने डि जीन को धड़ाधड़ पार्टियां देना आरंभ कर दिया जिसमें वे चुन-चुनकर सुंदरियां लाते और फ्रांस के राजदूत की झोली में डाल देते.

सबसे पहले डि जीन की बांहों में फ्रांसीसी-भाषा बोलनेवाली एक तलाकशुदा सुंदरी लिडिया खोवंसकाया गिरी और इसके बाद लंबे और कोमल पांवोंवाली लैरिसा क्रॉनबर्ग-सोबोलेव्सकाया अंकशायिनी बनी. और इस प्रणय-नाटक को बड़ी दिलचस्पी से दिखलाया गया. हुआ यह है कि जब लैरिसा अपने रसिया डि जीन के साथ शयन-कक्ष में रमण-मग्न थी तभी उसके पति का अभिनय करता हुआ एक रूसी भाई आ धमका. लैरिसा उसे देखकर बनावटी आश्चर्य में चीखी, "यह तो मेरा पति है."

फ्रांसीसी राजदूत के हाथों से तोते उड़ने लगे. और जब उस तथाकथित पति ने राजदूत महोदय की 'धूर-वच्छिना' का प्रोग्राम बनाना चाहा तब बगल के कमरे में जमे फिल्म खींचनेवाले एवं आवाज रिकार्ड करनेवाला स्टाफ बड़े मजे ले-लेकर हंस रहा था. सधे हुए संवाद के अनुसार लैरिसा ने अपने 'पति' को समझा-बुझाकर वापस कर दिया जिससे राजदूत महोदय भी पिटते-पिटते बचे.

बौखलाये हुए डि जीन के औसान खता हो चुके थे और इस लबड़ धों धों में उसने गलती यह की कि इस मामले पर पर्दा डालने को एक भाई की शरण में जा पहुंचे जो कि बदकिस्मती से के.जी.बी. का ही एजेंट था. अपने टीले पर राजी-खुशी मुर्गी को आते देख एजेंट भाई ने हमदर्दी के डायलॉग बोले और यह पुष्टि कर ली कि अब राजदूत महोदय पूरी तौर से 'शहद के जाल' में फंस चुके हैं और इसका फायदा मौका आने पर ब्याज सहित लिया जायेगा.

रूसी जासूस ने यह भी प्रयत्न किया कि किसी प्रकार से राजदूत की पत्नी मैरी क्लैर को भी जाल में फंसा लिया जाय पर वे सफल नहीं हो पाये.

वैसे रूसी एजेंटों की जल्दबाजी ने काम भी बिगाड़ा था. पिछली बार जब उन्हें एटैची कर्नल लुई गिबॉड और एक रूसी महिला के संबंध के बारे में ज्ञात हुआ तो उन्होंने चुपचाप उनकी प्रणय-लीला की फोटो खींच लीं. और जब उन फोटो को कर्नल गिबॉड को दिखलाकर कहा कि या तो विभीषण बन जाओ वर्ना हम तुम्हारा पर्दाफाश कर देंगे, तब वह कर्नल सीधा दूतावास गया और कमरा बंद करके उसने गोली मारकर आत्महत्या कर ली.

इस वारदात ने ही यूरी क्रॉटकॉव के कान खड़े किये थे और वह मौका पाकर सीधा इंग्लैंड आ पहुंचा. लंदन फ्रांसीसी राजदूत डि जीन के बखिये भी उधेड़ फेंके. डि जीन की किरकिरी तो तब हुई जब उसके परम मित्र फ्रांस के राष्ट्रपति डि गोल ने उससे कहा, "तो डि जीन तुम भी इधर-उधर सोते फिरते हो." □

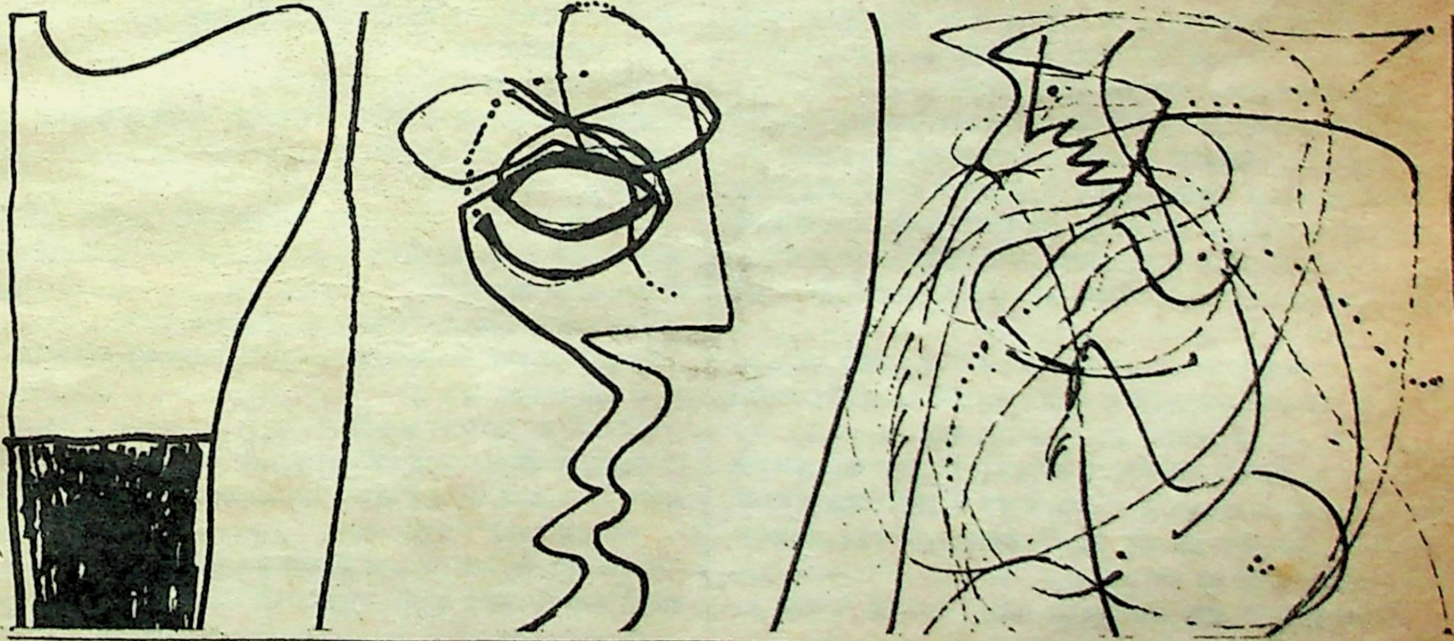

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुकन्या

हरिमोहन
संप्रति गढ़वाल विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग से संबद्ध
संपर्क : गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर, गढ़वाल

"सुकन्या! शाम को ऊषा जी के घर पर मिला! ठीक पांच बजे!"

"जी, सर!"

सुकन्या सीढ़ियां चढ़ रही थी और डॉ. चंद्रशेखर सीढ़ियां उतर रहे थे. और कोई बात दोनों में न हुई.

सीढ़ियां चढ़कर सुकन्या डिपार्टमेंट में आ गयी. आज गौतम सर छुट्टी पर थे इसलिए पास के कमरे में बैठी मैडम ऊषाजी लड़के-लड़कियों के बीच जोर के ठहाके लगा रही थीं. उसने उस कमरे में झांका तो एक-साथ कोरस में सबने पुकारा, "आइए! सुकन्या जी आप भी आइए!!"

"नहीं, मैं जरा लाइब्रेरी जा रही हूं."

"अरी! चली जाना लाइब्रेरी! हर वक्त पढ़ती रहती हो, थकती नहीं हो? हम तो कभी इतना नहीं पढ़े..."

"आप तो जीनियस हैं मैडम..."

वह अब सुकन्या नहीं रह गयी थी, विषकन्या हो गयी थी. डॉ. गौतम को उसी ने तो डसा था. वह रो-रोकर उस विष को अपने भीतर से बहाकर बाहर निकाल देना चाहती थी.

सुकन्या का यह कथन ऊषाजी के ठहाके में डूब गया. सुकन्या सॉरी कहकर लौट आयी. उसे ऊषाजी का इस तरह बैठकर ठहाके लगाना, कुछ न पढ़ना-पढ़ाना कभी अच्छा नहीं लगा. यूनिवर्सिटी में नौकरी मिल गयी है, मजे से अकेली रहती हैं और डॉ. चंद्रशेखर के साथ राजनीति करती हैं. हुं...! उसने सोचकर अपना सिर झटक दिया और सोचने लगी, मैं जब लैक्चरर हो जाऊंगी, तब पढ़ने-लिखने के अलावा कोई फालतू काम नहीं करूंगी. कितना अच्छा इन सब झंझटों से दूर, बिल्कुल अपनी दुनिया. यह सब सोचते-सोचते उसके कदम गरिमामय ढंग से उठ-बढ़ रहे थे. वह लाइब्रेरी के सामने कब आ गयी, उसे पता भी नहीं चला.

शाम ठीक पांच बजे वह ऊषा मैडम के घर पंहुच गयी. डॉ. चंद्रशेखर वहां पहले से थे. वे सिगरेट पी रहे थे और सिगरेट के धुएं में ऊषाजी का मुस्कराता चेहरा आवृत था. उसे आश्चर्य हुआ यह वही ऊषा मैडम है जो सिगरेट के धुएं से नफरत करती हैं. उसे याद है एक बार टूर में गयी थीं तो बस में सिगरेट पीते कंडक्टर को देखकर कैसा-कैसा मुंह बना रही थीं. इस बात को लेकर ड्राइवर से तो उनका झगड़ा ही हो गया था.

"आओ सुकन्या! ठीक वक्त पर आ गयी!" ऊषा जी ने कहा.

"बैठो!" चंद्रशेखरजी ने भी उसे बैठने का संकेत किया.

"क्या लोगी? कॉफी या ठंडा!" ऊषा ने उठते हुए पूछा..

"कुछ नहीं मैडम! लाइए मैं लाती हूं. आप लोग क्या लेंगे सर?" सुकन्या ने खड़े होते हुए पूछा.

"तुम यहीं बैठो सुकन्या! यह सेवा ऊषाजी ही करेंगी!" अधिकार भाव से यह कहने के साथ ही उन्होंने ऊषा जी से कहा, "ऐसा कीजिए मैडम, कॉफी ठीक रहेगी."

"ओ के सर," और मुस्कराहट ऊषाजी वहां से चली गयी.

"सुनाओ सुकन्या, कैसी चल रही है तुम्हारी रिसर्च?

"ठीक है सर! चार चेप्टर हो गए हैं...

"जल्दी करो भई. हम चाहते हैं कि तुम जल्दी पी-एच.डी. हो जाओ और डिपार्टमेंट में लैक्चरर बन जाओ...

"अरे! कहां सर..."

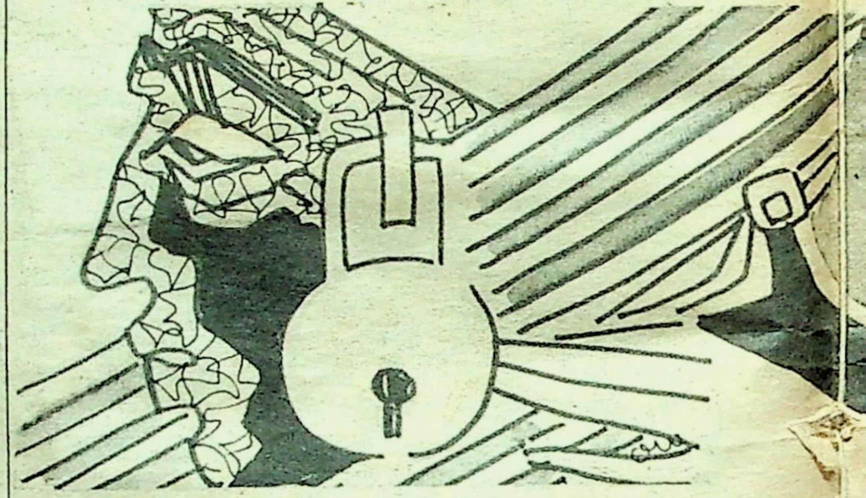

"क्यों? हम किसलिए हैं...हम पर विश्वास नहीं."

"ये बात नहीं है सर..."

"खैर छोड़ो! कल दिल्ली चलोगी?"

अन्य किसी भूमिका के बिना चंद्रशेखर ने अपनी नंगी आंखों से सुकन्या की ओर देखते हुए पूछा.

सुकन्या ने गरदन झुका ली और अटकते हुए बोली, "सर.. कल....."

"कल क्या? चलना. ठीक रहेगा. कुछ लाइब्रेरी देख लेंगे. अच्छी अच्छी किताबें देख लायेंगे और एक-दो लोगों से मिलना भी हो जायेगा. दो दिन की तो बात है."

"सर.. वो तो ठीक है, पर मामा जी से पूछना पड़ेगा...."

"वह मैं कह दूंगा. या तुम उन्हें समझा देना. रिसर्च वर्क यहीं बैठकर तो हो नहीं जाएगा. ठीक है?"

"ठीक है, सर कोशिश करूंगी."

"कोशिश-वोशिश कुछ नहीं—चलना है!" चंद्रशेखर ने लगभग आदेश दिया. इतने में कॉफी लेकर ऊषाजी आ गयीं.

"क्या तय हुआ?" उन्होंने पूछा.

"कुछ नहीं. तय क्या? सुकन्या से कुछ तय थोड़े ही करना पड़ता है. वह तो जैसे हम कहेंगे करेगी. बहुत अच्छी लड़की है!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''ठीक है भई, हम भी चलेंगे, यदि आप लोगों को कोई दिक्कत न हो तो!'' ऊषाजी ने लगभग परिहास के लहज़े में कहा.

''हां, चलिए मैडम आप भी चलिए. बहुत अच्छा रहेगा!'' सुकन्या ने बड़े आग्रह के साथ प्रस्ताव रखा—मानो उसके आग्रह को वे मानेंगी और तब उसे अपना जाना इतना तकलीफदेह नहीं लगेगा.

''अरे! हमारे इतने भाग्य कहां. हमने तो अपने आप रिसर्च की थी. काश हमको भी शेखर जी जैसे सर मिल जाते...,'' कहकर ऊषाजी चंद्रशेखरजी की ओर देखने लगीं.

''चलिए आपको भी ले चलते हैं जी, आपको भी दिखा देंगे. कुतुब मीनार!''

''तब तो जरूर चलेंगे—हम भी देख लेंगे कुतुबमीनार!'' ऊषाजी ने कहा और जोरदार ठहाका लगा दिया.

कॉफी पीने के बाद चंद्रशेखर ने फिर एक सिगरेट सुलगा ली. बोले, ''सुकन्या! तुम्हारा सुपरवाइजर कहां गया है?''

''पता नहीं सर.''

''क्या तुम्हें इसीलिए उसके अंडर में रिसर्च करने के लिए भेजा था?'' चंद्रशेखर. जैसे उखड़ गये, सुकन्या के जबाव को सुनकर.

''सर,..दीदी कह रही थीं, शायद दिल्ली गये हैं!'' कुछ सोचते हुए सुकन्या बोली.

इससे पहले कि चंद्रशेखर कुछ बोलें, ऊषाजी ने चुटकी ली, ''अच्छा तो ये बातें हैं! डा. गौतम को जीजाजी बना लिया है!''

सुकन्या लजाकर रह गयी. उसके कपोलों पर एक बहुत हल्की-सी

''हूं! आप भी बस...'', चंद्रशेखर ऊषा की ओर ऐसे देख रहे थे जैसे वह बच्ची हो.

''शेखरजी, मेरी तो राय यह थी कि आप पहले से ही वह सब कुछ लिखा लेते. जब टाइम आये, तब वह डाक्यूमेंट यूनिवर्सिटी आथरिटीज को पेश कर दें. बाकी आपकी इच्छा. आप मुझसे ज्यादा जानते हैं.'' ऊषा ने राय दी.

''मैडम आप भी ठीक कह रही हैं. पर अभी इंटरव्यू दूर है. और फिर यह लड़की अभी इतनी परफेक्ट नहीं हुई है!''

''अच्छा तो ये बात है!''

''हां!'' चंद्रशेखर ने अपने ऊपर के होंठ को निचले होंठ से दबाकर मक्कारी की मुद्रा में अपना चेहरा ऊषा के ठीक सामने लटका दिया.

''और परफेक्ट तो अभी आप भी नहीं हुई हैं!'' कहते हुए उन्होंने ऊषाजी के गालों को हलके से थपथपा दिया.

''आप सब कर देंगे शेखर जी!''

''तो आओ, अभी किये दे रहे हैं!''

''ऐसी बात है!''

''हां-हां.''

''जाओ – आप बड़े वो हैं!'' कहकर ऊषाजी मेज पर पड़ी मेगजीन उलटने-पलटने लगीं, फिर बोलीं ''घर नहीं जाना!.''

''अरे! मैं तो भूल ही गया. सात बजे गये. अच्छा फिर मिलेंगे!''

''दिल्ली से लौट कर!'' ऊषाजी ने चलते-चलते शरारत की. चंद्रशेखरजी ने प्यार से उनकी ओर देखा और उनसे विदा ली.

स्वाभाविक लाली थरथरा कर विलीन हो गयीं. उसकी आंखों में दो काले सूरज इधर-उधर तैरकर रुक गये. थोड़ी देर खामोशी रही. कमरे में पंखे की आवाज ही सुनाई दे रही थी, जैसे कोई चिड़िया चक्कर काट रही हो. पंखे की हल्की आवाज के पीछे से चंद्रशेखर के शब्द उड़कर आये और सुकन्या के बालों में उलझकर रह गये, ''ठीक है, सुकन्या, कल आठ बजे की बस से चलेंगे.''

सुकन्या ने सिर्फ अपना सिर हिलाया. कहा कुछ नहीं—न 'हां' न 'ना'. चुपचाप उठकर खड़ी हो गयी. वह जानती है कि 'ना' तो संभव ही नहीं. पहले भी तो वह इनके साथ जाती रही है. 'अच्छा सर! अच्छा मैडम!' कहकर वह दरवाजे की ओर बढ़ी कि पीछे से ऊषाजी का स्वर तैर कर आया, ''चिंता मत करो बेबी, मैं नहीं जाऊंगी.'' सुकन्या तेज-तेज कदमों से बाहर निकल गयी.

ऊषा ने चंद्रशेखर से पूछा, ''वह लिखा लिया?''

''वह सब हो जायेगा, तुम चिंता क्यों करती हो.'' कहकर चंद्रशेखर ने उषा के कंधे पर हाथ रखा. और समझाया, ''अभी जल्दी मत करो, अभी समय नहीं आया!''

''आप ऐसे ही समय देखते रह जायेंगे, वह प्रोफेसर हो जायेगा,'' ऊषा झुंझलायी.

तीन दिन बाद चंद्रशेखर सुकन्या के साथ दिल्ली से लौट आये. एक बात को छोड़कर सुकन्या के लिए यात्रा अच्छी रही.

चंद्रशेखर जी के लिए उस एक बात को छोड़कर बाकी यात्रा सामान्य रही. कुछ मित्रों से मिलना हो गया. सुकन्या की मुलाकात चंद्रशेखरजी के साथ कुछ पत्र-पत्रिकाओं के संपादकों से हो गयी. कुछ रचनाएं छपने दे दीं. शायद कभी छप जायें. चंद्रशेखरजी का परिचय कई लोगों से है. यूनिवर्सिटी के अधिकारियों से उनके बहुत अच्छे संबंध हैं. जातिवाद के नाम पर यूनिवर्सिटी में कई गुट बने हुए हैं. चंद्रशेखरजी का गुट सबसे ज्यादा सक्रिय है. उसी गुट में फंसी सुकन्या को न चाहते हुए भी उनके कहे अनुसार करना पड़ता है. उसे इन लोगों ने डिपार्टमेंट में ही लैक्चरर एपॉइंट करने का वादा किया हुआ है. ऊषाजी रीडर बनने के ख्वाब देख रही हैं और प्रोफेसर का पद चंद्रशेखर जी हथियाने के चक्कर में हैं. इनकी योजना है, कैसे भी डा. गौतम को प्रोफेसर न बनने दिया जाये. यों योग्यता में वे चंद्रशेखरजी से कहीं आगे हैं और सीनियर भी हैं. लेकिन चंद्रशेखर जी की पहुंच ऊपर तक है. वाइसचांसलर तक उनके गुट से घबराता है. लड़कों को चाहे जब भड़काकर हड़ताल कराना, वाइसचांसलर के खिलाफ नारेबाजी और रजिस्ट्रार के खिलाफ अखबारबाजी करा देना इनके बायें हाथ का खेल है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुकन्या चंद्रशेखर जी को एक सप्ताह [illegible] वहीं ऊषा जी के घर. आज सुकन्या एक बहुत बड़ी उपलब्धि लेकर पहुंची थी. कम से कम चंद्रशेखर जी के लिए तो यह बड़ी उपलब्धि थी ही. उसके हाथ में एक पत्र था, जो वह हेड साहब यानी अपने सुपरवाइजर डा. गौतम के घर से चुपचाप खिसका लायी थी. उसने गौतमजी की पत्नी का विश्वास जीत लिया था, जिन्हें वह दीदी कहती थी. इसलिए वह उनके घर की ही सदस्या बन चुकी थी. पत्र मेज पर था, जो अभी खोला नहीं गया था. गौतम घर पर नहीं थे. सुकन्या का ध्यान पता नहीं कैसे उस पत्र पर चला गया था और उसे चंद्रशेखर का कहा याद था. सो उसने वह पत्र उठाकर अपनी किताब में रख लिया था. पत्र डा. गौतम के मित्र विष्णुकांतजी का था.

''अरे वाह! आज तो तुमने कमाल कर दिया—सुकन्या!''

उसके हाथ से पत्र लेते हुए डा. चंद्रशेखर ने कहा. वे जल्दी से पत्र को खोल कर पढ़ने लगे—लिखा था :

''प्रिय गौतम, मैं 10 नवंबर को तुम्हारे यहां आ रहा हूं. तुम्हें चिंता की कोई ज़रूरत नहीं. कल प्रो. नायर मिले थे, दिल्ली में. वे भी हैं. तुम निश्चित रहो. हम तुम्हें प्रोफेसर बनायेंगे.''

पत्र पढ़कर चंद्रशेखर जी को इतनी उत्तेजना हुई कि उन्होंने सुकन्या को भींचकर सीने से लगा लिया.

''अरे! क्या हुआ? आज आप बहुत खुश हैं शेखर जी!'' ऊषा ने आंखें नचाते हुए कहा.

''पूछो मत ऊषा, आज बहुत बड़ा काम हो गया. ये देखो....''

चंद्रशेखर ने पत्र ऊषा जी की ओर बढ़ा दिया. पत्र पढ़कर ऊषा की आंखें फैल गयीं. पर उन्हें सुकन्या से ईर्ष्या हो गई. प्रकट में उन्होंने खुशी से सुकन्या का हाथ अपने हाथ में ले लिया, ''शाबाश सुकन्या, कितना बड़ा काम करके लायी हो!... पर एक काम और रह गया—क्यों शेखरजी?''

''हां-हां, वह भी करना है!''

''क्या सर!''

''काम यह है सुकन्या! कि तुम्हें डा. गौतम के खिलाफ लिखकर देना है.''

''क्या लिखना है सर?''

''कुछ नहीं बस यही कि डा. गौतम मुझे तंग करते हैं. मुझसे अनैतिक संबंधों का प्रस्ताव करते हैं. उन्होंने मुझे पी-एच.डी. जल्दी कराने का लालच देकर मेरे साथ दो-तीन बार कुकर्म किया है. मेरी स्कॉलरशिप वही ले लेते हैं. मुझे डिपोर्टमेंट में लैक्चरर बनाने का प्रलोभन देकर उन्होंने मेरे साथ.... और जो भी तुम लिख सको!''

''लेकिन सर?...'' वह हिचकियायी.

''लेकिन-वेकिन कुछ नहीं. अब हमारी विजय है. तुम चिंता मत करो. तुम्हारे इस पत्र का उपयोग अभी नहीं करेंगे. यह गोपनीय रहेगा. तुम लिख दो.''

''हां-हां, सुकन्या! कोई हर्ज नहीं लिखने में. मैं कहती हूं तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ेगा. तुम्हारी पी-एच.डी. हम करायेंगे. फिर डॉक्टर साहब हैं ही ; तुम्हें लैक्चररशिप भी मिलेगी. लिख दो...'' ऊषा जी ने समझाया.

दोनों के बीच फंसी सुकन्या सोच नहीं पा रही थी क्या करे! बेचारे गौतम सर इतने अच्छे हैं कि उन्होंने आज तक गलत निगाह से नहीं देखा. हमेशा पढ़ने-लिखने की बात करते हैं. मेरे मन में उनके प्रति आदर का भाव है. तब?... उसे लगा कि वह एक तेज बहाव वाली नदी में फैंक दी गयी है जहां वह डूबती-उतराती किसी चिकने पत्थर को पकड़ने की कोशिश कर रही है.

''क्या सोच रही हो? यह समय सोचने का नहीं है. दस दिन बाद इंटरव्यू है. और तुम्हारी पी-एच.डी. भी तो पूरी होने को है, हम जमा करा देंगे अपने अंडर में! लो ये कागज पैन...'' ऊषा जी ने सुकन्या को कागज-पैन थमा दिया.

जैसे-जैसे दोनों ने बोला बिना मन के सुकन्या ने एक-एक अक्षर लिखा-गोपनीय....कुलपति....महोदय.................

''तुम बेकार इतनी घबरा रही हो. देखो एम.ए. की स्टुडेंट है न प्रमिला. उसने भी लिख कर दिया था. गौतम सर ने मुझे अपने घर बुलाया. पेपर आउट कराया. मुझे सबसे ज्यादा अंक देने का प्रलोभन दिया और मेरे साथ...'' सुनकर सुकन्या अवाक रह गयी. यह वही प्रमिला है जो गौतम सर की प्रशंसा करते-करते नहीं थकती थी. वह कुछ सोच नहीं पायी. पत्र लिखकर चेतनाशून्य सुकन्या चुपचाप उठ खड़ी हुई और ऊषा जी के घर से बाहर आ गयी. सड़क की भीड़ में बहकर जैसे-तैसे अपने घर तक पहुंची.

समय यों ही बीत गया. आठ दिन कहीं कुछ न हुआ. सुकन्या इस बीच बाहर भी नहीं निकली. ऊषा जी और चंद्रशेखर अपने अभिनय में लगे थे. डा. गौतम को पता भी नहीं था—क्या कुछ हो रहा है. सुकन्या सोचती रही कि जाकर गौतम सर से सब कुछ कह दे. बेचारे गौतम सर! क्या होगा उनका! चश्मे से झांकती उनकी सूनी आंखों और सीधे-सादे चेहरे का ध्यान उसे बार-बार आता रहा. दीदी का अपनत्व और बच्चों की प्यारी-प्यारी बातें उसके भीतर गूंजती-बजती रहीं. वह बेचैन हो उठी. पर उसकी हिम्मत नहीं हुई कि घर से निकल कर कहीं जा सके. कई रातों तक वह सो नहीं पायी. सोचती-घबराती रही कि इस मकड़जाल से उसे कब और कैसे मुक्ति मिलेगी? उसे चंद्रशेखर का सपाट चेहरा अपने सीने पर रखे हुए पत्थर-सा लगने लगा और ऊषा मैडम! छिः कितनी घिनौनी है ये सुंदर औरत! मिस ऊषा सूद!! मिस... कुमारी... कन्या, कन्या नहीं विष-कन्या तभी तो शादी के अगले ही दिन पति को खा गयी. जिंदा रहता भी तो वह सीधा-सादा आदमी इसे कैसे निभा पाता. बे सिर-पैर की बातें करती रहती है. खिलखिलाती है बेमतलब और खोखली हंसी. और ठहाके! बिल्कुल भी अच्छी नहीं लगती. चश्मा उतार ले तो आंखें कितनी भयानक लगती हैं. वह सोचती रही इन दोनों के बारे में. पर सोचने से क्या होगा? गलती मेरी ही है. क्यों फंसी पेपर आउट के लालच में शेखर के साथ, क्यों स्वार्थ जगा कि लेक्चररशिप मिल जाये. क्या पता इन लोगों ने प्रतिमा को भी लालच दिये हों. और डा. गुप्ता अपनी साली को लेक्चरर बनाने के लिए ही तो इनके साथ हैं. उसने मन ही मन तय किया अब इन लोगों से कभी नहीं मिलूंगी. इनके विषैले षड्यंत्रों का साधन नहीं बनूंगी. और एक निश्चय में उनकी मुट्ठियां तन गयीं. कल सुबह वह डा. गौतम से सब कुछ कह देगी. वे चाहे क्षमा करें या न करें!

लेकिन अगले दिन जब सुकन्या डा. गौतम के घर पहुंची तो उनके दरवाजे पर ताला लगा था. नेमप्लेट की जगह एक चौकोर उजला टुकड़ा दिखाई दे रहा था. डा. गौतम जा चुके थे. उन्होंने इस्तीफा दे दिया था.

सुकन्या की आंखों में आंसू छलछला आये. पश्चाताप की ग्लानि में डूबी हुई वह घर लौट आयी और अपने बिस्तर पर गिरकर जार-जार रोने लगी. तब वह सुकन्या नहीं रह गयी थी. विष-कन्या हो गयी थी. डा. गौतम को उसी ने तो डसा था. वह रो-रोकर उस विष को अपने भीतर से बहाकर बाहर निकाल देना चाहती थी, जो चंद्रशेखर तथा ऊषा ने उसके अनजाने उसमें भर दिया था.

पर क्या इससे डा. गौतम वापस आ सकेंगे? □

चलते-चलते

'यह देखकर मुझे खुशी हुई कि आपकी श्रीमतीजी आपकी देखभाल इतने अच्छे ढंग से करती हैं.'

'भाई साहब, मेरी देखभाल किस तरह होती है, हकीकत जाननी हो तो आप कभी अपनी अनुपस्थिति में यहां आकर तो देखिए.'

—सुबोध सहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईसा-पूर्व भी 'माताहारी' थीं

रामकुमार भ्रमर

कृष्ण कथा तथा महाभारत पर उपन्यास श्रृंखला लिखने वाले रामकुमार भ्रमर उन पुराण तथा महाभारत-कालीन सुंदरियों के क्रिया कलापों का लेखा जोखा प्रस्तुत कर रहे हैं जिन्होंने लोगों को अपने रूप जाल में फंसाकर विलक्षण कार्य किये हैं.

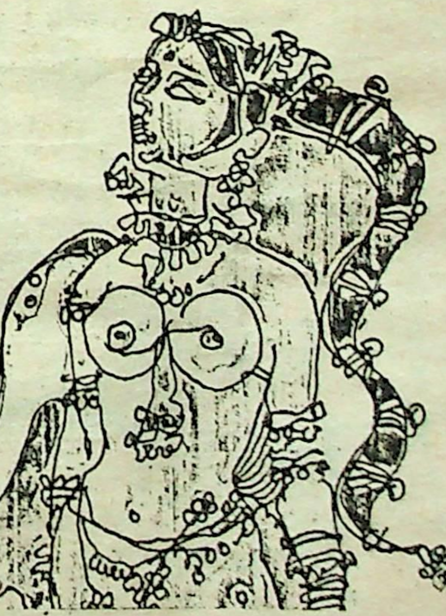

इस सदी की महानतम महिला जासूसों के नाम और विलक्षण कारनामे मेरे पढ़े और जाने हुए हैं. अब से तीन दशक पूर्व जब मैंने माताहारी की दुस्साहसपूर्ण गुप्तचर कला को लेकर पढ़ा-गुना, तब मुझे रोमांचक अनुभव हुआ था. फिर क्रिस्टीन कीलर और प्रोफ्यूमो कांड की जानकारी मिली. यह सब कुछ इस कदर चौंकानेवाला और हतप्रभ कर देनेवाला था कि बहुत समय तक उपर्युक्त दोनों ही महिला जासूस केवल मेरे लिए नहीं, मेरी तरह असंख्य लोगों के लिए कौतूहल से अधिक सनसनी का एहसास बनी रहीं. संभवतः अनेक के लिए आज भी हों...

किंतु अब से दसेक बरस पहले जब मैंने 'महाभारत' पर उपन्यास श्रृंखला लिखने का उपक्रम किया और उसके संदर्भ में पचासों प्राचीन संस्कृत ग्रंथों, उनकी टीकाओं, अनुवादों, और देशी-विदेशी कृतियों का अध्ययन किया, मुझे अनुभव हुआ जैसे माताहारी या कीलर आज से सदियों पूर्व की भारतीय गुप्तचर महिलाओं के अद्भुत और विलक्षण कारनामों की तुलना में नगण्य हैं. भारतीय संस्कृति और इतिहास दुनिया के किसी भी देश के इतिहास और संस्कृति से कहीं अधिक उलटफेरों और भूचालों को झेलते रहे मनुष्य समुदाय की अनथक यात्रा-गाथा है और इस गाथा में अब से लगभग एक हजार वर्ष पूर्व तक स्त्री, पुरुष की समान भागीदार ही नहीं रही, अपितु अनेक बार स्त्री को पुरुष की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण देखा-जाना और स्वीकारा गया है. ईसवी पूर्व का भारतीय इतिहास और पौराणिक ग्रंथ उसकी बहुविध गुणवत्ता और राजनीतिक, सामाजिक और पारिवारिक महत्व का लंबा लेखा-जोखा अंकित किये हुए हैं. इस लेखे-जोखे में अनेक ऐसी स्त्री चरित्र हैं, जो तत्कालीन राजनीति के कूटचक्रों को अपने दुस्साहसपूर्ण करतबों से हिलाते रहे. अनेक बार किसी एक चरित्र ने समूची राजसत्ता को या तो रक्षित किया या फिर ध्वंस ही कर डाला. ऐसी गुप्तचर महिलाएं समाज के प्रभावी पुरुषों, और ऋषियों के प्रभाव-नाश का कारण बनीं या फिर उन्होंने किसी का प्रभाव बहुत बढ़ा दिया. यह पहलू अलग है कि भारतीय ग्रंथों, पुराणों और महत्वपूर्ण टीकाओं में उनके गुप्तचर कर्म को भी पूरे सम्मान सहित विभिन्न रूपकों में वर्णित किया गया. उनकी सौंदर्य प्रसंशा करते हुए इतिहास में उन्हें उनका वांछित सम्मान और आदर मिला.

ऐसी स्त्री गुप्तचरों की भी कमी नहीं है, जो अपनी ढली आयु और वृद्धावस्था के बावजूद अपने देश, जाति, राज्य का समाज के लिए दुस्साहसपूर्ण गुप्तचर धर्म निबाहती रहीं. अनेक बार इन महिला गुप्तचरों ने शत्रु से क्षमा प्राप्त की और अनेक बार कूटजाल में वे बलि हो गयीं. अथवा उनकी हत्या कर दी गयी. गुप्तचर कला और कूटनीति के बीच आज जो चोली-दामन वाला रिश्ता है, उस समय भी था और जैसे कि आज इन रिश्तों में जीवन या मृत्यु कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं रहे हैं, उस काल में भी महत्वपूर्ण नहीं थे. अनेक ऐसी महिला चरित्र भी मिलती हैं, जिन्होंने अपने देश अथवा समाजहित में गुप्तचर कार्य स्वीकार किया और उसे इस बलिदान और त्याग की भावना से निबाहा, जिसकी जितनी प्रशंसा की जाये—कम है.

जब उनका नाम कथावाचक सुनाते हैं, तब वे सहसा उस रूप में समझ नहीं आतीं, जो उनका वास्तव्य था. यह भारतीय ग्रंथों और उनके प्रणेताओं की विलक्षण लेखन प्रतिभा है या कहूं कि लेखकीय ईमानदारी है कि उन्होंने प्रत्येक चरित्र का वर्णन करते हुए एक न्यायाधीश-जैसी न्यायप्रियता का ध्यान रखा. अच्छे लेखक और इतिहासकार का यह पवित्र धर्म है कि वह अपने देश, जाति और संस्कृति की गाथा रचते हुए भी, विरोधी देश, संस्कृति और उस जाति की विशिष्टताओं, चरित्रों की महानताओं और उनके गुणों के प्रति आदरभाव के साथ लेखन करे. 'महाभारत' और श्रीकृष्ण संबंधी अनके ग्रंथों पुराणों से लेकर श्रुतियों, संहिताओं में भी यह विलक्षण लेखकीय ईमानदारी मिलती है.

तत्कालीन गुप्तचर कला में भी सौंदर्य, तीव्र बुद्धि, निर्णयक्षमता और साहस जैसे गुणों का होना अनिवार्य होता था. अधिकतर गुप्तचरों अथवा गुप्तचर नारियों के नाम नहीं मिलते हैं, किंतु जिन्होंने आश्चर्यजनक कारनामे किये अथवा कार्यसिद्धि का चरम गौरव प्राप्त किया, वे जहां-तहां विभिन्न संदर्भों में उल्लखित भी हुई हैं. इन गुप्तचर महिलाओं ने साम, दाम, दंड, भेद हर नीति अपनाकर अपने कर्तव्य का निर्वाह किया, विभिन्न साधारण दृष्टि से देखने-समझने में गुप्तचर कर्म नहीं लगता, किंतु जिस उद्देश्य के लिए, जिस कारण जहां तक उनका उपयोग हुआ वह सिद्ध करता है कि वस्तुसत्य में वे गुप्तचर स्त्रियां ही थीं और उन्हें विशेष रूप से उनकी गुणवत्ता के कारण चुना जाता था.

यहां मैं उल्लेख करना चाहूंगा मेनका का. विभिन्न ग्रंथों, पुराणों, महाभारत आदि में मेनका को एक सुंदर अप्सरा भर कहा गया है और संदर्भ केवल इतना ही आया है कि इंद्र ने विश्वामित्र की तपस्या से घबराकर मेनका को उनका तप-भ्रष्ट करने के लिए भेजा. समूचा आख्यान और रूपक मेनका और महर्षि विश्वामित्र से जुड़ी घटना पर केंद्रित हो जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप इंद्र द्वारा मेनका को भेजे जाने का उद्देश्य अनायास ही साधारण पाठक या श्रोता की दृष्टि अथवा विचार से ओझल हो जाता है. यहां यह स्मरणीय है कि ऋषि की तपस्या भंग करते ही मेनका वापस इंद्रलोक को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौट गयी थी. घटना में मेनका ने ऋषि को रिझाया और कामासक्त कर दिया. पर किसलिए?... और अपनी सद्यजात पुत्री (शकुंतला), को लावारिस हालत में छोड़कर मेनका क्यों गयी?... कोई नारी मातृत्व की भावना का इस तरह बलिदान कर दे—यह वर्तमान स्थिति हो अथवा प्राचीन—असहज और अस्वाभाविक है. तब मेनका ने वैसा क्यों किया?... स्पष्ट है कि इंद्र ने ऋषि का जन-प्रभाव कम करने या उसे बढ़ने से रोकने के लिए ही अपने 'लोक' अथवा 'राज्य' से मेनका को भेजा. इस दृष्टि से देखा और विचार किया जाये तो मेनका साधारण अप्सरा भर न रहकर इंद्र की गुप्तचर हो जाती है, जिसने विश्वामित्र की प्रभाव शक्ति रोकने का कार्य इंद्र के पक्ष में पूरा किया. यहां तक कि मातृत्व की भी बलि दे डाली. अपने शरीर का उपयोग भी उस शांति किया, जिस तरह माताहारी ने युद्ध काल में विभिन्न जानकारियां एकत्र करने के लिए किया था.

यह ठीक है कि माताहारी और मेनका की कहानियां बहुत मेल नहीं खातीं, न ही घटनाओं का कोई एक-सा सिलसिला बैठता है, पर इतना सिद्ध है कि उद्देश्य रूप में दोनों का ही लक्ष्य एक था.

'महाभारत' व अन्य ग्रंथों में इस तरह के अनेक नारी पात्र उपस्थित हैं, पर श्रीकृष्ण के वायुगति जीवन खंड में अनेक महिला गुप्तचर वर्णित हैं. महाशक्तिशाली जरासंध उस काल के भरतखंड में अपनी अधिनायकवादी प्रवृत्ति के लिए आतंकरूप में जाना-माना जाता था. श्रीकृष्ण संबंधी पुस्तकों का अध्ययन करते हुए मुझे एक चरित्र मिला— तामसी. (इस तामसी नाम को मैंने मानसी के रूप में अपने उपन्यास में चित्रित भी किया है—भ्रमर) तामसी जरासंध की राजनीतिज्ञों में से एक थी. सुंदर, शोड़षी, चतुर और चपल होने के साथ-साथ अभिनय कला में प्रवीण. जरासंध ने मथुरा की यादव शक्ति को, जो गणसंघ व्यवस्था से चल रही थी, समाप्त करने के लिए इस गुप्तचरी युवती का उपयोग किया. स्वभावतः कंस (जो मथुरा के प्रमुख महाराज उग्रसेन के पुत्र और यादव गणसंघ के युवराज थे) स्त्रियों के प्रति बहुत झुकाव नहीं रखते थे. इसके बावजूद जरासंध ने तामसी की अद्भुत सौंदर्य शक्ति का उपयोग करके उसकी अभिनय-प्रवणता से कंस को अपने पिता के प्रति विद्रोह के लिए उकसवाया. इस सीमा तक कि कंस यादव गणसंघ-व्यवस्था के नाश का कारण बने. जरासंध ने कंस और अपने बीच तामसी का कूट-रहस्य समाप्त करने के लिए बड़ी कुटिलता और निर्ममता के साथ तामसी का वध भी करवा डाला था.

तत्कालीन युग में गुप्तचर महिलाओं का उपयोग केवल सूचनाएं लाना-ले जाना अथवा एकत्र करना भर नहीं था. अनेक बार उन्हें हत्याकांडों के लिए भी प्रयुक्त किया जाता था. संभवतः ऐसे ही पौराणिक आख्यानों संदर्भों को गुप्तकाल में चाणक्य ने और अधिक विकसित करके गुप्तचर महिलाओं को 'विषकन्या' की स्थिति तक पहुंचाया होगा. उदाहरण रूप में मैं पूतना की चर्चा करूंगा. श्रीमद्भागवत पुराण में पूतना-वध कृष्ण-कथा की महिमा में केवल एक कांड बनकर रह गया है किंतु पूतना संबंधी विस्तृत अध्ययन किया जाये तो पूतना को लेकर कुछ महत्वपूर्ण बातें जानने को मिलती हैं. जैसे पूतना—कंस के सेनापति और विश्वसनीय मित्र अधासुद व केशासुर की बहिन थी—जिसने स्वयं अपने आपको कंस का मार्ग निष्कंटक बनाने के लिए गुप्तचर सेवार्थ प्रस्तुत किया. वह गोपिका का ही रूप धारण करके उस स्त्री समूह में जा बैठी, जो यशोदा के यहां पुत्र होने के सिलसिले में उत्सव मना रहा था. कुछेक ग्रंथों में यह वर्णन भी आया है कि पूतना ने बालक कृष्ण को अलग ले जाकर अपने विषाक्त स्तनों का पान करवाया. किंतु इतना सत्य है कि पूतना का समूचा कर्म उसके गुप्तचर रूप का ही एक अंग है, जिसका उद्देश्य सीधे-सीधे श्रीकृष्ण की हत्या कर देना था.

श्रीकृष्ण संबंधी अन्य ग्रंथों में एक दिव्या नामक युवती की चर्चा आयी है. और एक अन्य जगह शैव्या की. 'महाभारत' में शैव्या को श्रीकृष्ण की रानियों में गिनाया गया है, जबकि स्वर्गीय श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने शैव्या की चर्चा राजा श्रृंगलव की बेटी के नाते की है, जो श्रीकृष्ण के एक सखा से बहुत प्रेम करती थी, जबकि पिता श्रीकृष्ण के विरुद्ध था. मुंशीजी के अनुसार शैव्या बहुत मानिनी थी, जिसका विवाह बाद में श्रीकृष्ण के उसी सखा से हुआ. 'कृष्णावतार' नामक अपनी उपन्यास-श्रृंखला में मुंशीजी ने कथात्मकता की दृष्टि से ऐसा कुछ किया हो, यह संभव है किंतु मुझे इस संदर्भ में बहुत प्रमाण नहीं मिले. हां, ऐसे प्रमाण अवश्य मिले, जिनके अनुसार श्रृंगलव या राजा श्रृगाल की बेटी शैव्या ने श्रीकृष्ण से प्रेम किया और उनके शुभार्थ अपने ही राज्य में, विदेशी पणियों के प्रभाव में आये हुए अपने पिता के राजभवन में गुप्तचरी ही नहीं की, बल्कि श्रीकृष्ण की युद्ध तक में सहायता दी. शैव्या को इस हेतु अनेक बार शत्रुओं से ही नहीं, पिता तक से बहुत कष्ट झेलने पड़े. प्राप्त प्रमाणों के आधार से मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैव्या के गुप्तचर धर्म से मिली सूचनाएं श्रीकृष्ण को न मिली होतीं, तब वह गोमांतक (वर्तमान गोआ) और करवीरपुर (वर्तमान कोल्हापुर) से पणि (फिनीशियंस या फोने-शियनों) को निकाल पाने में कभी समर्थ न हो पाते.

अब दिव्या की बात.दिव्या आर्यकन्या थी जो असुरराज की वासना का शिकार हुई. इस आर्य कन्या ने कुशस्थली में व्याप्त असुरराज्य को समाप्त करने के लिए अपने जीवन का खतरा उठाकर असुर शक्ति, शस्त्र भंडारों और असुर जल-शक्ति की सूचनाएं मथुरा से विस्थापित होकर रैवतक (वर्तमान गिरिनार और काठियावाड़ के आसपास) क्षेत्र में बिखरे हुए यादवों तक पहुंचायीं. दिव्या ने जीवनदान तक कर दिया, किंतु कुशस्थली, जिसे बाद में श्रीकृष्ण ने असुरों से छीनकर द्वारका नाम दिया—स्वतंत्र करवा दी. वह कुशस्थली स्थित उन आर्यों और मथुरा से आये विस्थापित यादव आर्यों के बीच संपर्क सूत्र का काम करती थी—जो कुशस्थली के विशाल क्षेत्र में असुर शक्ति के कारण दमित पड़े हुए थे. इस गुप्तचर धर्म में अनेक बार सुंदरी आर्यकन्या दिव्या को अपने वाकचातुर्य का परिचय देना पड़ा, अनेक बार उसने अपना देह विलासी असुरों को समर्पित किया. बहुत बार ताड़ना झेली और अंत में प्राण भी दिये.

'हित-हरिवंश' में शंबर नामक एक दैत्य की चर्चा आया है. इसकी पत्नी मायावती बड़ी आयु की होते हुए भी श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न पर रीझ गयी. इस सीमा तक रीझी कि उसने अपने पति शंबर द्वारा श्रीकृष्ण से विरोध के कारण अपहरित किये गये प्रद्युम्न पर ही प्रेम उंडेल दिया. प्रद्युम्न के बचाव के लिए मायावती ने अनेक दैत्य जाति की गुप्तचर दासियां और सुंदरियां रख रखी थीं और फिर एक दिन आया जब प्रद्युम्न और शंबर में भयानक युद्ध हुआ और शंबर हत हुआ. मायावती समुद्र पार करके प्रद्युम्न के साथ द्वारका चली आयी, जहां श्रीकृष्ण-रुक्मिणी ने मायावती का प्रद्युम्न के प्रति प्रेम स्वीकार किया. उसे प्रद्युम्न की रानी बनाया. वस्तुस्थिति में मायावती की गुप्तचर प्रणाली के कारण ही श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न की रक्षा शंबर से की जा सकी.

श्रीकृष्ण-कथा में ऐसी अनेक स्त्री चरित्रों के नाम या नामहीन वर्णन मिलते हैं, जब उनके गुप्तचरी सहयोग से या तो कृष्ण की रक्षा हुई अथवा श्रीकृष्ण ने जय प्राप्ति की. अनेक ऐसी स्त्रियों का भी वर्णन आया है, जिन्होंने श्रीकृष्ण के विरुद्ध गुप्तचर-कर्म करके उनके विरुद्ध सूचनाएं असुरों या उनके विरोधी आर्य राजाओं तक भेजीं.

प्राचीन भारत में स्त्रियां या पुरुष, गुप्तचरों का प्रारंभ कब और कहां से हुआ, यह ज्ञात नही होता, किंतु इतना अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है कि तबाकी गुप्तचर प्रणाली में स्त्री और पुरुष समान रूप से सक्रिय भाग लेते थे. अनेक बार वे रूप परिवर्तन करते थे, अनेक बार उन्हें भाषा, संस्कृति यहां तक कि धार्मिक परिवर्तन करके भी गुप्तचरी करते हुए वर्णित किया गया है. ईसा पूर्व के भारत में ज्ञान-विज्ञान यदि अपने चरमोत्कर्ष पर थे तो गुप्तचर कला भी उतने ही उत्कर्ष पर थी. 'महाभारत' में (उद्योग पर्व अध्याय-192 श्लोक-क्रम-50 से 60 के बीच) गुप्तचरों के होने का उल्लेख आया है. इन गुप्तचरों को भीष्म ने चुनौती दे गयी राजकुमारी अंबा के पीछे लगाया था. लिखा है—"...मैंने राजा द्रुपद के यहां अंधे, गूंगे गुप्तचरों को भेज रखा है ताकि वे अंबा की प्रत्येक राजनीतिक गतिविधि का समाचार तुरंत मुझ तक पहुंचाते रहें!"

इसके अतिरिक्त 'महाभारत' में कुरुक्षेत्र के महायुद्ध से पूर्व अनेक स्थानों पर दुर्योधन कृष्ण और युधिष्ठिर द्वारा बिखरायी गयी गुप्तचर व्यवस्था का वर्णन भी आया है, जिसमें कहा गया है कि विभिन्न राजाओं, राजनिवासों और जन-साधारण के बीच ऐसे गुप्तचर स्त्री-पुरुष फैला दिये गये हैं, जिनके कारण कुछ ही पलों में यहां से वहां तक सूचनाएं पहुंचायी जा सकती हैं. (उद्योग-पर्व—153 वां अध्याय)

द्वितीय विश्वयुद्ध में ऐसे अनेक जर्मन और पश्चिमी राष्ट्रों के युद्ध-केंद्रों का वर्णन मिलता है, जिनमें सैनिक, अधिकारी आदि 'मनोरंजन' किया करते थे. उन्हें उत्तम भोजन, सुंदरियां और शराब इत्यादि दी जाती थी. इन वेश्याओं या सुंदरियों में अनेक गुप्तचर होती थीं. यह संयोग नहीं है कि आज से पांच हजार वर्ष पूर्व हुए महाभारत युद्ध का वर्णन करते हुए (उद्योग-पर्व अध्याय-151 श्लोक क्रम-55 से 60) वर्णित है कि उसमें भी असंख्य युद्ध केंद्र थे. उनमें छकड़े, बाजार, डेरे, छोलदारियां, कनातें, वेश्याओं के डेरे, सवारियां, वाहन, खजाना, यंत्र शस्त्रास्त्र, वैद्य आदि उपस्थित थे. यह चर्चा करते हुए एक स्थान पर कृपाचार्य, दुर्योधन को सतर्क करते हैं—"हे दुर्योधन, अनेक सुंदरियों, सैनिकों और राजपुरुषों के अतिरिक्त संभव है कि सेवकों में गुप्तचर भी उपस्थित हों, अतः सावधान रहना!"

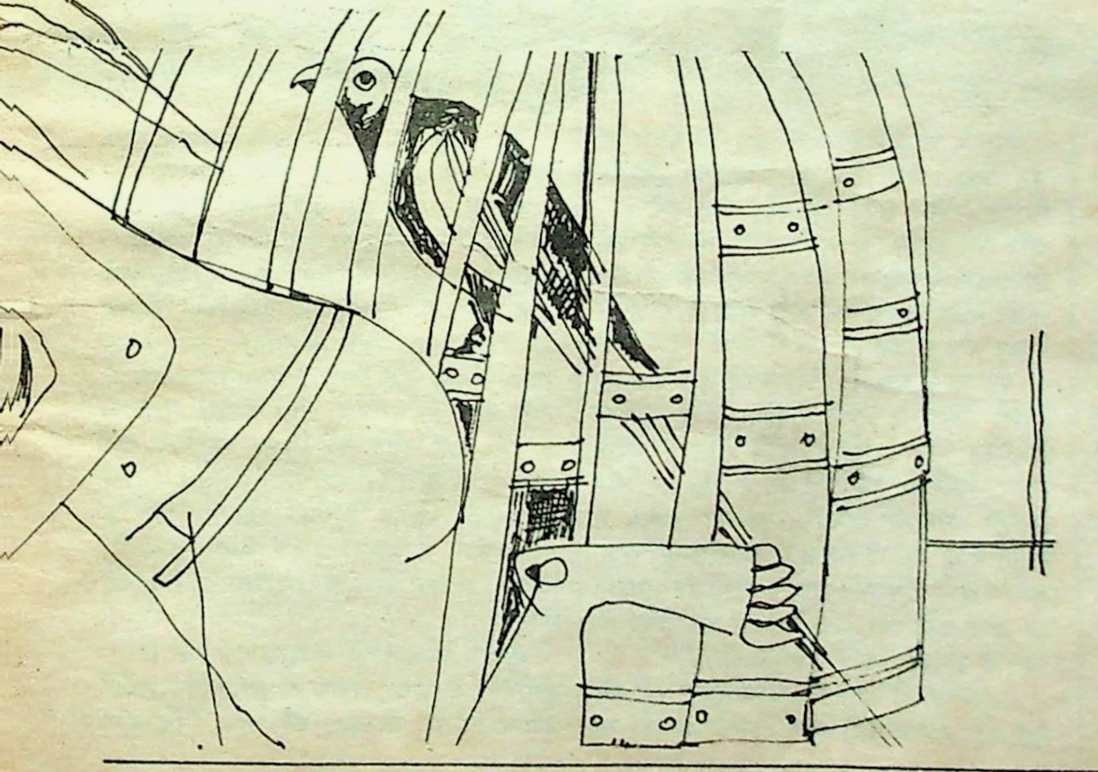

इससे भी आगे 'महाभारत' काल में इस तरह की चेतावनियां वर्णित हैं, जिनके अनुसार विरोधी पक्ष, एक-दूसरे के सैन्य केंद्रों, शस्त्रागारों आदि में गुप्तचरों द्वारा भयंकर विस्फोट आदि करवा सकते थे. उद्योग पर्व के 125वें अध्याय में ही विस्तार से इस सबका वर्णन आया है. (अध्याय-195 में श्लोक-क्रम-19) उद्योग पर्व में ही दुर्योधन का युद्ध-समय पर व्यवस्था कर्म वर्णित है—"...दुर्योधन स्वयं. कारीगरों, मजदूरों, नौकर-चाकरों, सूत-माघ-बंदीजनों, बनिये-व्यापारियों, वेश्या बाजारों, स्त्री-पुरुष गुप्तचरों, दर्शकों (जनता तक सूचना पहुंचाने वाले तो नहीं?) की देखभाल करता था..."

उपर्युक्त सभी संदर्भ इस सत्य को प्रमाणित करते हैं कि भारतीय संस्कृति और आर्य इतिहास के लिए किसी 'माताहारी' या 'हेलेन कीलर' का आज होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है. प्राचीन काल की भारतीय गुप्तचर कला में स्त्री-पुरुष—दोनों ही पारंगत होते थे और अपना कार्य योग्यतापूर्वक निबाहते थे. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''जब किसी स्त्री के दो पति मर जायें, और दोनों को ही पेट में बीमारी हो, और वह भी विवाह के दो साल बाद और दोनों ही अपने पीछे पत्नी के लिए बहुत बड़ी जायदाद छोड़ जायें तो....!

हत्यारिणी

सी.पी. डोनेल

फूलों से सजे हुये ऐसे घर की उसे आशा नहीं थी. और फिर उस घर की स्वामिनी को देखकर तो उसे और भी आश्चर्य हुआ. मादाम चालोन अपनी चालीस वर्ष की आयु में बिल्कुल हत्यारिन नहीं लगती थी. उसने उसे देखते ही सोचा, यह तो ज्ञान की रोमन देवी 'मिनर्वा' के समान है. उसकी बड़ी-बड़ी चमकती हुई आंखों का रंग उस गहरे रंग के भूमध्य सागर से कुछ ही हल्का था, जो कमरे की बड़ी-बड़ी खिड़कियों में से बाहर चमकता हुआ दिखाई दे रहा था.

और अधिक ध्यान से देखने पर उसने फिर सोचा, नहीं, यह बिल्कुल मिनर्वा नहीं है. उसके कपोलों की रंगत किसी अट्ठारह वर्षीय युवती के कपोलों की रंगत जैसी थी, और उसके सुकोमल, सुडौल अंगों में कुछ ऐसी बात थी कि दृष्टि उन्हें देखती ही रह जाती थी. उस जितने वजन की किसी भी लापरवाह स्त्री का शरीर भारी भरकम हो सकता था, पर मादाम चालोन का अंग-अंग तराशा हुआ था. उसने अपने शरीर की इस प्रकार संभाल की थी कि साठ वर्ष की हो जाने पर भी उसके शरीर में कोई विशेष परिवर्तन आने की संभावना नहीं थी.

''आप इंस्पेक्टर मिरोन हैं?'' उसने पूछा. और फिर जब वह बातें करने लगा, तो वह गिलासों में शराब डालने लगी. इस पर इंस्पेक्टर की हिचकिचाहट को देखकर मादाम चालोन की आंखों में हल्की-सी चमक आयी, जैसे वह उस पर हंसी हो; परंतु उसे उसने अपने होंठों पर मुस्कराहट के रूप में प्रकट नहीं किया.

''धन्यवाद,'' इंस्पेक्टर ने कुछ घबराकर अपनी आवाज पर जोर देते हुये कहा.

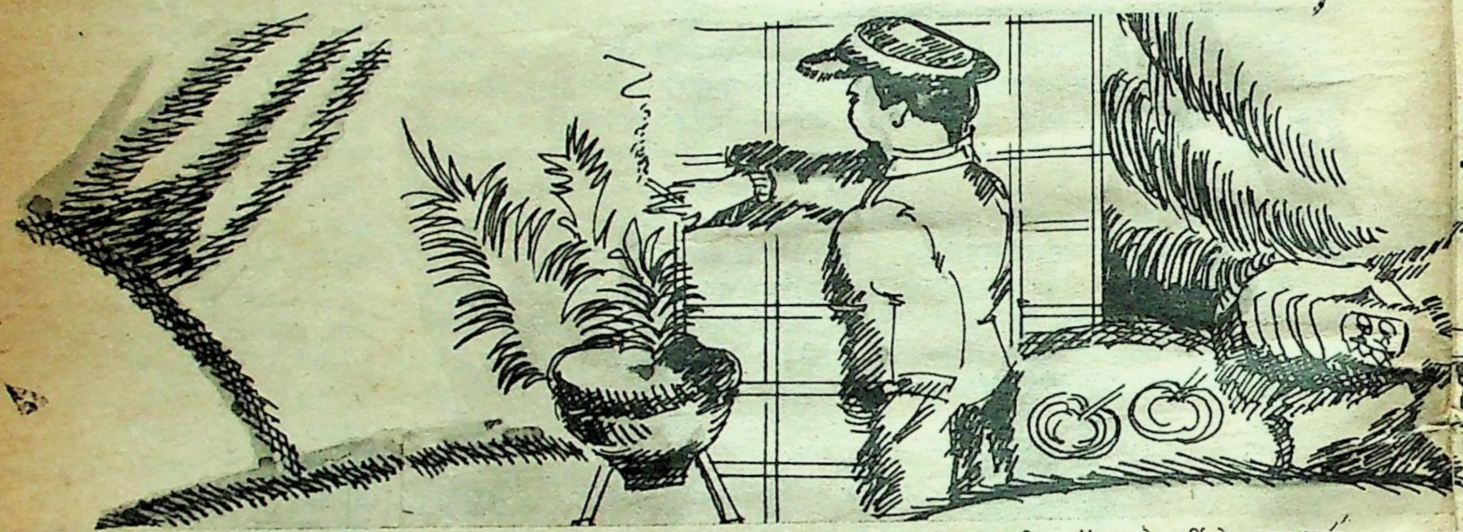

मादाम चालोन ने पहले स्वयं एक छोटा-सा घूंट भरा, जैसे कहा हो, ''देखिये, मिस्टर मिरोन, इसमें खतरे की कोई बात नहीं है.'' और वह हल्का-सा मुस्कराई. ''तो आप इस सिलसिले में पूछताछ करने आये हैं कि क्या मैंने अपने दोनों पतियों को जहर दिया है?'' उसने स्पष्ट रूप से कहा.

वह कुछ संभला और उसमें एक अफसर वाली गंभीरता आयी. ''मादाम, मैं आपकी इजाजत लेने आया हूं ताकि मिस्टर चार्ल्स वेरुर, जिनका 1939 में देहांत हुआ था, और मिस्टर एटियन चालोन, जिनका 1946 में देहांत हुआ था, के संबंध में पूछताछ कर सकूं. आप स्थानीय पुलिस दफ्तर के सार्जेंट लूकेयर को कोई बात बताने से इनकार कर चुकी हैं. क्या मैं इसका कारण पूछ सकता हूं?''

''लूकेयर की बातचीत सभ्यतापूर्ण नहीं थी. मुझे वह अच्छा नहीं लगा. उसमें आपका-सा सलीका नहीं है. मैंने एक व्यक्ति का रवैया पसंद नहीं किया, कानून का तो नहीं. कानून की मैं अब भी इज्जत करती हूं.'' उसने पीने के लिए गिलास उठाया. ''मैं आपको बताने से इनकार नहीं करूंगी, इंस्पेक्टर मिरोन.'' उसकी आंखों में सम्मान था.

''यह आप की कृपा है.''

''यह इसलिए,'' उसने नर्मी से कहना शुरू किया, ''क्योंकि पैरिस की पुलिस के तरीकों को मैं जानती हूं और मुझे पता है कि गुप्त रूप से मेरे बारे में सब कुछ पता लगाया जा चुका है.'' उसने इंस्पेक्टर के चेहरे पर एक नया रंग आने दिया, पर यह अनुभव नहीं होने दिया कि वह उसे देख रही है. ''और विश्लेषण,'' उसने इस प्रकार कहना शुरू किया जैसे बात पहले से ही जारी थी, ''हो चुका है. आप उलझन में हैं कि आपको कोई सबूत नहीं मिला. इसीलिये अब आप मुझसे मिलकर सब बातों का पता लगाना चाहते हैं. शायद आपकी कोशिश हो कि बातों-बातों में आप मुझसे वे बातें कहला लें, जिनके आधार पर मुझे अपराधी ठहराया जा सके.''

मादाम चालोन की ये बातें चुभने वाली थीं. इंस्पेक्टर ने सोचा, अच्छा हो अगर बिना किसी घुमाव-फिराव के बात की जाये. ''बिल्कुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक है, मादाम चालोन, बिल्कुल ठीक.' पर उसने बड़ी सतर्कता से कहा, ''जब किसी स्त्री के दो पति मर जायें और दोनों को ही पेट की बीमारी हो, और वह भी विवाह के दो ही साल बाद, और दोनों ही पीछे अपनी पत्नी के लिये बहुत बड़ी जायदाद छोड़ जायें... मेरा मतलब है...''

''बेशक.'' मादाम चालोन खिड़की के पास जाकर खड़ी हो गयी. सामने नीले समुद्र की पृष्ठभूमि के सामने उसके चेहरे के आधे भाग और उसके उभरे हुये वक्ष की रूपरेखा दिखाई दे रही थी. ''क्या आप मुझसे अपराध की पूर्ण स्वीकृति चाहते हैं, मिस्टर मिरोन?''

''अगर आप स्वीकार कर सकें, मादाम चालोन,'' उसने कहा और फिर मन में कहा, कैसी खतरनाक औरत है!

''अच्छी बात है.'' अब मादाम चालोन मुस्करा नहीं रही थी. खिड़की में से आने वाला हवा का झोंका अपने साथ मादाम चालोन की सुगंधी लाया. या क्या यह बाग की सुगंधी थी? क्या सचमुच यह स्त्री इतनी आसानी से सब

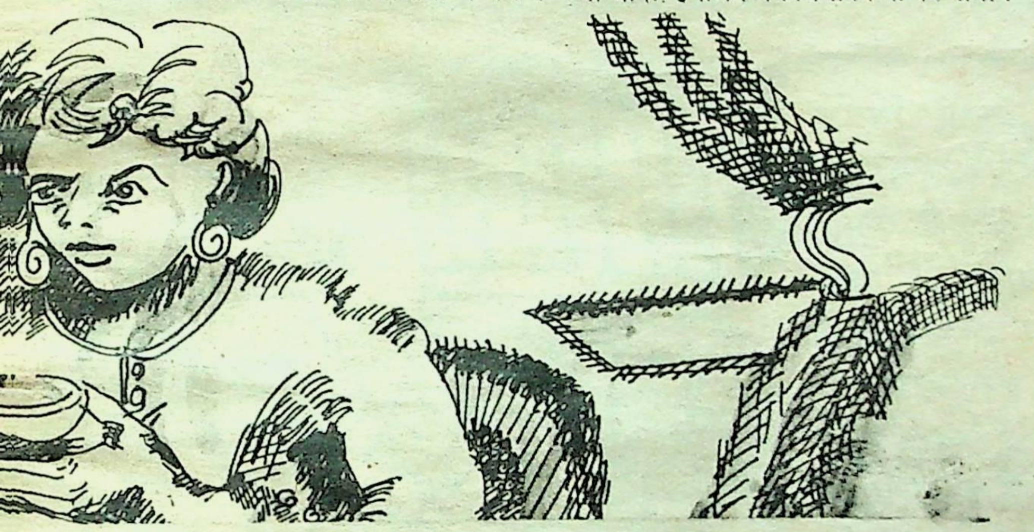

कुछ बता देगी?

''आप भोजन की कला के बारे में तो जानते होंगे, मिस्टर मिरोन?''

''आप जानती हैं कि मैं पेरिस से आया हूं.''

''और प्यार की कला के बारे में भी?''

''जैसा कि मैंने कहा है, मैं पेरिस से आया हूं.''

''तब...'' दीर्घ श्वास में उसका वक्ष उभरा. ''मैं आपको बता सकती हूं कि मैंने धीमे-धीमे, जानबूझकर और विशेष मनोरथ से अपने पहले पति, मिस्टर वेरुर की हत्या की है, जो 57 वर्ष की आयु का था और इसी प्रकार अपने दूसरे पति मिस्टर चालोन की भी हत्या की है, जो 65 वर्ष का था. मिस्टर वेरुर से मैंने अपने परिवार के अनुरोध पर विवाह किया था. तब मैं बच्ची नहीं थी. पंद्रह दिन में ही मैंने जान लिया कि मिस्टर वेरुर की भूख का अंत नहीं है. ऐसा भूखा आदमी मैंने कभी नहीं देखा था. वह उजड्ड, चापलूस, गरीबों को छलनेवाला, निर्दोषों को धोखा देने वाला था. बेहद गंदा आदमी और दिन-रात खाने वाला. संक्षेप में मैं कहूं कि उसमें वृद्धावस्था के सारे ऐब थे, पर वृद्धावस्था की न तो सहृदयता थी, न ही स्वाभिमान था. एक कारण यह भी था कि उसका मैदा बहुत कमजोर था.'' मिस्टर वेरुर के बारे में यही बातें इंस्पेक्टर को पेरिस में भी ज्ञात हुई थीं. उसने हां में सिर हिलाया और फिर कहा, ''और मिस्टर चालोन?''

''वह और भी ज्यादा उम्र का था. क्योंकि तब मेरी भी उम्र ज्यादा थी.''

''और शायद मैदा भी कमजोर था?'' उसने हल्के से व्यंग्य के साथ कहा.

''बेशक. बल्कि यह कहिये कि उसकी इच्छाशक्ति भी कमजोर थी. वह वेरुर से कम बर्बर था. जबकि हम अच्छे से अच्छे भोजन और शराब का आनंद ले रहे थे, सड़कों पर बच्चे भूख के कारण बेहोश पड़े हुये होते. मैं 'हत्यारिन' हो सकती हूं, इंस्पेक्टर, पर फ्रांसीसी स्त्री भी हूं. इसलिये मैंने बिना किसी पश्चाताप के यह फैसला किया कि चालोन को मर जाना चाहिये, जैसे कि वेरुर मरा था.''

बिना कोई विघ्न डाले इंस्पेक्टर ने आहिस्ता-से कहा, ''कैसे मादाम चालोन?''

वह मुड़ी. उसके चेहरे पर मुस्कराहट चमक रही थी. ''शायद आप उन स्वादिष्ट भोजनों के बारे में जानते हैं जिनके नाम हैं...''

''नहीं, उनके नाम लेने की जरूरत नहीं है, मादाम चालोन. उनके ख्याल ही से मेरे मुंह में एक साथ पानी भी भर रहा है और गला भी रुंधा जा रहा है. ऐसे स्वादिष्ट भोजन.''

''हां, तो मैंने इन सैंकड़ों प्रकार के भोजनों का उपभोग किया. और उनमें से हर एक में मैंने एक चीज डाली...'' वह अचानक रुक गयी.

''कौन-सी चीज मादाम चालोन?''

''आपने मेरे बारे में पूरी जांच-पड़ताल की है. आप जानते होंगे, मेरे पिताजी कौन थे?''

''क्यों नहीं, अच्छी तरह जानता हूं.''

''हां, तो मैं जब बाईस वर्ष की थी, तो मेरे पिताजी अपने देहांत के कुछ पहले मुझे अपने बराबर ही समझने लगे थे.''

''बहुत खूब!'' इंस्पेक्टर ने सोचा कि यह सुंदर स्त्री बात को किधर ले जा रही है. ''पर आपने कहा है कि आपने उन खानों में से हर एक में एक चीज...''

मादाम चालोन ने उसकी ओर पीठ कर ली. इंस्पेक्टर ने मन ही मन उसके कंधों की प्रशंसा की. कमर भी क्या खूब थी! और कूल्हे!.... वह जैसे समुद्र को संबोधन करके कह रही थी. ''बस अपनी थोड़ी-सी कला और कुछ नहीं. सचमुच और कुछ भी नहीं, इंस्पेक्टर! वेरुर या चालोन जैसा व्यक्ति कैसे इनकार कर सकता था? दिन में तीन-चार बार मैं उन्हें अच्छी से अच्छी पौष्टिक खुराक खिलाती—ऐसी खुराक, जिसे पचाना आसान नहीं था. हां, मैं उन्हें ठूंस-ठूंसकर खिलाती. फिर सुला देती. उठने पर फिर खिलाती. और इतनी शराब पिलाती कि वे और ज्यादा खाते. अपनी उस उम्र में इतना खा-खाकर भला वे कैसे जीवित रह सकते थे? वे इतनी देर जीवित रहे, यह भी गनीमत थी!''

वह चुप हो गयी.

आखिर इंस्पेक्टर ने कहा, ''और प्यार, मादान चालोन? माफ कीजियेगा, आप ही ने इसका जिक्र किया था.''

''पौष्टिक खाने प्यार को जन्म देते हैं या कहिये, प्यार जैसी किसी वस्तु को. मैं खुद तो उनके पास थी ही. कभी दूसरी लड़कियां भी उनके पास जातीं, तो मैं उन्हें रोकती नहीं थी. आखिर वे मर गये. वेरुर 57 वर्ष की आयु में, चालोन 65 वर्ष की आयु में. और बस.''

फिर स्तब्धता छा गयी. वह स्तब्धता जैसे गूंज रही थी. तभी इंस्पेक्टर इस प्रकार अचानक उठा कि वह चौंकी और घूमी. उसका रंग और भी पीला पड़ गया था.

''आज शाम को आप मेरे साथ 'नाईस' चलेंगी, मादाम चालोन?''

''पुलिस स्टेशन पर, इंस्पेक्टर मिरोन?''

''नहीं, कासीनों में. शराब पीने और संगीत सुनने. वहां और बातें करेंगे.''

''पर इंस्पेक्टर मिरोन!''

''सुनिये, मादाम. मैं अविवाहित व्यक्ति हूं चव्वालीस वर्ष की आयु का. देखने में मैं इतना बुरा नहीं हूं. मेरे पास काफी धन है. मुझमें यद्यपि वह आकर्षण नहीं है, पर मुझसे घृणा भी नहीं की जा सकती.'' उसने उसकी आंखों में देखा. ''मैं मरना चाहता हूं.''

मादाम चालोन ने अंत में सोचते हुये कहा, ''भोजन का अगर सही मात्रा में उपयोग किया जाये, तो वह किसी भी हालत में बुरा नहीं है. क्या आप मेरा हाथ चूमेंगे, इंस्पेक्टर मिरोन?'' □

अनु : ब.स.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनो, परीक्षित सुनो

जन्म : 19 अगस्त 1929
'अलग-अलग वैतरणी', 'गली आगे मुड़ती है' (उपन्यास), 'अंधकूप', 'एकक यात्रा सतह के नीचे' (कहानी) जैसी संप्रति : काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग में प्रोफेसर एवं अध्यक्ष.

शिव प्रसाद सिंह

"तू कौन है बे, सड़े बकरे की तरह बदबू करने वाला. देख नहीं रहा है सामने कुरुवंश के उत्तराधिकारी राजा परीक्षित खड़े हैं?" किल्विष ने कहा.

"राजा को मुझसे अधिक पहचानने वाला अब कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है किल्विष. मैं बहुत रहस्य से भरा भरा लग रहा हूं न तुझे. सच तो यह का दोष क्या है. तुमने स्वर्ण कुंडल और नरेशों की तरह कपड़े से चमचमाते हुए कलियुग को शूद्र क्यों कहा? कहा था या नहीं?"

"कहा था, किल्विष, कहा था. यह झूठ बोल रहा है, इसी से पूछो कि वह इन गरीब पशुओं को बेरहमी से पीट नहीं रहा था. क्या काले कोयले के शरीर पर राजवेश देखकर मुझे लगा कि यह शूद्र है जो मूक जानवरों

क्या खुद के माने छल हैं, क्या विश्व युद्ध में अपनी रक्षा के लिए ब्रह्मशिर का प्रयोग उचित है. कौन सोचता है ऐसा? अब धर्मयुद्ध का यवनिकापात हो गया अश्वत्थामा. जिस ब्रह्मशिर को मेरे हाथों से सौंपते हुए मानव विरुद्ध इस्तेमाल न करने की शपथ करायी, वे खद उसी पर दृढ़ रह सके क्या?"... इस कथा का एक भाग आप पिछले अंक में पढ़ चुके हैं

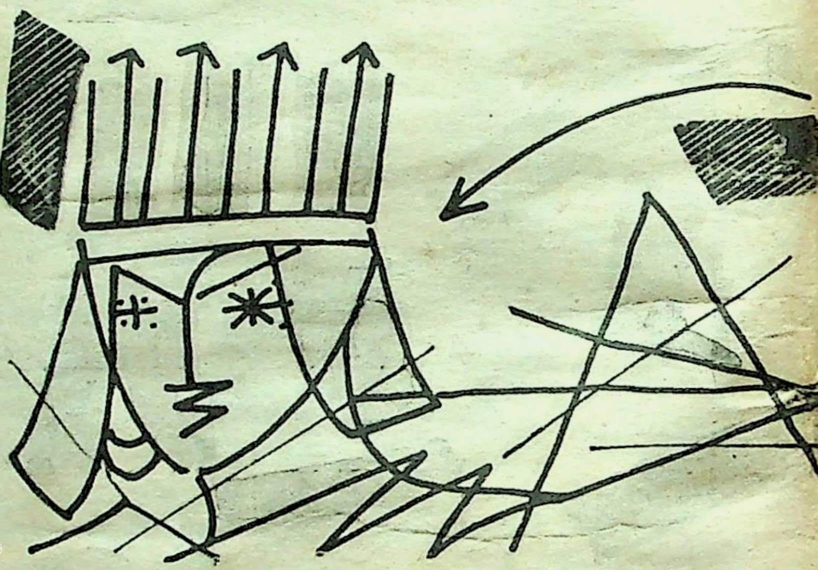

किल्विष कि तूने मुझसे पहले जन्म ले लिया. तू हमारी प्रजा का सबसे मजबूत हथियार है. धूर्तता कलियुग की खुराक है. बिना किल्विष के कलियुग बेकार है."

"सुनो किल्विष, राजा खुद की भयत्रस्त है. भ्रमग्रस्त है. कलियुग को तुम्हारे चित्रकारों ने, कवियों और इतिहासकारों ने ऐसा जामा पहना दिया है कि वे खुद उसी भंवर में उलझ गये हैं. क्या है शुभ्र बैल की कल्पना! चार में से तीन पैर गायब थे तो बताओ यह वृषभ एक पैर पर खड़ा कैसे था. वह लगातार मूतता रहता. बगल में गौ माता बछड़े से बिछुड़ी आर्तनाद करती रही. इनकी यवनिका पर मुझ बेचारे को उतारना कहां का न्याय है, बोलो किल्विष?"

"राजन्" किल्विष बोला, "क्या यह सच-सच कह रहा है? बताओ राजा बैल का कौन-सा पैर साबुत बचा. चारों में से तीन के गायब होने का मतलब है कि किसी बहुत बड़े वैद्य ने बैल के पेट में वह पैर जोड़ दिया हो. तुमने सुना कि यह दुर्गंध से भरा कलि तुम्हारा मजाक उड़ा रहा है. कोई गाय का बछड़ा मर जाय तो वह आंसू बहायेगी ही फिर इसमें कलि को पीट रहा है. क्यों रे तू ही बोल किल्विष से कि शूद्र है या नहीं?"

"अगर जानवरों को बिना अपराध पीटना ही शूद्र का कर्म है तो बोल परीक्षित क्या तुझे मालूम है कि पश्चिमोत्तर भारत में बैल गाय के मांस को खाने वाले सैकड़ों हैं. क्या तेरे पूर्वज जिन्हें तुम लोग बहकावे में आर्य कहते हो और उनको सप्तसिंधु का वासी बताते हो, बैल, गाय, बछिया पूजना तो दूर इन्हें मारकर आंच और लपट में भूनकर खा जाते हैं. तू तो आसमान से त्रिशंकु की तरह लुढ़का दिया जायेगा अगर बताऊं कि संस्कार भोजन से नहीं मानसिकता से बनते हैं. तेरे पूर्वज क्या गोमांस भक्षण नहीं करते थे. बोल जल्दी?"

"वे ऐसा नहीं करते होंगे. अगर वे आये हैं तो आर्यों का संस्कार भी होगा ही उनमें. सवाल पशु के मांस भक्षण का नहीं है वह तो शिकार में हम भी हिरन, नील गाय, शकर, साही आदि को भूनकर खाते हैं," परीक्षित बोला.

"वाह रे राजा, क्या तेरे व्यास भगवान् ने नहीं लिखा है कि रंतिदेव की पाकशाला में प्रतिदिन दो हजार गायों का वध किया जाता था?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किल्विष ठठाकर हंसा, "तुम महल वालों के वचन भी बहुत उलझे-उलझे होते हैं. फूंक-फूंककर पैर रखे बिना वहां धूर्त किल्विष भी धोखा खा जावेगा."

"खैर छोड़ इसे," कलि बोला, "तू जब अपनी रक्षा खुद नहीं कर सका तो तेरे पिता के मातुल ने तेरी रक्षा की, तो तू अपनी प्रजा की रक्षा क्या कर पायेगा. तू मुझे तीर से बेध कर मारना चाहता है, क्यों? क्योंकि तुझे घुट्टी में पिलाया गया है कि सब टंट-घंट की जड़ समय होता है. वह भी यमराज के नुमाइंदे की तरह छद्म का ही रूप लगता है. बोल तेरे ऋषियों ने चतुर्युग की जो कल्पना की है, उसका समय विस्तार कुल कितने वर्षों का होता है?"

"मुझे ठीक से मालूम नहीं है कलि, पर करोड़ों वर्षों से कम नहीं होगा."

"चल तूने यह तो कहा. मैं प्रसन्न हूं. अब बता कि इन करोड़ों वर्षों में कितनी बार कलियुग आया इस जमीन पर?"

"मुझे मालूम नहीं. ऋषियों ने कहा है कि चतुर्युग में एक बार तो आता ही है."

किल्विष और कलि खिलखिला उठे, "मूढ़ यह सब तुझे मकड़जाल में बांधने के तरीके हैं. क्या जब विष्णु ने कच्छप अवतार लिया तो कलियुग आया था."

"नहीं, तब सतयुग था."

"क्या जब उन्होंने मत्स्य अवतार लिया तो कलियुग दिखा कहीं? क्या जब उन्होंने, पृथ्वी को, जो तेरे ज्योतिषियों के अनुसार समुद्र में समा गयी थी, जलौघमग्ना कहा तो क्या महावाराह बनकर कलियुग आया था?"

"नहीं."

"क्या जब हिरण्यकशिपु ने पृथ्वी को संतप्त बनाया था, अपने भक्तों की रक्षा के लिए तुम्हारे भगवान् ने नृसिंह अवतार लिया, बोल यह क्या कलियुग के कारण हुआ? क्या जब परशुराम ने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन किया तब भी वहां कलियुग ही था? क्या रावण, कुंभकर्ण और इंद्रजीत मेघनाद ने राम को संत्रस्त कर दिया, पत्नी छीन ली, वनवासी, दुखों में डूबे दोनों भाई मारे-मारे फिर रहे थे, बोल राजा क्या यह सब कलियुग के कारण हुआ. क्या अपने स्वार्थ से तेरे पिता के मातुल ने यह विराट महाभारत रचाया तो उनके कार्यों को उचित ठहराने के लिए तूने अपने अपराधी पूर्वजों को कलियुग के नागदंत (खूंटी) पर टांग दिया है. यह तुम्हारी सचाई है कि दरिंदे जब कानून को लात मारकर अधर्म करते हैं, सांप्रदायिकता फैलाते हैं, अपने-अपने मजहब के लिए एक दूसरे का खून कर देते हैं तो इसे तुम उसी नागदंत पर टांग देते हो, यानी कलियुग पर. क्या अपने को जनता का सेवक कहलाने वाले जब नीच से नीच बर्बर हिंसा का समर्थन करते हैं, तब तुम उनकी तानाशाही को छिपाने के लिये धर्मनिरपेक्षता का नकाब लगाते हो. क्या हर बार यह सब कराने के पीछे कलियुग का ही अपराध है. सुनो परीक्षित, सुनो! तुमने या नामशेष कलि ने किसी ने भी प्रलय को नहीं देखा है. प्रलय और सृष्टि के चक्रों का यह मोतियाबिंद उन आंखों की ज्योति छीन रहा है जो इंसानियत जानती ही नहीं, असली चक्र तुम्हारे पिता के मातुल के पास नहीं, उन धन-पशुओं की तर्जनी में घूम रहा है जो प्रजा को ही नहीं न्याय प्रिय राजा को भी नहीं बख्शते. वे चक्राकार स्वर्ण सिक्कों के बदले कभी भी, कहीं भी हत्यायें करा सकते हैं. योग्य की कुर्सी छीन कर अयोग्य को बैठा देते हैं."

"बस करो, बस करो." परीक्षित चिल्लाया, "तुम मुझे अपमानित करने आये हो?"

"नहीं. मैं अपमानित करने नहीं आया, न तो तुम्हारे पुत्र जनमेजय को डराने आया हूं. सिर्फ कहने आया हूं अग्नि प्रलय और जल प्रलय में क्या अंतर है. दुनिया के तमाम धर्म ग्रंथों में जल प्रलय का उल्लेख है. किंतु द्वादशसूर्यों की ज्वाला से प्रलय केवल इस बार हुआ है, जो भौतिकी तुला पर दुनिया को परखने वाले ही बता सकते हैं कि यह क्या है? यह किसी अज्ञात शक्ति का विधि विधान नहीं है. अपने पितामहों का करिश्मा कह कर नाचना है तो नाचो. अब क्या नाचेगा कोई. विकलांगों का नृत्य विकलांग भी देखने की जुर्रत नहीं करेंगे."

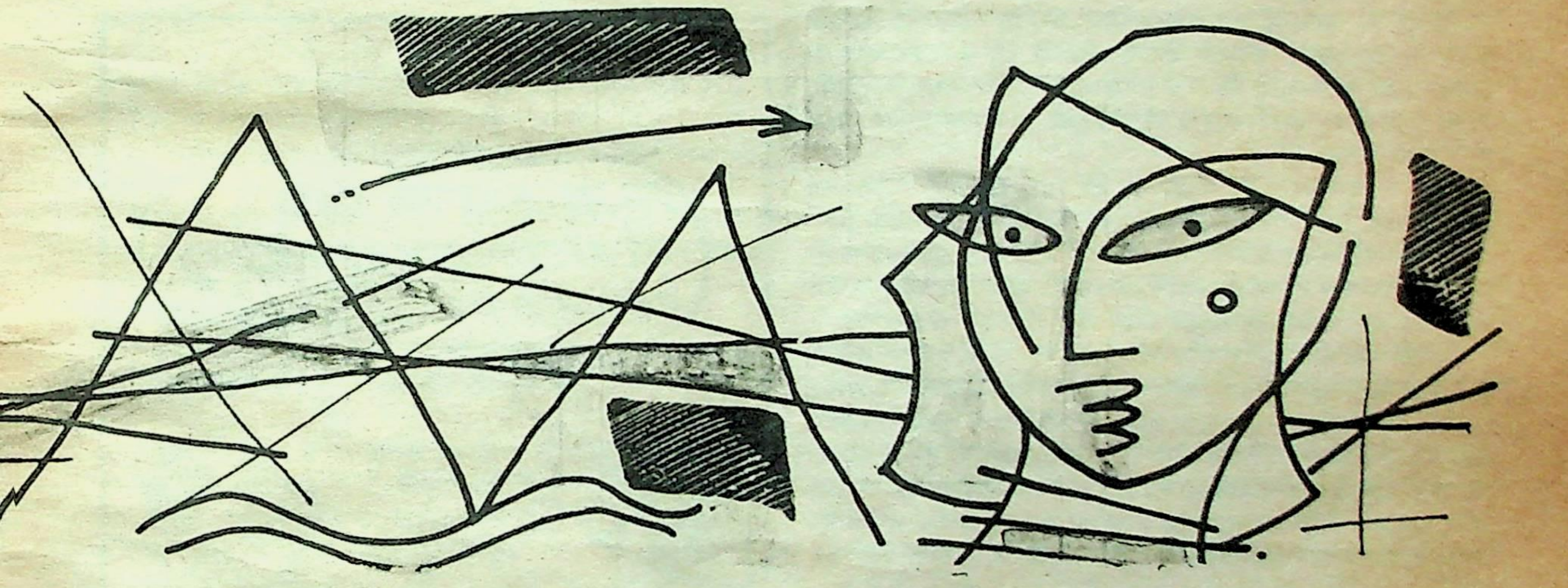

"वाह भाई कलि, तुमने हमारी आंखें खोल दीं." किल्विष खिलखिलाया, "क्यों रे राजा मनु, सतरूपा के पहले भी जल प्रलय हुआ था. उन्होंने पुनः सृष्टि का निर्माण कराया. आदम और ईव के जमाने में भी जल प्रलय हुआ था? पुनः आदमी आया. पर किसी ऐसे प्रलय का नाम बता जो द्वादश आदित्यों के एक साथ उदित होने का परिणाम कहा जा सके?"

"मुझसे क्यों पूछ रहे हो किल्विष और कलि. मेरा ख्याल है कि इस घटना को देखकर वैज्ञानिक द्वैपायन व्यास ने जो कहा उसे तुम दोनों ने कोरी गप्प या कल्पना नहीं माना. तुम्हें व्यास पर विश्वास है तो उन्हीं से पूछना चाहिए यह प्रश्न."

"मैं साफ कह दूं परीक्षित, कि सत्य की परीक्षा बाकी है. मैं व्यास को बहुत बड़ा इतिहासकार और वैज्ञानिक मानता हूं, पर उन्होंने अपनी नासमझी का जो परिचय दिया है उसे मैं भूल नहीं पाऊंगा. उन्होंने चरित्रहीनता, परस्पर घृणा और द्वेष, मानवमूल्यों की अवहेलना,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारिवारिक कलह, तामसिक आचरण, अनैतिक कर्म करनेवालों को कलियुग की देन कह दिया. नतीजा हुआ कि हर पुराण के अंत में चाहे वह सतयुग हो, त्रेता हो, द्वापर हो, मुझ गरीब के सिर पर गुनाहों का इतना बोझ लाद दिया है कि उनके अनुसरण करने वाले यत्किंचित् बुद्धि का भी प्रयोग न करके सारे दुर्गंधित चोलों, चादरों, पसीने से भीगी बनियानों और स्नान से शुद्ध हो कर अपवित्र वस्त्रों को कलि की खूंटी पर लटकाते जा रहे हैं."

"हूं, तो तूने गाल फुला लिये," बोला किल्विष, "इसलिए तेरे सामने हमने महावैज्ञानिक व्यास की चर्चा क्यों की. जिस देश का राजा अपने वैज्ञानिकों को अपने से छोटा मानता है, उनसे दासता स्वीकार करके अपने वर्चस्व का नकाब ओढ़े अपने को भगवान् मानने का गर्व करता है वह इसी तरह बिला जाता है, जिसका उदाहरण तू खुद है. ब्रह्मास्त्र तैयार हों या न हों. इस पर लगने वाले खर्चे की परवाह न कर अपने अहंकार को तुष्ट करता है. प्रजा के लिए अन्न-जल की जरूरत को ठोकर मारकर सिर्फ मदांध की तरह जीता है वह तेरी तरह ही खतरे भरी अंध गुफाओं में खो जाता है."

"तू मिथ्याचारी है, कलि, पर इसी बहाने तुमने एक बहुत ही सूक्ष्म बात कही है. मैं व्यास का अपमान करना तो दूर, ऐसे घृणित कार्य का सपना भी नहीं देख सकता. कलि, व्यास देव न सिर्फ अद्वितीय वैज्ञानिक है बल्कि मेरे पूर्वज हैं. उन्होंने करुवंश को पालापोसा और जिलाया है और फिर, सुनो कलि, अगर व्यास देव ने अपनी प्रयोगशाला में अनेकानेक अभूतपूर्व पदार्थों का निर्माण न किया होता तो अच्युत महावैज्ञानिक कृष्ण भी मुझ गर्भस्थ शिशु की रक्षा न कर पाते. उन्होंने ब्रह्मास्त्रों की टक्कर, प्रक्रिया और प्रभावों को देख कर सब कुछ को स्वाहा करते दोनों बाणों के बीच अपने को खड़ा कर दिया, यही ऋषि नारद ने भी किया. इस स्थिति में जो कुछ हुआ वह एक चमत्कार लगता है." राजा बोला.

"तो तू चमत्कार का भूखा है, हा, हा, हा, हा " किल्विष खिलखिलाया, "बोल राजा तू किस तरह का चमत्कार चाहता है?"

"पहला कौतुक तो जीभ पर जलती लपटों का है. तू ने खुद कहा था कि किल्विष कि जिस अग्नि को मुख में अग्निहोत्री भी धारण नहीं कर पाते उससे भी अधिक चमत्कारी अग्नि को मेरी जीभ पर जलता देख."

"काफी विलंब हो गया है राजा और इस समय मानव जाति विनष्ट हो रही है तो कौतुक का मतलब है कमीनापन, देख मेरी जीभ खेचरी सिद्ध हूं मैं. मेरी जीभ इसी कारण मुंह से बाहर काफी निकल आती है, इसी के छोर को थोड़ा उठा देने से वह नागफण लगती है इसमें गोधूम के आकार का कपूर रख कर जला देता हूं. वह तब तक जलता है जलता रहता है और मुझे याद है कि हर बार इस अग्नि को देख कर जनता भ्रम में डूब जाती है. किसी को संदेह नहीं होता डर के मारे कि जलने वाली चीज क्या थी."

"वाह किल्विष, ", परीक्षित बोला, "तुम्हें दुनिया को धोखा देते हुए कितने वर्ष हो गये?"

"एक कल्प." किल्विष और कलि बोले.

"इतना बड़ा झूठ तो मत बको तुम लोग?" परीक्षित ने कहा.

"एक कल्प के बाद तो सृष्टि ब्रह्मलीन हो जाती है. उस वक्त कोई भी नहीं बचता यानी सृष्टि निर्माता ब्रह्मा भी जल की अथाह गहराई में बिला जाते हैं. अगर तुम लोग सचमुच कल्प से आज तक जीवित होते तो प्रलय की चर्चा नहीं करते?"

"अच्छा राजा, तू ही बता, प्रलय कितने प्रकार के होते हैं?"

"दो प्रकार के तो होते ही हैं, एक प्राकृत और दूसरा नैमित्तिक."

"अच्छा यह बता कि तेरे पूर्वज व्यास ने जिन प्रलयों की बात की है उसमें प्राकृत ढंग से घटने वाले प्राकृत प्रलय का आधार दिखता है. यानी अकल्पनीय जल प्लावन, अनंत पर सोये विष्णु के मन में पुनः सृष्टि के खिलौनों की चाहत. फिर सूर्य और वायु से जल का विनाश, पुनः जल से सृष्टि का आरंभ आदि-आदि.

"पर यह नैमित्तिक प्रलय क्या है? बताओ दोनों का अंतर. बोलो परीक्षित."

"मैं नैमित्तिक की बात करूंगा तो तुम दोनों मेरा उपहास करोगे क्योंकि नैमित्तिक के लिए ईश्वर की इच्छा को, लीला को, आधार बताया है व्यास देव ने."

व्यास देव को कटु सत्य की अनुभूति थी, वे जानते थे कि ईश्वर को आधार मानकर जीने वालों को उस वक्त बड़ी निराशा होगी जब उन्हें पता चलेगा कि मानव विनाश का कारण ईश्वर नहीं लोलुप, तानाशाह, युद्धों के सौदागर और हथियारों को बेच कर अतुलनीय धन लूटने वाले उनके सहोदर ही हैं. यानी मानव को नष्ट करने का दायित्व केवल मानव का होगा. उन ऋषि वैज्ञानिकों को अपनी करनी पर दुःख होगा, पीड़ा होगी और अगर उन्होंने विनाश का कारण बताकर प्रयोगशालाओं में जाना छोड़ दिया तो वे चाहे कितने भी विख्यात हों उन्हें जेलों में ठूंस दिया जायेगा. यह है नैमित्तिक. ले दे कर तुम्हारे पिता के मातुल ही अवतार माने जायेंगे क्योंकि तुम्हारे पितामह से कहा था— "मयैवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन."तेरे पितामह युद्ध न चाहते हुए भी, उनके आदेश पर युद्ध में शामिल हुए और पार्थसारथी कुरुक्षेत्र के प्रथम विश्वयुद्ध में संहारकर्ता की भूमिका में उतरे." सिर्फ उतरे यह मत कहो राजा, "किल्विष बोला," उन्होंने द्रोपदी के पांचों पुत्रों के वध का बदला लेने का संकल्प लिया. कृष्ण और कृष्णा को वृगलात्मा समझो."

"वृगलात्मा क्या है किल्विष?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यानी एक तो भौतिक पत्नी होती है दैनदिन कार्यों के बीच पति को प्यारी लगने वाली पत्नी होती है पर दूसरी भी होती है जो प्राणों से भी अधिक प्रिय लगने वाली अपनी अंतरंग सखी. कृष्णा का रुदन देख कर वे गंभीर हो गये. इसके बाद जब द्रोपदी ने युधिष्ठिर पर व्यंग्य करते हुए कहा कि आप संपूर्ण पृथ्वी का राज्य भोगिये, युद्ध के दिनों में मेरे पुत्रों की जब हत्या हो रही थी तो आप मेरे साथ उपलव्य में थे. आप वहीं लौट जायेंगे और सुभद्रा-पुत्र अभिमन्यु को भी भूल जायेंगे."

कृष्ण मन ही मन मुस्कुरा रहे थे. कृष्णा ने पार्थ से कहा, "अगर वीभत्स गुरुपुत्र का वध नहीं हुआ तो मैं अनशन करके जीवन त्याग दूंगी."

क्रोधित भीम गदा ले कर चल पड़े थे. उनकी रक्षा के लिए प्रेरित करते हुए पार्थसारथि ने अर्जुन, युधिष्ठिर को रथ पर बिठाया और दौड़े. "इतनी शीघ्रता किस लिए" अर्जुन ने पूछा. "तुम लोग इस अश्वत्थामा का चरित्र नहीं जानते. एक बार द्वारका यात्रा पर गया था. युद्धवंशियों ने पूर्ण आदर-सत्कार से आतिथ्य किया. एक दिन अकेले में मुझे देख कर उसने कहा कि मेरे पास पिता का दिया हुआ ब्रह्मशिर अस्त्र है वह तो अमोघ है ही. इस ब्रह्मास्त्र को ले लीजिए और अपना चक्र मुझे दे दीजिए."

मैंने हंसते हुए कहा, "तुम न केवल चक्र, यह धनुष, यह गदा सब ले लो बल्कि शक्तिवाण भी उठा लो." वह पसीने-पसीने हो गया पर कोई भी हथियार वह उठाना तो दूर हिला भी न सका. ऐसा व्यक्ति कुछ भी कर सकता है," कृष्ण बोले, "भीम के पहुंचने के पहले रथ को वहां पहुंच जाना चाहिए."

तभी हल्ला मचा. लोग अग्निहोत्री को अपने-अपने लूले हाथों से किसी तरह उठाये हुए ले आ रहे थे.

"बचाओ, बचाओ, बचाओ" चिल्लाहट निकट से निकट आती गयी.

किल्विष और कलि उधर की ओर दौड़े. भय से घबराये हुए लोगों के पास पहुंचने पर दोनों ने देखा कि अग्निहोत्री बेहोश है और उस का शरीर कुश के वस्त्रों से ढंका हुआ है.

"इसे तुम जानते हो किल्विष?"

"अच्छी तरह जानता हूं मित्र. यह अग्निहोत्री है. अभी कुछ घड़ी पहले मसान में गया था." किल्विष खिलखिलाया.

"क्यों?"

"वहां दिव्यास्त्र से भरे हुए तमाम जीवों की प्रेतात्माएं उसी रूप में परछाईं की तरह कार्यरत हैं जैसी वे युद्ध में तल्लीन थीं."

"बोलो, बोलो किल्विष क्या यह सत्य है?"

"मैंने देखा नहीं मित्र, देखना है क्या?"

कलि ने सब लोगों से हाथ जोड़ कर कहा, "अब आप लोग इस रेती पर इन्हें रख दें. मैं इनका निरीक्षण करूंगा. मैं सदानीरा के दक्षिणी जनपद का रहने वाला अनुभवी वैद्य हूं. यद्यपि हमारे वंश का इतिहास नया है, क्योंकि मादव विदेध के सदानीरा पहुंचते-पहुंचते वैश्वानर तिरोहित हो गया. फिर उन्हीं की आज्ञा से हमने कभी सदानीरा को लांघना वर्जित कर दिया."

"जरा-जल लाइये." कलि ने सराव के जल से अग्निहोत्री के मुख पर छींटे मारे और कुछ देर बाद अग्निहोत्री की तंद्रा टूटी.

"क्यों आर्य," कलि बोला, "कैसा लग रहा है आपको?"

"चुप बे पाखंडी," अग्निहोत्री बोला, "मैंने आज वह देख लिया जिसे देखने के लिए मेरी पांच पीढ़ियां तरसती रहीं. तुझे बोलने की भी तमीज नहीं है. तू अग्निहोत्री को मनुष्य समझने की कोशिश कर रहा है. कहां गया अधम कुरुवंश का उत्तराधिकारी परीक्षित्. बुलाओ उसे. आकर देख जाय कि ब्राह्मण का मतलब क्या होता है?"

"बाबा," किल्विष बोला, "अब तो बतला ही दो. ज्यादा दर्शन मत बधारो."

"हूं, तो छोकरा, अधम अनीश्वरवादी नास्तिक तू अब तक यहीं है. तू मुझसे तिल भर श्रेष्ठ अग्निहोत्री तो है..."

"तो दिखला रहा हूं कि मैं तुझसे तिल बराबर नहीं बल्कि एक मन से भी अधिक वजनी अग्निहोत्री हूं. किल्विष की जिहवा पर आज सात जिहवा वाले भगवान् वैश्वानर तेरे जैसे नकली अग्निहोत्री की बलि लेंगे यह सब मैं अभी दिखा रहा हूं..."

अग्निहोत्री घबड़ा कर बैठ गये.

"ऐसा मत करना वत्स. मैं तो मजाक कर रहा था आर्य किल्विष...हें हें हें."

"बस एक घुड़की से ही कांप उठा तू. अरे मूर्ख अचानक आर्य कब बन गया मैं? यह है वैश्वानर का प्रभाव. अच्छा बोल तूने शरीर में क्या लपेटा है और यह कुशा चीर क्यों पहन लिया है?"

"लपेटा तो घृत है और सकल जगत को पराजित करने वाले इस कुशाचीर को धारण किया है ताकि मूर्ख लोग ब्रह्म तेज को समझें. तू ने कृष्ण द्वैपायन की वे पंक्तियां तो सुनी ही होंगी वत्स कि जब छलिया कृष्ण भीम, अर्जुन और युधिष्ठिर के साथ वहां पहुंचा जहां ऋषियों के बीच अश्वत्थामा बैठा था."

"पंक्तियां बोलो, पंक्तियां." किल्विष बोला, "तुम शोधकर्ता लोग अप्रमाणित या अनदेखे संदर्भ को अपना बता कर अपने नाम से छपाते हो. मैं ऐसे किल्विष बंधुओं को बहुत अच्छी तरह जानता हूं. मैं नहीं मानता कि अश्वत्थामा घृत से नहा कर, कुशाचीर पहन कर बैठा था. पंक्तियां बोलो अग्निहोत्री."

"ले सुन..."

तं च कूर कर्माणं घृताक्तं कुश चीर्रणम्
रजसा धवस्तमासीनं ददर्श द्रौणिमत्तिके...

"हूं" कलि मुस्कराया, "किल्विष."

"कहो मित्र! इसने बड़ा पाप किया है. मैं इसे क्षमा नहीं करूंगा."

"किसे क्षमा नहीं करोगे?"

"इसी अग्निहोत्री को, यह महाभारत के श्लोक को देख कर पगला गया है. यह अश्वत्थामा बनने चला है. अश्वत्थामा मृत्यु को निकट से निकटतर आती देख रहा था. वह द्वैपायन व्यास के साथ धार्मिक समस्याओं पर विचार करने वाले ऋषियों के साथ गंगा तट पर उनके बीच अपने को छिपाये बैठ गया था. पर यह श्लोक कुछ ज्यादा वजनी होना चाहिए. घृत और कुशाचीर? बोलो कलि यह घृत और कुशाचीर क्या बला है?"

कलि तर्जनी से कान खुजलाते हुए कुछ देर सोचता रहा. "मुझे तो लगता है कि यह कोई टोटका है. मृत्यु से बचने का कोई त्राणदाता कवच है."

"बिना प्रमाण के किल्विष कुछ नहीं मानता मित्र. टोटका है तो उसको प्रमाण दो, मृत्यु से बचने का कवच है तो उसका प्रमाण दो." किल्विष बोला.

"अब सीधा प्रमाण कहां से बताऊं. शुभ-अशुभ के कीचड़ में धंसी इस धरती को हिरण्याक्ष का वध करके महावाराह की तरह ऊपर कैसे ले आऊं. मैंने क्या ठीका लिया है? अलबता उन ज्योतिषियों और ऋषियों की तरह मैं कह सकता हूं कि आर्य जाति का विनाश केवल एक कारण से हुआ, यानी कलियुग के आगमन से." कलि खिलखिला कर हंसा, "वही समस्या, वही खूंटी. लटका दो एक और झूठ. क्या फर्क पड़ता है."

"नहीं कलि", किल्विष अपने सिर के बालों को खुजलाते हुए बोला "यह रहस्य है और काफी गहरा रहस्य है."

"यह रहस्य-वहस्य कुछ नहीं मूरखो. यह अंडा है वत्स अंडा." अग्निहोत्री ने मुंह को विकृत बनाते हुए कहा." क्यों रे छोकरे, सुना है तूने इस अंडे के बारे में."

किल्विष एक क्षण चुप रहा. "मैंने तुमसे कहा था न अग्निहोत्री कि किल्विष बिना प्रमाण कुछ सुनना पसंद नहीं करता. बोल कहां है वह अंडा?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो तू मेरी परीक्षा लेना चाहता है प्रेत, तू अब मुझको फांस में फंसा नहीं सकता...सुन...

तत्क्रमेण विवृंद्ध तु जलबुद् बुद्वत् स्थितम्
भूतेभ्योऽण्डं महाबुद्धे वृहत्तदुदकेशयम्.

"वाह अग्निहोत्री, धन्य है तू, तूने सारा धिक्कार, जुगुप्सा, तामसिक नकाब, चरित्रहीनता को बढ़ाने वाला कह कर जो अब तक कलि के माथे पर मढ़ा जाता रहा है, इस घृणित चोगे को कलि की खूंटी पर नहीं लटकाया बल्कि समुद्र की गहराई से बचा कर महावाराह भगवान् की तरह अंडे को सतह पर ले आये."

"मैं चला मित्र, मैं भूखों के प्रलाप सुनने-सुनाने वालों से घृणा करता हूं. तुम जिस अंडे का जिक्र कर रहे हो उसके भीतर ही सारा जगत है. मैं हूं, तू है, परीक्षित है और यह मूर्खाधिराज अग्निहोत्री भी वहीं है. ब्रह्मास्त्र ब्रह्मांड को कंपित कर रहा है, इस अंडे की रक्षा कैसे होगी इस पर सोचो, तो कुछ क्षण रुकूं वरना तुम लोगों से अंतिम विदा लूं."

तभी पागलों के प्रलाप का स्वर तेज से तेज होने लगा, डिबनाद निकट से निकटतर होता रहा.

"अभी भी तुम लोग जिंदा हो?" एक जटाजूट से ढंका, कुशाचीर पहने, जल के लिए तरसते पानी-पानी चिल्लाता वह बटोही आया और थक कर रेती पर गिर पड़ा. गंगा सूख चुकी थी, परंतु उसके भीतर के ह्रदों में पानी शेष था. लोग अंजुरी पानी लिये आते और उसके मुंह में गिरा रहे थे, "मुझे खाल के पास ले चलो, मैं अभी भी प्यासा हूं. बिलकुल प्यासा. सुन रहे हो, सुन रहे हो?"

"हां सुन रहे हैव्याध, भविष्यत् पीढ़ी पर कुछ भी दया दिखाई होती तूने, तो सिर्फ कुष्ठ से गलित लूलों के पास वे हाथ होते जो तुझे गंगा की खाल तक उठा कर ले जाते. तुझे गंगा से घृणा है, ईश्वर कहे जाने वाले छलिया पार्थसारथि से घृणा है, तो तू ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करते वक्त पांडवों के विनाश का जल हथेली पर न रखता, क्योंकि पांडव तो निमित्त थे, जिन्हें अस्त्र-शस्त्र इस वादे पर दिये गये थे कि ये केवल कौरवों के विरुद्ध इस्तेमाल किये जायेंगे, यह तकनीक भी गुरु द्रोण ने इसी शर्त पर बनायी थी कि मानव विकास के स्थान पर मानव ध्वंस बिलकुल नहीं किया जायेगा. किंतु अश्वत्थामा तू ने अतुल संपत्ति के मोह में पड़ कर दुर्योधन की सलाह से एक गोपनीय प्रयोगशाला बनवाई, यानी तूने द्रव्य के मोह में उसे अपनी अविकसित तकनीक ही नहीं जमीर भी बेच दी. तू ने अतुल संपत्ति पा ली, दो दायादों में युद्ध करा दिया क्योंकि जब तक यह सत्य छिपा रहा कि ब्रह्मास्त्र केवल अर्जुन के पास है तब तक दुर्योधन शांत रहा. पर तुम्हारा उल्लसित चेहरा देख कर ही वह अपनी नीली कंजी आंखों से समझ गया कि तकनीक चाहे विकसित हो चाहे अविकसित शत्रु के लिए भयदायक तो होती ही है."

"कौन है तू", अश्वत्थामा की प्यास गायब हो गयी... "कौन है तू?"

"मैं हूं किल्विष" यानी किल्विषाचार्य अश्वत्थामा का अंतेवासी यानी सचमुच के विज्ञानी आचार्य का अविज्ञानी शिष्य."

"तू मेरा मजाक न उड़ा पामर, मेरे पास अपराजेय धनुष तो नहीं है, हां शरीर से लिपटी कुशों की कथरी जरूर है. मेरे पिता ने कुएं में गिरी गेंद को एक बाण से मारा, उसी बाण पर दूसरा और फिर तीसरा फिर चौथा यानी बाणों का ऐसा रहंट बना दिया कि कुएं में उतरे बिना उन्होंने वह गेंद निकाल दी. आदरास्पद भीष्म पितामह इतने प्रसन्न हुए कि वे पांडु और धृतराष्ट्र के राजपुत्रों के गुरु बनाये गये. और उन्हीं का इकलौता बेटा अमरता का वरदान पा कर इस अवस्था को प्राप्त कर चुका है कि वह अपना तिल तिल गलता शरीर देख रहा है और शरीर है कि उसे छोड़ने को तैयार नहीं है. काश, पर्वतों में कहीं गुफायें बची होंती, कदराये होतीं तो वहीं पर शरण पा जाता. पिता के स्नेह के... कौन है हस्तिनापुर का राजाधिराज? कहो उससे कि मुझे मौत चाहिए मौत."

"यहां का राजा तो वही है गुरुपुत्र, परीक्षित जो आपके ब्रह्मास्त्र से भी जल नहीं पाया, विकलांग नहीं हुआ. अब तो लोग यहां तक कहने लगे हैं कि स्वयं अवतारी कृष्ण ने उसके इस तरह चक्र से कीलित कर दिया है कि कोई भी ब्रह्मशिर अस्त्र कोई भी दिव्यास्त्र उसके सामने झुक जायेगा. हां झुक जायेगा, निश्चित झुक जायेगा. अब परीक्षित जैसे लोग भूख के बिना मरेंगे और अगर गलित कुष्ट से बच भी गये तो दुबारा मरेंगे, तिबारा मरेंगे– इस धरती को ब्रह्ममास्त्र की प्रलययाग्नि शांत करने में जाने कितने वर्ष लगेंगे."

अश्वत्थामा अत्यंत विषण्ण भाव से सोचता रहा. आखिर पिताश्री को मिला क्या. यह सही है कि उन्होंने ब्रह्मशिर का भेद बताने से बार-बार इंकार किया. लाचार एक बाप को पुत्र स्नेह के सामने झुकना पड़ा. उनकी दृष्टि में मानव से बड़ा कोई पदार्थ नहीं था और मानव से बड़ा कोई विज्ञान नहीं था. ऐसा अमोघ अस्त्र उन्होंने अर्जुन को दिया. अर्जुन उनके लाडले बेटे से भी ज्यादा विश्वसनीय शिष्य था. मेरे मन में अर्जुन के प्रति कोई व्यामोह नहीं था. ब्रह्मशिर का प्रयोग करते वक्त भी पार्थ ने संकल्प के प्रारंभ में ही कहा– "गुरुपुत्र का कल्याण हो." और हाय रे गुरुपुत्र, तू अंततः मौत का सौदागर ही बना रहा. तुमने बाप की आज्ञा ठुकरा दी. गुरु भाई के संकल्प की निश्छल शुभकामना को ठुकरा दिया. "अश्वत्थामा मारा गया" भीम का यह कथन पिताश्री के स्नेहिल चित्त को मथने लगा. क्या युद्ध के माने छल है, क्या विश्व युद्ध में अपनी रक्षा के लिए ब्रह्मशिर का प्रयोग उचित है. कौन सोचता है ऐसा? अब धर्मयुद्ध का यवनिका पात हो गया अश्वत्थामा. जिस ब्रह्मशिर को मेरे हाथों में सौंपते हुए मानव विरुद्ध इस्तेमाल न करने की शपथ करायी वे खुद उसी पर दृढ़ रह सके क्या?"

"ब्रह्मस्त्र न जानने वाली प्रजा पर, निरपराध जनता को तुमने ब्रह्मास्त्र से दग्ध किया है, ब्रह्मन्, तुमने घृणित कर्म किया है," एक साथ अग्निहोत्री को आगे करके विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, गौतम, वशिष्ठ, कश्यप और अत्रि जैसे ऋषियों की पूरी जमात पिताश्री को दुत्कारने लगी.

द्रोण वध का नाटक हुआ. एकलव्य के साथ उन्होंने छल-कपट का प्रयोग तो किया था, पर तब वे एक राजा के नौकर थे. प्रतिज्ञा थी कि अर्जुन विश्व का अप्रतिम धनुर्धर माना जायेगा. वे हठी थे, कष्टों में पले थे अपने परिवार को ढोते हुए खानाबदोशों की तरह मारे-मारे जिंदगी बसर करते रहे पर उन्होंने आत्मसम्मान नहीं बेचा. कभी याचना नहीं की."

"क्या सोच रहे हो गुरुपुत्र," किल्विष खिलखिलाया, "लगता है अग्निहोत्री की तरह तुम भी अंडा देख रहे हो, पहले मुर्गी हुई कि पहले अंडा."

"कौन हो तुम?"

"मैं तुमसे कह चुका हूं गुरुपुत्र कि किल्विषाचार्य अश्वत्थामा का शिष्य हूं."

"तुम मेरे शिष्य हो, तो क्या सचमुच अंडा ले आ सकते हो?"

"क्षमा करें गुरुपुत्र जो पृथ्वी दिव्यास्त्रों से बारबार दग्ध होती रही है, वहां अंडा कहां मिलेगा. अंडे का प्रयोग तो अग्निहोत्री ने किया. शायद वह जानता भी नहीं होगा कि इस बार ब्रह्मशिर का प्रयोग खंड प्रलय नहीं प्राकृत प्रलय में बन कर आयेगा, भीषण जलप्लावन अपने चपेट से बहा ले जायेगा, अंडे को भी. ब्रह्मास्त्र और ब्रह्मांड दोनों नहीं बचेंगे गुरुपुत्र, यह प्रकृति की अंतिम चेतावनी है. संभालो इसे. तुम्हें तो सड़-सड़ कर जाने कब तक मरना बदा है भाग्य में. पर तुम लोग अगर खुले मन से सोचोगे तो तुम भी मानव जाति को बचाने के लिए संघबद्ध होगे."

"यह कौन है मेरे सिरहाने"? गुरुपुत्र ने पूछा, "यह तो बहुत जाग्रत व्यक्तित्व का पुरुष लगता है?"

"सुना तू ने किल्विष" ठहाका लगा कर हंसते हुए कलि ने कहा, "गुरुपुत्र मुझे जाग्रत व्यक्ति मानते हैं. वे चाहते तो उन तमाम ऋषि-मुनियों की तरह इस सारी स्थिति का कारण कलि को बता कर उसी खूंटी पर टांग देते, पर नहीं, उन्होंने मुझे पहचान लिया. जल से सृष्टि जनमी है, अग्नि से नष्ट हुई है पर सदा आगे चलने वाली प्रकृति ने विराम नहीं लिया. सतयुग, त्रेता, द्वापर तक जिस तरह कुछ रुद्ध नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है. हर युग में मनुष्य आगे बढ़ता गया है, कलि में आ कर क्या प्रकृति अपनी घड़ी की सूई को उलट देगी? कलियुग में भौतिकता कम से कम और चेतन्य ज्यादा से ज्यादा निकट होता जायेगा. वह अपनी कार्यशाला में अनवरत पहले से बढ़िया, पहले से अधिक सात्विक तथा संतुलित कर्म करने वाले मनुष्य निर्मित करती जायेगी. एक दिन वह भी आयेगा कि कलि में प्रकृति पूर्ण मानव का निर्माण करने में सफल हो जाय. सोचो किल्विष सोचो."

किल्विष गम्भीर था. वह धीरे-धीरे कलि के पास आया और उससे लिपट गया, "कलि यार तुमने जो बात बतायी तो मुझे लगा कि किल्विष का रामनाम सत्य है करने की बात कह रहा है कलि, जब संतुलित चेतना बढ़ती जायेगी तो धूर्त क्या करेंगे. मारे जायेंगे सब बिना मौत, पर नहीं मैं इस अभियान को अंत तक देखूंगा चाहे इसके लिए आत्म हत्या भी करनी पड़े मुझे तो भी नहीं हिचकूंगा.

"हम लोगों में एक विवाद ने जन्म लिया गुरुपुत्र कि तुमने जिस दिन ब्रह्मशिर का प्रयोग किया उस दिन अपने मनभावन नीले रंग के कपड़े नहीं पहने? तुमने बदन में धृत क्यों पोता और शरीर पर कुशा निर्मित कटिवस्त्र क्यों धारण किया?"

अश्वत्थामा मुस्कराया. बहुत दिनों के बाद मुस्कराने जैसी घटना घटी, हालांकि कुष्ठगलितअधरों पर यह मुस्कान आकर्षक नहीं थी. मन में घृणा के भाव को और भी बोझिल कर रही थी.

"क्यों किल्विष क्या द्वैपायन व्यास ने इस पर कुछ नहीं लिखा? मैं नरपशु था किल्विष, जिसने युद्ध के दौरान सुयोधन से कहा था—राजा सुयोधन, अब प्रसन्न हो जाओ. तुम पांडवों से संधि कर लो. विरोध से कोई लाभ नहीं है. तुम्हारे गुरुदेव अस्त्र विद्या के अप्रतिम ज्ञाता थे. तो भी वे युद्ध में मारे गये. वही दशा भीष्म जैसे महारथियों की भी हुई है. अर्जुन को मैं मना लूंगा. कृष्ण भी भाई-भाई में ऐसा विरोध नहीं चाहते. कितना समझाता उसे. सुयोधन तो कर्ण जैसे महारथी सेनापति के शौर्य से इतना अभिभूत था कि समझ रहा था कि कल कर्ण अर्जुन को रज्जु में बांध कर उसके चरणों में फेंक देगा. उस ने कहा समुद्र की तरह गम्भीर मर्यादा को न छोड़ने वाले गुरुपुत्र, इस तरह की सलाह न दो."

एक ही पंक्ति में गुरुपुत्र की मर्यादा और अपने सेनापति कर्ण में अटूट विश्वास का दर्प ढोने वाले सुयोधन ने उसके प्रस्ताव पर ठोकर मार दी. मैं विवश था किल्विष विवश. अपने सहज स्नेह से दुलराने वाले महर्षि पिता को खो कर अनाथ हो गया था. मेरे भीतर न तो अब पिता के प्रति उपालंभ था न ब्रह्मास्त्र का गर्व. हां तुम यह कह सकते हो कि द्रोपदी के शिशुओं की हत्या जघन्य अपराध था. मेरी अंतरात्मा मुझे धिक्कार रही थी. पर मैं संकल्पबद्ध था. सुयोधन की ओर से लड़ने की शपथ ले चुका था."

"महाराज यह गाथा बंद करिये", किल्विष का धैर्य टूट रहा था, "आपने कैसे कैसे करिश्में किये, कैसी मर्यादायें निभायीं, किस तरह उल्लुओं के सामने घुटने टेके यह हम सभी जानते हैं. हमें तो जानना सिर्फ यह है कि अर्जुन, भीम के डर से व्यास और ऋषियों के बीच घृतासक्त शरीर और कुश का चीर आपने क्यों धारण किया?"

"सुनना चाहता ही है किल्विष तो सुन, मेरे शीश की मणि जब तक मेरे पास थी कोई भी संकट मुझे हिला नहीं सकता था. सामान्य हथियार अनावश्यक हो गये थे. गुरुपुत्र और गुरुभाई के संघर्ष का क्या अंत होगा इसे मैं भी जानता था. न तो भाई अर्जुन ही. यह कुश का चीर मेरे पिता का आसन था. मैंने प्रतिशोध की जो साधना शुरु की उसके लिए कुश शयन ही अनिवार्य था, कुशा से जब तक पैंती (पवित्री) नहीं बनती, कोई भी धर्मकृत्य सम्भव नहीं. क्या व्यास देव ने यह भी नहीं लिखा है कि जब मैं प्राण रक्षा के लिए भागा और शत्रुओं से घिर गया और मैंने एक सींक ले कर मंत्राभिषिक्त करके छोड़ दिया?"

"यह तो मालूम है."

"तो सींकों के रहस्य को तुम भली भांति जान जाओगे. तुमने एक टुकड़ा छोड़ दिया है. मैं घृताक्त ही नहीं धूल धूसरित भी था. पिता के वध, माता के वैधव्य और प्रजा द्वारा मेरा तिरस्कार इतने भारी थे किल्विष कि मैं शोक सूचित घृत से शरीर को भिगो कर धूल में लोटता रहा. कहां गये पिता. कहां हैं माता. अपने गुरु के हत्यारों से प्रतिशोध यह मेरा एक मात्र अभीष्ट थे. मैंने सम्पूर्ण पांडव सेना पर आक्रमण करके पिता के हत्यारे धृष्टद्युम्न और उसकी अपार सेना को सर्वला से काटता रहा. सोये व्यक्ति जान भी नहीं पाये कि उनका हत्यारा कौन है."

"पर गुरुदेव, द्रोपदी के पुत्रों के वध के पीछे कौन-सा प्रतिशोध था?" किल्विष खिलखिलाया, "पहले से तुम बहुत बदल गये हो गुरु. सारा भारत तो यही सोचता था कि दया, कृपा-विहीन तुम एक ब्रह्म राक्षस हो, बोलो,द्रोपदी के पुत्रों से प्रतिशोध क्यों?"

"यह मेरा अपराध है किल्विष" गुरुपुत्र ने कहा, "रक्त पिपासु पशु जैसे मानव रक्त का चस्का लगने पर रात-दिन आदमियों की प्रतीक्षा करते हैं. कमजोरों पर तानाशाही लादने के लिए कभी शांति कभी युद्ध के नारे लगाते हैं. फिर भी जब अहम शांत नहीं होता तो वे सोये-सोये बड़बड़ाते हैं. केवल एक शब्द—युद्ध, युद्ध, युद्ध. सब जगहों से अचूक आधुनिक से आधुनिक हथियार बटोरते हैं, सबको अपनी पशुता के सामने घुटने टेकने के लिए विवश करते हैं, मैं तब उनकी करतूतों को नहीं समझता था जब वे सब युद्ध के लिए दृढ़ निश्चय करके सेनाएं सजाते रहे, मेरे बाप को नमकहलाली निभाने की आज्ञा और उपालंभ दे कर धमकाते रहे. वास्तव में वह गुरु वन्दना नहीं, नम्रता के प्रदर्शन की नकाब थी क्योंकि उसके पीछे छिपे चेहरों में वे भेड़िये थे. मैं ऐसों के साथ उन की कूटनीति में भाग लेता था. प्रज्जवलित भारद्वाज द्रोण का यह तामसिक पुत्र सैकड़ों अन्यायों को चुपचाप सहता रहा, बल्कि सक्रिय रहा, उसे जो दंड मिला वह उचित था. द्रोण वध मेरे कारण हुआ, मेरे पिताश्री निर्दोष थे. वे चूक गये कि उत्तर भारत के एकमात्र विज्ञानवान् धनुर्धर और गुरु हो कर भी उन्होंने इस राज्य को लात मार कर ठुकराया नहीं, मैं सोचता हूं किल्विष कि वे ठुकराना चाहते तब भी या तो उनका अपहरण होता या किसी निर्मच्छिक जगह में कैदखाने में ठूंस दिये गये होते.

अश्वत्थामा प्यास से परेशान, जीभ निकाले पानी-पानी चिल्लाता रहा पर रात में उसके बेहोश शरीर का न तो कोई रक्षक था न तो भक्षक. सिर्फ एक मुर्दनी थी-सिर्फ मुर्दनी.

कलि ठठाकर हंसा— "क्यों रे किल्विष तू वज्रासन में बैठा, हाथ जोड़े किसकी आराधना कर रहा है. आखिर तेरा भी दिमाग फिर ही गया."

"नहीं कलि, " किल्विष की आंखें छलछला आयीं, "मैं तो अपनी मृत्यु की कामना कर रहा था. अगर कोई ऐसी चीज हो तो ईश्वर से अलग कर्म कांड से अलग. जो कभी कभी सोचने के लिए बाध्य कर देती है कि कुछ और भी है अनकहा, अनचीन्हा जिसे लोग नियति या प्रकृति कहते हैं तो मैं उसी 'कुछ है' से करबद्ध प्रार्थना कर रहा हूं, "रोको, रोको, इस सृष्टि को बचाओ." किल्विष के गदगद स्वरों को सुन कर कलि ने उसकी पीठ पर हाथ रख दिया, "किल्विष मर्द रोते नहीं, चुप हो जाओ, चुप हो जाओ."

एक नीरव मुर्दनी छा गयी सभी ओर तभी हिचकियों का स्वर उभरा. लंबी-लंबी हिचकियां, शरीर को हिला देने वाली हिचकियां.

"अरे किल्विष कलि उसकी पीठ सहलाते हुए बोला, "क्यों रो रहे हो बंधु, अभी तक तुम गलेसड़े कूड़े को जिसे लोग संस्कृति और सभ्यता कहते हैं, उठा-उठा का नाबदान में फेंक कर मस्त भाव से हंस रहे थे, हंसा रहे थे.अचानक अकारण यह व्यथा कैसी बंधु."

कलि सिसकते हुए किल्विष बोला, "जो भी हो यह सृष्टि इतनी प्यारी है कि मैं पुनः ऐसे विनाश को देखूंगा तो आत्महत्या कर लूंगा. कलि पूरे ब्रह्मांड में, सैकड़ों आकाश गंगाओं में होंगे प्राणी वे मनुष्य से उंचे स्तर का जीवन जी रहे होंगे शायद वे मनुष्य से अविकसित जंगली जानवर ही हो, तो भी हमारी पृथ्वी जैसा कुछ नहीं है इस अनंत खगोल में. मैं अपनी पृथ्वी मां का कृतघ्न पुत्र हूं. कलि जो उनकी रक्षा में अपने प्राणों को सौंप नहीं पाया. पर जल्दी ही सौंप दूंगा कलि, निश्चित सौंप दूंगा. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म : सन् 1947 'नया प्रतीक', 'आलोचना', 'नवनीत', 'नयी कहानी', 'वर्तमान साहित्य' और 'इंद्रप्रस्थ भारती' आदि में रचनाएं प्रकाशित. 'नान्दी' के प्रायोजक व संपादक
संप्रति : उत्तरप्रदेशीय प्रशासनिक सेवा में
संपर्क : प्रधान प्रबंधक, दि किसान सहकारी चीनी मिल्स लि. अनूपशहर, बुलंदशहर (उ.प्र.)

राजेंद्र प्रसाद पांडेय

चमन्नचवा

रामदीन ने अपने दाहिने कान पर दाहिनी हथेली रखी और थोड़ा दाहिनी ओर झुकाते हुए कुहुका :–

"कि हाय रामं बाबू दरोगा जी!"

उपस्थित श्रोताओं में से किसी ने छाती पीटने की मुद्रा के साथ ललकारा, "जियौ बच्चा जियौ."

सुकुल बाबा के भोंपू ने एलान किया–

कोई नहीं जानता कि मरे हुए पशु के चमड़े में मनुष्य की सारी संवेदना क्यों भरी हुई है? कोई नहीं जानता कि मिट्टी के कच्चे-पक्कें गोलों में मन के सुखों, दुखों, क्रोधकरुण, उत्साह विराम और प्रेम को अपना देने की अद्भुत शक्ति क्यों हैं?... लेखक के उपन्यास का एक और अंश.

"अइसे तो यमदूत सार भइंसा पर सवार भोका टुकुर–टुकुर देखत हैं, लेकिन मौरौ थोड़ी-बहुत रही-सही उमिर लइके जियो."

भीड़ में से किसी किशोर की आवाज आयी, "हां, हां, बाबा के सेतुआ-पिसान लादे-लादे जी. अब बाबा अधय में हैं."

भीड़ से हंसी का बांध-सा टूट पड़ा और थोड़ी देर तक चलता रहा. इस पर सुकुल बाबा ने तुरंत जड़ दिया, "बांधे-बांधे तौ मैं फिरत हों, तोर कहे......?"

अपनी बात को सुकुल बाबा ने एक कहावत से भी पुष्ट किया, जिसका मतलब था कि तेली का तो तेल जले लेकिन मसालची की वही स्थिति क्यों हो, जो उक्त किशोर के बकौल सुकुल बाबा की थी.

सुकुल बाबा के इस कथन के पूरा होते-न–होते पूरी भीड़ में हंसी का ज्वार आ गया और किशोर जहां बगलें झांकने लगा, वहीं लोगों ने बताना शुरू किया कि पुरनियन से लडँग-लपाड़ी का नोहड़ा न लेय का चाही.

इसी बीच अनेक गुरुओं और चेलों ने अपनी-अपनी डफली शुरू कर दी और पूरी भीड़ से "कलबल कलबल" का हल्ला उठने लगा. रामदीन ने मजमा अभी न जमता देख कान पर से हथेली हटा ली और अपने शरीर को ढीला कर दाहिनी ओर से पांव पर शरीर का अधिक भार डालकर तख्त पर बिछी जाजिम के ऊपर खड़ा हो गया.

हल्ला धीरे-धीरे और बढ़ने लगा.

जब-जब नाचने वाले संतों के नृत्य धर्म पर विपत्ति पड़ती है तब-तब

भगवादीन भगवान अपने नगाड़े-रूपी शस्त्र के साथ अवतार लेते हैं और भीड़ के हल्ले को ध्वस्त कर देते हैं. सो भगवानदीन ने तत्काल संतों को जताया कि अपने शस्त्र के साथ भगवान् अवतरित हो चुके हैं :–

भगवानदीन ने मेहतर के घर जन्म लिया है. लेकिन यह भी हाथ में झाड़ू लिये या नगाड़ा-नगड़िया बजाते और अपने को मेहतर बताते हुए नहीं जन्मे. भगवानदीन अपने पिता के नेगरिया-नगाड़ा को छुटपन से छोटी-छोटी लकड़ियों से फोड़ते और लात-घूंसा खाते थे. वह पता नहीं कब से अपने माता-पिता का हृदय जीतनेवाला हाथ चलाने लगे. और जब उनके पिता ने पीठ-पीछे अपनी पत्नी से भगवानदीन के प्रति प्रेम उड़ेलते हुए उनकी कला की उपलब्धियों के मीठे सपने देखने शुरू कर दिये, कोई नहीं जानता.

कोई नहीं जानता कि मरे हुए पशु के चमड़े में मनुष्य की सारी संवेदना क्यों भरी हुई है? कोई नहीं जानता कि मिट्टी के कच्चे-पक्के गोलों में मन के सुखों, दुखों, क्रोध, करुणा, उत्साह, विराम और प्रेम को उफना देने की अद्भुत शक्ति क्यों है? कोई नहीं जानता कि धरती पर सालों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक ही स्थान पर खड़े रहने वाले वृक्षों के फलों, लकड़ियों, धातुओं, पानी और ऐसी ही तमाम निर्जीव चीजों से निकलने वाली ध्वनियां भी मानव तो क्या किरनों और सांपों तक को क्या मुग्ध कर लेती हैं? और कोई नहीं जानता कि संवेदनतो-ज्वार को चढ़ाने वाली ध्वनियों का यह वरदान कब किस जाति, धर्म के कलाकार के हाथ-पांव में या वाणी में उतर आयेगा?

"कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़ कड़कड़....."

"हरे रो लाला."

—भीड़ से कोई एक आवाज थी.

"बालहरे करेणा काढ़े लेत है सार सुख देइया बाला."

गुणों के चरम को प्रशंसित करने में भी और अवगुणों के चरम को प्रताड़ित करने में भी इस गांव में समान शब्दों का प्रयोग होता है. काकु की भी समानता के बावजूद बिल्कुल भिन्न-भिन्न अर्थछवियां उभारना शब्द के ब्रह्मत्व का एक और प्रमाण शायद हो सकता हो.

लेकिन इन सारी बातों से अनभिज्ञ भगवानदीन नगरिया-नगाड़े को अपनी कला की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाये कर जा रहा है :—

"रधम् कड़रधम् कड़रधम् धम् धम् धम् धम्म....."

अब रामदीन ने मजमें पर चारों ओर निगाह दौड़ाई और पाया कि शुरू करने का वक्त फिर आ गया है. थोड़ा आगे बढ़कर बीच मंच पर आकर अपनी एक हथेली कान की ओर लगाकर वह शुरू हुआ—

"तनी कुर्सिया खाली करौ! देख्तेव नहीं. जिमीदार आये हैं?"

कुर्सी पर बैठ गये हैं मुन्नीलाल पासी. थोड़ा पढ़ा-लिखा. अधिक स्वाध्याय किया. धीरे-धीरे कबीर, रैदास, बाबा आंबेडकर आदि के विचार जाने और समाज में व्याप्त छुआछूत के सिद्धांत बिल्कुल अनुचित हैं और इसे समाप्त होना ही चाहिए.

हमारे समाज में छुआछूत तो एक छुतही बीमारी है. कोई भी व्यक्ति जरा - सा ईश्वरोन्मुख हुआ कि छुआछूत की और भी ऊंची सीढ़ियां चढ़ने लगता है. नहाना-धोना और कुछ लोगों से शुरू करके अधिक-लोगों को छूना छोड़ते जाना और कुछ लोगों के हाथ का भोजन—पानी छोड़ना शुरू कर अधिक-अधिक लोगों के हाथ का छोड़ते जाना ऐसी साधना का अभिन्न अंग है. अनेक लोग इसी सीढ़ी से अध्यात्म की वह ऊंचाईयां चढ़ गये, जिस पर बड़े-बड़े साधू और संत न चढ़ सके होंगे. और ऐसी ही उच्चता की यात्रा का चरम है कुछ लोगों का स्वपाकी हो जाना. कुछ लोगों ने अन्न त्याग दिया है और बिना आग में पका ही खाते हैं. कुछ लोग केवल फलों और दूध-घी का ही सेवन कर अपने को जिलाये हैं. लोग-बाग श्रद्धा से अभिभूत होकर ऐसे लोगों को प्रणाम करते और सेवा करते नहीं अघाते. बहुत-से लोग अपनी जीविका खोजते हार-हार कर इसी एक ठेले से अध्यात्म और आजीविका के दो-दो पंछी हथियाने में मस्त हैं.

और आज मुन्नीलाल ने हिम्मत करके ही यह कुर्सी पकड़ी है कि वह पूरी भीड़ से पूछेगा कि उन्हें कुर्सी पर बैठने का अधिकार क्यों नहीं है.

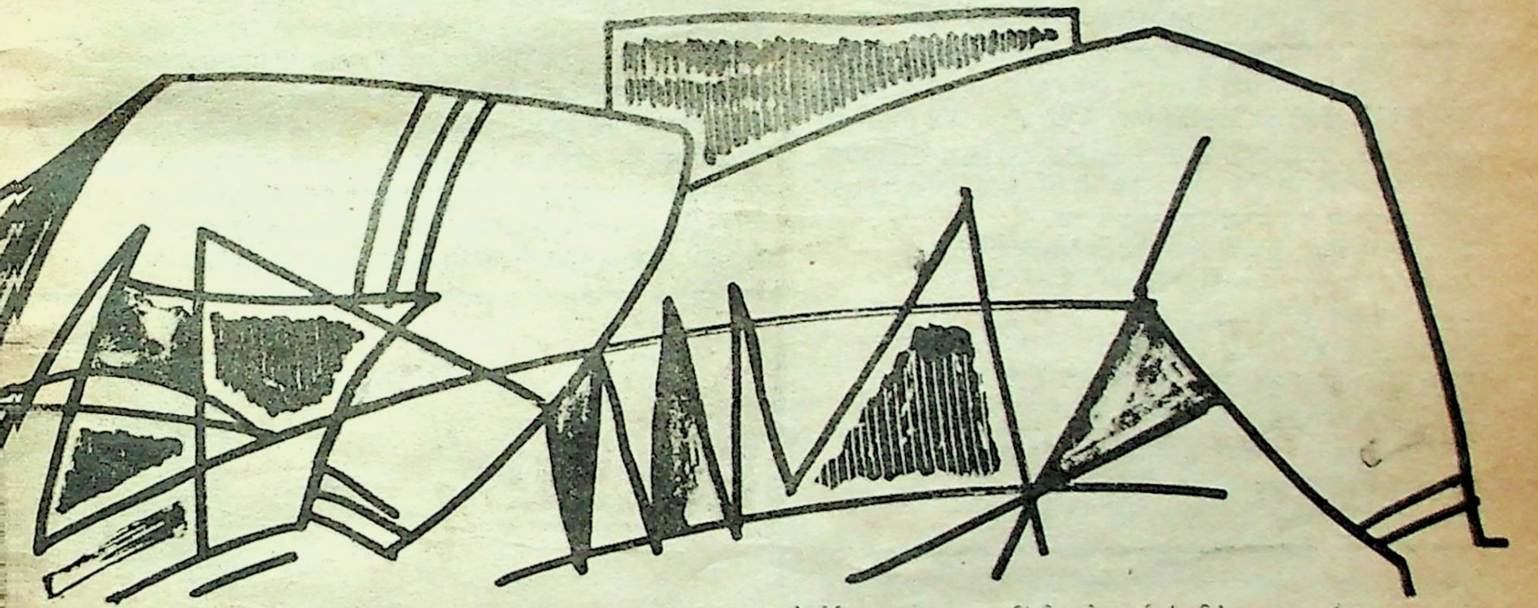

"और कि हाथ राम....."

अगले क्षण ही भीड़ को हल्ले ने "बाबू दरोगा जी" को दबा डाला. और रामदीन फिर शांत हो गया.

"आओ ठाकुर आओ."

"एंहहू सारे. निरै दे आगे."

"भइया तनी दूबर होइ जाव."

"जाव मालिक... बढ़ जाव."

"रामराम ठाकुर....."

तमाम आवाजों के बीच अपनी धौंस जमाते और 'रा राम' का उत्तर देते किसी की ओर अधमुंदी आंखें खोलकर या केवल चेहरा भर फिराकर देते और कुछ को वह भी न देते, दारू के नशे में झूमते, हाथ से गिरने-गिरने को होती बंदूक संभालते, पान खाये और गले में फूलों का गजरा डाले बमभोले ठाकुर आगे बढ़ रहे हैं. लोग अपनी-अपनी औकात के हिसाब से उन्हें आगे बढ़ने में सहायता कर रहे हैं. इसके द्वारा वे बमभोला से आनेवाले खतरों से अपना भविष्य सुरक्षित कर रहे हैं.

लेकिन तब तक उन्हीं के बड़े भाई 'दूनी' वहा पर दौड़कर आ गये—

"कसो मुन्नी! ईका? सुनात नहीं का? छोड़ौ कुरसी."

पता नहीं कितनी-कितनी रातें इसी संघर्ष की योजना बनाते मुन्नीलाल सो नहीं सके थे. आज वह अवसर आ गया था. उन्होंने सोचा था कि भले ही मैदान में मारे जायें पर हटेंगे नहीं. लेकिन उन्हें क्या मालूम था कि दूनी भाई इस तरह बीच में टपक पड़ेंगे?

भीतर-ही-भीतर लावा से फूट पड़े हैं. लाल-पीली चिनगारियां फूट रही हैं. लपलप करती हजारों फीट ऊंची लपटें उठ रही हैं और मुन्नीलाल सारे ब्रहमांड को जला डालनेवाले हैं. इसमें सबसे पहले दूनी भाई ही जलेंगे क्या?

नहीं बड़ा भाई बाप होता है. भाभी मां होती है. क्या कहेगी दुनिया? क्या होगा उन मूल्यों का जो गलत मूल्यों द्वारा दबा दिये गये हैं, फिर भी अपनी चमक बिखेरे जा रहे हैं? दुनिया थूकेगी मुन्नीलाल को.

और अब दूनी भाई ने मुन्नी भाई को पीठ की ओर से गोद में भर कर उठा लिया है. इस अधबूढ़े में इतनी ताकत कैसे आ गयी? मुन्नी लाल को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठाये दूनी भाई दूसरी ओर चले जा रहे हैं और ठाकुर बमभोले ने पहले तो कुर्सी के पास पहुंचकर अपनी बंदूक उठायी. पूरी भीड़ सन्न हो गयी. जिधर दूनी और मुन्नी जा रहे थे, उधर के लोगों में भगदड़ मच गयी. लेकिन अगले ही क्षण गैस की रोशनी अचानक इतनी धीमी पड़ गयी कि इसी बहाने का लाभ उठाकर बमभोले ने अपने हाथ नीचे कर लिये. हाथ शराब के नशे में ठीक से ऊपर उठते तो नहीं थे.

एक और शंबूक आज मारा जाता, लेकिन सुरादेवी ने इतिहास मोड़ दिया था.

भीड़ के सारे लोग मुन्नी को धिक्कार रहे थे कि दूनी को पैदायशी धीरा कह-कहकर आयी विपत्ति को टालने के लिए गोवधर्नधारी कृष्ण की भांति बलशाली बखान रहे थे.

एक आदमी लपककर मंच पर गया और अपने दोनों पांवों के पंजों में गैस को दबाकर "फच फच फच धच" की आवाज के साथ गैस में हवा भरने लगा.

अभी नाच न चालू होते देख बमभोले कुर्सी पर बांयी ओर लुढ़क गये. इस समय वह कुछ सोते, कुछ जागते, कुछ नशे में, कुछ अपमान की ठेस में विकृत चेहरे के साथ कभी-कभी आंखें कोड़ा खोलकर माहौल का जायजा ले लेते थे. कुछ लोगों ने उनकी बंदूक संभालनी चाही तो उन्हें एतराज हुआ. जब केवल गोली न चल जाने के डर से उसे ठीक से रख देने की बात से वह आश्वस्त हो गये तो उन्होंने बंदूक को मां की एक गाली दी और बगल में फेंक दिया.

भक्तों पर आयी हुई यह विपदा भी भगवान् ने टाल दी थी.

अचानक ठाकुर महिपाल सिंह अंधकार-रूपी जल प्लावन में डूब रही भीड़-रूपी धरती को उबारते हुए भगवान वाराह के रूप में प्रकट हुए. मगर उनके हाथ में कोई पौराणिक शस्त्र या चिन्ह नहीं बल्कि एक गैस थी. पूरी भीड़ को वह विजेता निगाह से देख रहे थे और उनकी इस जिंदादिली और त्याग पर लोग इतने फिदा हो गये थे कि सभी की आंखों में गैस की ही थोड़ी-थोड़ी चमक आ गयी थी और लोग बागबाग हो उठे थे. और अब मंच पर झमाझम्म उजाला था.

बच्चे और औरतें नाच न शुरू होने से उकताने लगे थे.

अचानक एक ओर से आवाज आयी.

"रामदीन अब कहे बेर करत हौ?"

दूसरी ओर से भी आवाज आयी :

"अब जल्दी उठो भइया."

और एक तरफ से आवाज आयी :

"हां, हां, अब न देर करौ या, सबेरे हरौ तो जोत का है ससुर."

इस बात पर फिर एक ठहाका भीड़ ने लगाया.

हल जोतने की बात पर ठहाका? वह भी गांव में.

क्यों नहीं? यह आवाज चिरैयादास की थी. चिरैयादास बांमन हैं. मनु भगवान ने अपनी किसी स्मृति में लिख दिया था— "हलान्तयम् ब्रहावर्चसम्." और फिर सारे ब्राहमणों ने अपने ब्रहावर्चस की रक्षा के लिये तब से जो हल को त्यागा तो आज भी उसकी मूठ तक नहीं छूते. यह बात अलग है कि खेत-पर-खेत खरीदते जाना गांव के बांमन की सबसे बड़ी इच्छा है. यह बात भी अलग है कि कभी कुछ बांमनों ने जब शुरू-शुरू में भूमि स्वीकार कर खेती करानी शुरू की, तो उन्हें 'भूमिहार' कहकर शेष ब्राहमणों ने कलम कर दिया. लेकिन असली बामन अभी इस गांव में हल नहीं जोतते और इस बात की सूची लोगों ने अपने-अपने दिमाग में बना रखी है कि आसपास के गांवों में किस-किस बांमन द्वारा हल जोता जा रहा है? और ऐसे बांमनों को 'हरजोता' बांमन की एक नयी बनती जा रही श्रेणी में डालते जाते हैं, बेचारे चिरैयादास हल जोतते हैं और बांम-समाज में सम्मान गिर जाने के भय से भीतर-भीतर कांपते रहते हैं. मगर ईश्वर की कृपा से कम और उनकी लाठी की कृपा से अधिक उनका सम्मान समाज में दिन दूना और रात चौगुना बढ़ रहा है. इसी लिये चिरैयादास की इस बात पर लोगों ने उनकी खुशामद में यह ठहाका लगाया था. इस ठहाके से चिरैयादास को लगा कि गांव ही नहीं अलग-बगल भी उनका दबदबा कभी बना हुआ है क्योंकि और गांव के लोग भी नाच देखने आये ही हैं. अब उनके लड़के की शादी में चार-पांच हजार का तिलक जरूर चढ़ जायेगा. वह अपने इसी संदर्भ के सपनों में खो गये.

अचानक भीड़ से नाच शुरू करने की कई आवाजें आने लगीं. और कुछ लोगों ने रामदीन को तुरंत शुरू करने को कहा.

रामदीन मंच पर आया. दिन भर हल जोतने से शरीर का अंग-अंग टूट रहा था. फिर भी बेचारे ने लोक रंजन के लिये आज की 'साई' ले ली थी. इसके पीछे जाड़े की शुरुआत में एक रजाई भरवा लेने का लोभ भी था.

रामदीन करता भी क्या? पैदा होते ही गरीबी ने उसकी गर्दन में अपने जबड़े गड़ा दिये थे. उसका जन्म ही एक बंधुआ मजदूर के घर में हुआ था. पिता गांव के मुखिया के घर बचपन से ही लग गये थे. उनके भी पिता मुखिया के ही घर लगे थे और सेवा करते-करते इस लोक से चले जा चुके थे. लंबा कर्ज था, जो उतरता ही न था. रामदीन का बड़ा लड़का भी मुखिया के ही घर था. इस प्रकार चौथी पीढ़ी इस सेवा के पवित्र काम में पदार्पण कर चुकी थी. रामदीन ने अपनी पत्नी के गौने की साड़ी और 'बिलाउस' को अपने लिए सहेजकर रखवा लिया था. उन्होंने पत्नी को पहली ही रात बता दिया था कि गांव के आसपास के लोग उनका 'तमाशा' बहुत पसंद करते हैं. यों, उनकी पत्नी गौने के पहले ही खुद भी दो-तीन बार उनके तमाशे का मजा अपने मायके के गांव के आसपास जाकर ले चुकी थी. रामदीन के इस हुनर के कारण उनकी पत्नी की सखियां गांव में घास छीलते समय भीतर जलती थीं और उसकी इस खुशकिस्मती को अपनी न होने के दुख से उसे ताने मारकर "नचनिहा वाली" कहती थीं. मगर रामदीन की पत्नी जानती थी कि यह सब उनके मन की भंड़ास है और वह उन लोगों की इस हीनभावना को कोई घास न डालते हुए घास छीला करती थी. शुरू में तो उसे संदेह था कि कहीं रामदीन औरत या जनखा न हों, पर गौने के बाद उसका यह संदेह समाप्त हो गया था और वह भी रामदीन के तमाशे को जीविका का आधार ही मानने लगी थी. इसलिये उसने रामदीन के लिये अपने जिंदगी की सबसे कीमती चीजें गौनही साडी और बिलाउस खशी-खशी रख

स्कूल की अमानत

जया बतरा

स्कूल में इम्तहान चल रहे थे. टाइम-टेबल लगभग बदल-सा गया था. सुबह सात बजे से तीन बजे कहीं जाकर छुट्टी होती.

वह लैंगवेज टीचर थी. उसके दोनों पेपर हो चुके थे. चालीस-चालीस कापियों के दस सैट जांचने उसके जिम्मे पड़े थे: क्योंकि पांच सेक्शन लेती थी वह. लिखित परीक्षाओं के अतिरिक्त और भी स्कूल में बहुत कुछ होता... सालाना रिजल्ट में उन सभी चीजों के नंबर उसमें जोड़े जाते. मसलन... गृहकार्य, श्रुतलेख तथा कविता का मौखिक पाठ आदि.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़े थे. इसके अतिरिक्त रामदीन ने कहीं से पैसे बचाकर मेले में से एक नकली चोटी भी खरीद ली थी. अपने बाल वह न मुड़वाते थे और न ही कटवाते थे. इससे उनका नाई को दिया जानेवाला पैसा बचता था.बालों को वह कभी-कभी उसी पीली मिट्टी से धो लेते थे जो उनकी पत्नी अपने बाल धोने के लिए गांव के पूर्वी-उत्तरी क्षेत्र के 'मटखना' से ले आयी थी. पत्नी के हजार बार कहने से एक बार रामदीन बालों में तेल डालते थे. जिस दिन वह अपने बालों में तेल डाल लेते, उस दिन उनके बाल एक दृश्य कविता और उनसे सीधे टपकते हुए रस का साक्षात्कार होता. कोड़ा तेल लगाने की बात न उन्होंने समझी थी, न उनकी पत्नी ने, न इस गांव के किसी अन्य व्यक्ति ने और न आसपास के दूर-दूर तक के गांव वालों ने. इस कभी-कभी टपकने वाले रस से सबसे ज्यादा रामदीन की साड़ी प्रभावित हुई थी और उसका पल्लू तेजी से कीचट होकर रंग बदलता जा रहा था. साड़ी के इस बदलते रंग को देख-देखकर रामदीन की पत्नी का भी रंग बदलता जा रहा था और उधर कभी-कभी तमाशबीन रंगबाजों को भी यह बात रंग में भंग पैदा कर जाती थी.

मंच पर आकर रामदीन ने अपनी आंखें भरपूर खोलीं. उसके नेत्र शंकर के तीसरे नेत्र की तरह लाल थे. उसने एक अंगड़ाई ली. इससे औरतों और बच्चों को जहां नाच शुरू होने का भ्रम हुआ वहीं घुटे हुए मेलहा और नचहा गुस्से से जल उठे. मगर रामदीन ने किसी की परवाह न करते हुए अगले ही क्षण ''ई....ई....ई....'' करते हुए एक लंबी लभाई भी खींच दी.

इससे पहले कि नचहा और मेलहा अपनी लाठी लेकर रामदीन को पीट डालते, चिरैयादास ने भी ''ई....ई....ई....'' करते हुए जो एक बनावटी जंभाई ली तो पूरा समाज ठहाकों से गूंज उठा.

कुर्सी पर ही सो गये ठाकुर बमभोले की आंख खुल गयी और उन्होंने दौड़कर अपनी बंदूक उठा ली. आसपास के लोग ''है,...हैं...हैं...'' कहकर उन्हें रोकने दौड़े पर उन्होंने बंदूक को रामदीन की ओर तान दिया. बिजली की गति से चिरैयादास अपनी लाठी के साथ बमभोले की ओर कड़के. जैसे परशुराम के फरसे के आगे भगवान राम अपने बाजों के साथ फुक गये थे उसी प्रकार चिरैयादास की लाठी के सामने बमभोले झुक गये थे. उन्होंने चिरैयादास का पांव छुआ और कहा :—

''शांत होइ जाव बांमन दउता. बरुआ बहुत हलुक है.''

इस पर भीड़ ने फिर ठहाका लगाया और रामदीन की भी नींद तथा थकान भाग खड़ी हुई.

उसने फिर एक चक्कर आगे-पीछे का लगाया और कान पर हथेली रखते हुए तैयार हुआ. तब तक भगवानदीन ने अपने नये सेंके नगड़िया और नगाड़े पर कड़कड़ कड़कड़ का जो हाथ करा कि लगा कि बेनौरी पड़ रही है.

''वाह वाह वाह वाह'' — भीड़ से आवाज आयी. और सभी लोग पूरी तरह से टनमन हो उठे. कुछ भाई जी लोगों ने अपनी चूना-तंबाकू की थइली निकाल ली. तभी रामदीन ने फिर शुरू किया :—

अरे बाबू दरोगा जी...
कि हाय राम बाबू दरोगा जी
अरे कौने रे कसुरवा से सइयां मोरा पकड़्यो
कि हाय राम बाबू दरोगा जी!

और भगवानदीन ने अपने हाथों से फिर से ''कड़ कड़ कड़ कड़ झम झम झम'' की बनौरियां बरसानी शुरू कर दीं.

साथ हीरामदीन ने अपने गाने के ही साथ जो लोचदार फिरकियां शुरू कर दी थीं वह अब अपनी चरम सीमा पर आ गयी थीं.

नगड़िया और नगाड़े की आवाज पर रामदीन फिरगी बना हुआ है. कोई नहीं कह सकता कि रामदीन रामदीन है. उसके शरीर में किसी परम सुंदरी का उतार-चढ़ाव है. वह बिजली की गति से आधा मंच पर और आधा हवा में है. उसकी पत्नी की साड़ी इस समय कितनी चमकदार हो गयी है. उसकी दोनों चोटियां हवा में लहरा रही हैं. आंखों की लपकों का और भौंहों का उठना, गिरना, हाथों का आगे-पीछे आना जाना, कमर का टूट-टूटकर मटकना और फिर साड़ी का गोला होकर हवा में उठकर नगड़िया नगाड़े की धुन में एकास होते जाना. यही शेष रह गया है पूरे मजमें में. □

'सभ्यता-संकर' नाम से यह पूरा उपन्यास वाणी प्रकाशन द्वारा शीघ्र प्रकाश्य

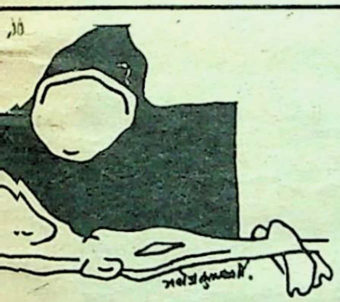

पांचों सेक्शन के इम्तहान लेकर उसने नंबर लिखे और तुरत-फुरत अपनी रिकार्ड कापी तैयार कर डाली. दो बच्चों के मेडीकल सर्टिफिकेट भी उसमें नत्थी कर लिये. ताकि रिजल्ट बनाते समय कोई परेशानी न आन पड़े तथा काम भी समय पर पूरा हो जाये.

रिकार्ड कापी... का मतलब था रिकार्ड कापी यानी बहुत संभालकर रखने वाली चीज... और खोने का मतलब था कि खोने वाले की छुट्टी.... स्कूल से यानी नौकरी से.

यह सोचकर अपनी रिकार्ड कापी की सार-संभाल के लिए उसने स्टाफ-रूम के चारों कोनों की ओर नजर दौड़ायी. कोई दराज... कोई आलमारी. यानी उचित जगह न पाकर उसे कुछ घबराहट-सी हुई फिर उसने उसे अपने बैग में रखने का ही निर्णय लिया. ''अपने घर से अधिक सुरक्षित स्थान और भला कहां हो सकता है.'' उसने सोचा.

छुट्टी का घंटा बजा ही था कि घर जाने से पूर्व उसने मिसेज यूजलैस को महज जानकारी देने के मकसद से सूचित भर करना चाहा, ''मैडम आई विल कीप दिस रिकार्ड कापी इन माय होम, सो आय एम बिग्रिंग...''

''नो!''तपाक से बोली वह... उतनी ही तेजी से 'डूइंग नथिंग बट लुक [illegible]'... वाली उक्ति को अक्षरशःचरितार्थ कर रहे उनके ह[illegible]छे से बिना आंख उठाये बड़ी सहजता से बोले, ''अरे मै[illegible]ल की अमानत स्कूल में रखकर जाओ... आदमी का क्या है आज है कल नहीं.''

''क्या मतलब?'' वह एकदम चौंक-सी पड़ी.

''यही कि एकसीडैंट वगैरह... खां..म खां... हम लोगों की मुसीबत बढ़ जायेगी... बताओ कहां किसको ढूंढते- फिरेंगे आपको... या रिकार्ड कापी को? यहां रखी रहेगी तो कहीं न कहीं मिल जायेगी... स्कूल से भला कहां जायेगी?'' इतना कहकर वह उसी व्यस्त मुद्रा में धूम्रपान के लिए बाहर निकल गये.

छुट्टी हो चुकी थी. सब जा चुके थे. छुट्टी के रजिस्टर में साइन करते वक्त जाने कैसे पैन उसके हाथ से छूट गया, काम पूरा कर लेने की खुशी एवं उत्साह भी पल भर में समाप्त हो गया फिर भी वह स्वयं को असहज होने देना नहीं चाहती थी.

अंततः रजिस्टर बंदकर बोझिल कदमों से वह स्कूल के प्रांगण से बाहर हो गयी. घर पहुंचने तक बस में लगने वाले हर छोटे-बड़े झटके पर उसकी समूची देह एक अनजनी आशंका से कांप-कांप जाती... □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारा के विरुद्ध

राजेंद्र राव

लेनिन विलास

जहां तक प्रगतिशील आलोचना का प्रश्न है. डा. रामविलास शर्मा का लेख **'यशपालजी और अश्लीलता'** एक ज्वलंत उदाहरण है. इसमें यौन उच्छृंखलता के आरोप में यशपाल के कथा साहित्य को कुछ इस तरह खारिज किया गया है, **'यही अनैतिक, अवसरवादी, टटपूंजिया, गैर जिम्मेदार दृष्टिकोण 'पार्टी कामरेड', 'मनुष्य के रूप' आदि उपन्यासों में प्रकट हुआ है.'** घनघोर साम्यवादी होते हुए भी यशपालजी को अपने बचाव में कुछ शास्त्रोक्त प्रमाण खोजने पड़े, जिनके संदर्भ में डा. शर्मा ने लिखा, **"यौन संबंधों के बारे में अपने गलत अनैतिक दृष्टिकोण को सही ठहराने के लिए उन्होंने लेनिन का गलत हवाला अपने एक लेख में दिया था. लेनिन ने उन लोगों का विरोध किया था जो कहते थे कि जैसे किसी स्वच्छ गिलास से पानी पीने में हानि नहीं है, वैसे ही किसी स्वस्थ नारी से यौन संबंध कायम करने में हानि नहीं है. यशपालजी ने इसका ठीक उल्टा अर्थ लगाकर 'स्वतंत्र प्रेम' के समर्थन में लेनिनवाद को प्रस्तुत कर दिया."**

श्री रामविलास पांडेय द्वारा संपादित **'यशपाल-व्यक्तित्व और कृतित्व'** में अप्रतिम कथा शिल्पी पर लिखे गये महत्वपूर्ण लेख संकलित हैं. डा. रामविलास शर्मा के नजरिये के बाद एक रूसी आलोचक डा.वी.आई. लानकिन की टिप्पणी का यह अंश देखें, **"सोवियत साहित्यिक आलोचना में यशपाल की कृतियों की तुलना शोलोखोव की कृतियों से की जाती है. वास्तव में यशपाल की रचनाओं में हमें कहीं समस्याओं का गहरा विश्लेषण, विषय का अमर महत्व, सामाजिक परिवेश का सच्चा चित्रांकन नजर आता है जो शोलोखोव की कृतियों में पाया जाता है."**

सुखद आश्चर्य : अतएव

जिन लोगों का विचार है कि सरकारी अनुदान से चलने वाले साहित्यिक संस्थानों से प्रकाशित होनेवाली पत्रिकाओं में भरती की रचनाओं के सिवा कुछ नहीं होता, उन्हें उ.प्र. हिंदी संस्थान की त्रैमासिकी **'अतएव'** का प्रवेशांक देखकर हैरानी होगी. वैचारिक लेख, कहानी, कविता, नाटक, संस्मरण, समीक्षा, सांस्कृतिक समाचार, श्रद्धांजलि—क्या नहीं है 280 पृष्ठ की महज दस रुपये मूल्य की इस भारी भरकम पत्रिका में. मार्कंडेय की **'निबंध सौरभ'** और ममता कालिया की **'उमस'** जैसी जोरदार कहानियों के साथ ही प्रगतिशील कथा साहित्य के मूल्यांकन पर चंचल चौहान की तीखी टिप्पणी ध्यान आकर्षित करती है, अपनी साफगोई की वजह से. प्रगतिशील आलोचकों की कमजोर नस पकड़ते हुए चौहान लिखते हैं, **" प्रगतिवादी आलोचना का प्रस्थान बिंदु अधिकतर हिस्सों में रचनाकार का जीवन रहा है. अगर प्रकाशचंद्र गुप्त या रामविलास शर्मा की आलोचना पद्धति को गहराई से विश्लेषित करें तो पायेंगे कि वे रचनाकार के निजी जीवन या निजी व्यक्तित्व से आलोचना की शुरूआत करते हैं और उस व्यक्तित्व की तसवीर में कहीं-कहीं रचना के पैबंद लगा देते हैं.—मूल्यांकन का परिप्रेक्ष्य यदि व्यक्ति यथार्थ की जगह सामाजिक यथार्थ देखने का रहा होता तो कहानी जैसी विधा उनके समीक्षा कर्म की मदद करती. सामाजिक यथार्थ देखने के लिए रचनाकार के बजाए रचना पर ज्यादा भरोसा करना पड़ता."**

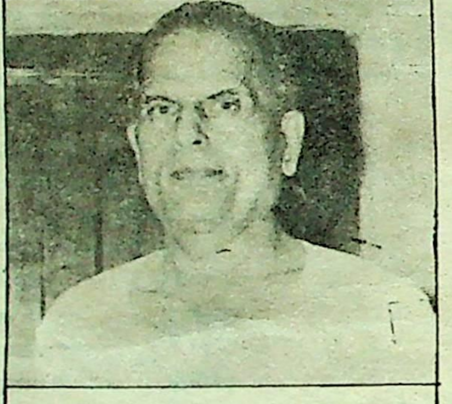

रामविलास शर्मा

सजग आलोचना

आलोचना की पुस्तकें प्रायः नीरस और बोझिल होती हैं. अपवाद है पंजाब प्रकाशन चंडीगढ़ द्वारा प्रकाशित डा. परेश का संग्रह **'आलोक और छाया'** जिसे आसानी से एक ही बैठक में पढ़ा जा सकता है. इसमें कथा-साहित्य, कविता और नाटक से जुड़े विषयों पर धारदार और रोचक टिप्पणियां हैं जिनके माध्यम से एक दबंग आलोचक हमारे सामने उभरता है. **'आंचलिकता और आधुनिकता'** लेख से एक उद्धरण साभार, **"अभी यह कहने का दौर नहीं आया किंतु इस लेख का लेखक साक्षी है उन दिनों का जब नामवर सिंह चितपुर स्ट्रीट के अंधेरे चाय घरों में 5-5 पैसे की चाय पी रहे हैं— उनके सभी प्रतिबद्ध युग सहकर्मी जाने किस जलती हुई प्रतिबद्धता से उस दग्धता को आहरित कर रहे हैं जो प्रेमचंद के पुत्रों के माध्यम से नहीं— निराला और मुक्तिबोध की रचनाओं से चलती हुई— इस समय के सजग समीक्षक के माध्यम से समकालीन लेखन में उतरी है. इनकी यह सजगता नहीं होती तो राकेश और कमलेश्वर के पात्र शराब और सिगरेट में ही डूबे रहते और केवल उस मखमल का ही जिक्र करते जिसका जायका रीतिकाल के कवि को भी शायद मयस्सर नहीं हुआ था.'**

डा. परेश की यह चुटकी जरा देखें, **"मेरी दृष्टि में धर्मयुग के उपहार अंक में छपे हुए सारे उपन्यास मात्र कहानियां हैं— उपन्यास जैसा घनत्व वहां है नहीं. उपन्यास का वजन 200-400 ग्राम तो होना ही चाहिए."**

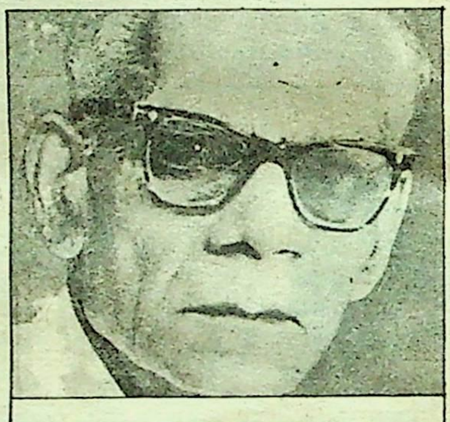

यशपाल

और अब, कहानी दरबार

वक्त के साथ-साथ सामंतशाही ने भी अपने तौर-तरीके बदले हैं. इन लोगों के आधुनिक संस्करण कथा साहित्य में उसी तरह दिखाई पड़ते हैं जैसे स्वतंत्रतापूर्व के उपन्यास-कहानियों में इनके पुरखे दिखाई देते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं. कहा जा सकता है कि सामंतवाद और कथा साहित्य का चोली दामन का साथ रहा है. इन आधुनिक सामंतों को कभी-कभी पुरानी परंपराओं का मोह सताने लगता है, कि राजमहल सजें, बाजे गाजे के साथ हाथी पर जुलूस निकलें और दरबार लगाया जाए. यह नास्टेल्जिया भूतपूर्व नरेशों को ही नहीं, प्रजाजनों को भी सताता है. हाल ही में ग्वालियर की राजसी ठाठबार वाली शादी में जुड़ी भीड़ इसका जीता जागता प्रमाण है. बहरहाल यहां हम एक नये किस्म के दरबार का जिक्र छेड़ रहे हैं जिसका नाम है, कहानी दरबार. जी हां, हिंदी सहित तीन भारतीय भाषाओं का भव्य कहानी दरबार लगा और दो दिन तक लगा रहा. कहां? दिल्ली में. दरबार लगाने के लिए दिल्ली से बेहतर कौन-सी जगह हो सकती थी.

अत्यधिक प्रगतिवाद से त्रस्त हिंदी कथाकारों के लिए पंजाबी भाषा के कवि दरबार की तर्ज पर आयोजित 'कहानी दरबार' का आकर्षण सहज ही समझा जा सकता है. दिल्ली की सभी तोप तलवारें दरबार में हाजिर हुईं. कौन कहता है कहानी साहित्य की केंद्रीय विधा नहीं रही. तीन भाषाओं के 100-150 कहानीकार इस आयोजन में शरीक हुए और करीब 50 लेखकों ने या तो कहानी पाठ किया या कहानी पर बातचीत की. आगे खबर देते हुए जनसत्ता (10-1-88) में राजेंद्र उपाध्याय ने लिखा है, "**हिंदी कहानी का परिचय देते हुए कमलेश्वर ने कहा कि हिंदी कहानी में आम आदमी लौट चुका है.**" इस सफल दरबार से एक दिलचस्प तथ्य सामने आता है कि कहानी जरूरी नहीं कि पढ़ी ही जाये, सुनी भी जा सकती है और इस कदर कि दो दिन में लोग 50 कथाकारों को सुन लें, उफ तक न करें. हालांकि बड़ी संस्था में सजधजकर उपस्थित महिला कथाकारों को देखने-सुनने का अपना आकर्षण रहता है. प्रकाशकों द्वारा कथा संग्रह छापने में दिखाई जाने वाली अरुचि और कथा पत्रिकाओं की गिरती पाठक संख्या से चिंतित होने की अब जरूरत नहीं. कहानी दरबार चल निकले तो फिर एक बार जलवा देखने को मिलेगा, कथाकारों का.

कृष्णा अग्निहोत्री

उतरते मुखौटे

यह सभी जानते हैं कि फिल्म, टी.वी. प्रोड्यूसरों की तरह लोकप्रिय पत्रिकाओं के कुछ संपादक भी अपने पद का लाभ उठाने से नहीं चूकते. नवोदित महिला लेखिकाओं को कई दफे ऐसे संपादकों की रसिक वृत्ति को झेलना पड़ता है. एक युवा लेखिका ने तो कुछ वर्ष पहले हमें हिंदी के जाने माने साहित्कार संपादकों के अतिरिक्त स्नेहयुक्त पत्रों का एक मोटा पुलिंदा दिखाया था. हमारी समझ में यह भी एक तरह का यौन-शोषण है. इसके खिलाफ मन ही मन भुनभुनाने के अलावा किसी ने कुछ किया हो ऐसा सुनने में नहीं आया. नदी में रहकर मगर से बैर कौन मोल ले. कुछ होशियार लेखिकाओं ने तो इस स्थिति का भरपूर फायदा भी उठाया है.

कथा लेखिका कृष्णा अग्निहोत्री ने एक मार्मिक आत्मकथात्मक आलेख **'लगता नहीं है दिल मेरा'** में बड़े साहस और बेबाकी से ऐसे संपादकों के चेहरों को बेनकाब किया है जो अपनी पत्रिका में छपने वाली लेखिकाओं से पूर्ण समर्पण की अपेक्षा रखते हैं. दूसरी ओर ये लोग सारी दुनिया को नैतिकता का पाठ पढ़ाते नजर आते हैं. वैचारिकी के जनवरी 88 अंक में प्रकाशित यह लेख बुद्धिजीवी पुरुषों की शोषण वृत्ति को खूबी से उजागर करता है और ईमानदारी तथा उद्देश्यपूर्णता के कारण याद किया जायेगा. एक झलक— "**जब मैं एम.ए. व पी-एच. डी पूरी करने हेतु मायके में थी तब टकरा गयी आज के एक विख्यात संपादक से जो बड़ी पत्रिका संभाल रहे हैं. मैं यदि आत्मावलोकन करूं तो इतना स्वीकारती हूं कि प्रारंभ में उनके प्रति मेरा झुकाव केवल साहित्यिक मार्गदर्शन पाने के लिए ही था लेकिन जब उनका मेरे प्रति लगाव बढ़ता ही गया तब ही मैंने उस लगाव को मन से भरपूर स्वीकारा. मन से पर तन से नहीं क्योंकि मैं संस्कार व आदर्शों से अलग न हो सकी. जिसकी विडंबना पर वे आज भी मुझे व्यंग देते हैं.... वे यदि मेरे मन की भावुकता, संस्कारबद्धता का अंदाज लगा प्रतीक्षा करते तो मैं शायद इस प्यार में पूरी तरह समर्पित हो जाती और आज लेखिका होने के साथ किसी बड़े पद पर होकर पुरस्कार भी बहुत ले लेती परंतु 'सौदा' मुझे मान्य न हुआ, मैं किसी की रखैल बनकर या पत्नी का हक छीनकर नहीं जी सकती थी और मुझे यह बात उनकी अच्छी नहीं लगी कि वे मुझे नौकरी तभी दिलवायेंगे जब मैं उन्हें मन व तन से पूरी तरह अपनाऊंगी.**"

(साभार, वैचारिकी संकलन, जन. - मा. 1988)

पढ़ना बुरी लत है!

हमारा उद्देश्य पढ़ने को बढ़ावा देना या उत्साहित करना नहीं है. इस देश का प्रत्येक व्यक्ति न केवल पढ़ने की आदत का शिकार है, बल्कि पढ़ने की उसे बुरी लत है. मैं समझता हूं कि सबसे बड़ी अफीम आंखों को छपे हुए शब्द की पंक्तियों का साथ-साथ घुमाते रहना है. अशांति और थकावट से भी छपे हुए शब्द की जरूरत को बढ़ावा मिलता है. मेरे दोस्त ने, जो पूर्वी अफ्रीका के युद्ध में हमारे सैनिक के साथ था, मुझे बताया कि किस तरह खंदकों में गीले कपड़ों में बैठे, भूखे सैनिकों को एक पत्रिका का पन्ना मिल गया था. प्रत्येक ने उस पन्ने को अपनी आंखों को आराम देने के लिए पढ़ा. आज की दुनिया की सबसे बड़ी बुराई यह है कि पढ़ने से आदमी के चिंतन में कमी आती है.

— 16 जुलाई, 1927, ब्रिटेन के शिक्षा मंत्री का भाषण

साहित्य का लोकतंत्रीकरण

अगर पचास हजार लोग एक उपन्यास खरीदते हैं, जिसकी साहित्यिक गुणवत्ता तीसरे दर्जे की है, तो यह तो निश्चित है कि ये सब लोग मिलकर कोई षड्यंत्र नहीं रच रहे हैं और इस पुस्तक की सफलता को यूं ही नकारा नहीं जा सकता. इस सफलता की व्याख्या करनी जरूरी है ताकि साहित्य के लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया को सही मोड़ दिया जा सके. यह काम अल्पसंख्यक समुदाय को करना होगा और पूरी धार्मिकता के साथ... मैं जानता हूं कि इस अल्पसंख्यक साहित्यिक समुदाय में से कुछ साहित्य के लोकतंत्रीकरण के काम को असंभव और गैरजरूरी मानते हैं. लेकिन वे भी स्वीकार करेंगे कि यह जो 'भीड़ के मनोवैज्ञानिक' की समस्या है'.. जो कलाओं में लोकप्रियता का गोपनीय रहस्य है'... उसे अधिक रूचि लेकर समझना होगा, ताकि इस समस्या को सुलझाया जा सके.

— कथा साहित्य और ख्याति, आर्नोल्ट बैनेट, 1927

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महेश राजा

छोटा-सा इंद्रधनुष

उसने जूते पर ब्रश फेरा. फिर जूते की चमक देखकर संतुष्ट हुआ और मुस्कराया.

जल्दी से जूते पांव में डालकर उसने फाइल उठा ली. सरसरी तौर से उसने यह भी देख लिया कि फाइल में सारे प्रमाण पत्र हैं या नहीं. दीवार-घड़ी सवा नौ बजा रही थी. उसे दस बजे तक पहुच जाना था. रसोई घर से मां और पूनू आ गयी. हर बार की तरह इस बार भी मां ने आरती उतारी , चावल उसके सर पर घुमाकर फेंके और घी-शक्कर उसके मुंह में डाल दी. पीछे खड़ी पूनू हंस रही थी. उसने लपककर मां के पांव छुए और पूनू की चोटी खींच दी.

"उई.. मां..आं.." पूनू चिल्ला पड़ी.

मां हंस दी. वह भी मुस्कराते हुए बाहर निकल गया.

धूप सिर पर चढ़ आयी थी. सड़क पर चहल-पहल थी. लोग तेजी से आ-जा रहे थे. किसी को दफ्तर जाने की जल्दी थी तो किसी को कालेज. उसने सोचा-आखिर मेरी मंजिल क्या है? उसका तो अभी कोई ठौर-ठिकाना नहीं. वह जानता था कि इस बार भी उसे कुछ हासिल नहीं होगा. कई बार के अनुभव से वह जान गया था कि इंटरव्यू तो एक चोंचला है. छंटनी की सूची तो पहले ही से तय होती है. कोई किसी मंत्रीजी की सिफारिश लेकर आया होता है तो कोई किसी साहब का साला होता है.

कार का हार्न सुनकर वह चौंक पड़ा. उसकी तंद्रा भंग हुई. वह फिर तेज कदमों से चलने लगा.

वह मध्यमवर्गीय परिवार से था. पिताजी को गुजरे दो साल हो चुके थे. वे एक प्राइवेट फैक्ट्री में काम करते थे. कोई विशेष राशि हाथ नहीं लगी. जो कुछ थोड़ा बहुत मिला था वह कर्ज में समाप्त हो गया. मां ने पड़ोस की महिलाओं के कपड़े सिलकर उसे पढ़ाया था. पिछले वर्ष ही उसने बी.ए. किया था, तब से वह 'वांटेड' कालम देखकर आवेदन पत्र भेजा करता था. कार्ड मिलता-अमुक दिन साक्षात्कार के लिए आना है. वह जाता. वहां उसे एक भीड़ नजर आती. बेरोजगार लोगों की भीड़. फिर लंबी प्रतीक्षा के बाद उसकी बारी आती. दो-तीन सवाल पूछे जाते और जाने को कहा जाता. वह पूरे आत्मविश्वास के साथ लौटता कि उसे इस बार नौकरी मिलेगी ही,लेकिन अब उसे लगने लगा था कि वह एक प्रतीक्षा में ही जी रहा है. अब तो उसे कुछ भी नहीं लगता. जैसे सब कुछ जाना-पहचाना हो. वही इंटरव्यू, वही सवाल और वही नतीजा.

दिन गुजरने लगते. सिलेक्शन लिस्ट में उसका नाम नहीं होता. मां और पूनू के चेहरे पर उसे कोई उत्साह नहीं दिखता वह नजरें झुकाकर कहीं खिसक जाता.

हर बार असफल होकर उसने अखबार बांटने का काम स्वीकार किया था. मा नाराज थी. उसने मना किया. मां की इच्छा उसे बड़ा अफसर बनाने की थी. स्वयं उसने भी पहले यही स्वप्न देखा था. लेकिन अफसर क्या चपरासी की नौकरी भी मिलना उसे संभव नहीं लग रहा था. उसने स्थितियों से समझौता कर लिया.

उसे पड़ोस के माथुर अंकल के बेटे रमेश की याद आ गयी. रमेश एम.ए. करने के बाद पी.एस.सी., बैंक आदि सभी प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठा था लेकिन बात कहीं नहीं बन पायी. माथुर अंकल नगरपालिका में नौकरी करते हुए रिटायर हुए थे. उनकी पहचान के कारण रमेश को क्लर्क की नौकरी भी मिल रही थी लेकिन रमेश ने क्लर्क होना स्वीकार नहीं किया. वह महत्वाकांक्षाओं में जीता रहा. धीरे-धीरे उसकी आयु सीमा पार कर गयी. अब वह अर्धविक्षिप्त-सा मारा-मारा सड़कों पर घूमता है.

केंद्र पास आ गया था. वही भीड़ थी जो हर बार होती थी. कुछ चेहरों पर उदासी के बादल और जिंदगी की थकान थी. कुछ चेहरे चहक रहे थे. शायद वे अपने साथ कुछ सिफारिशी पत्र लाये हों.

धीरे-धीरे पुकार होने लगी. लोग इंटरव्यू के

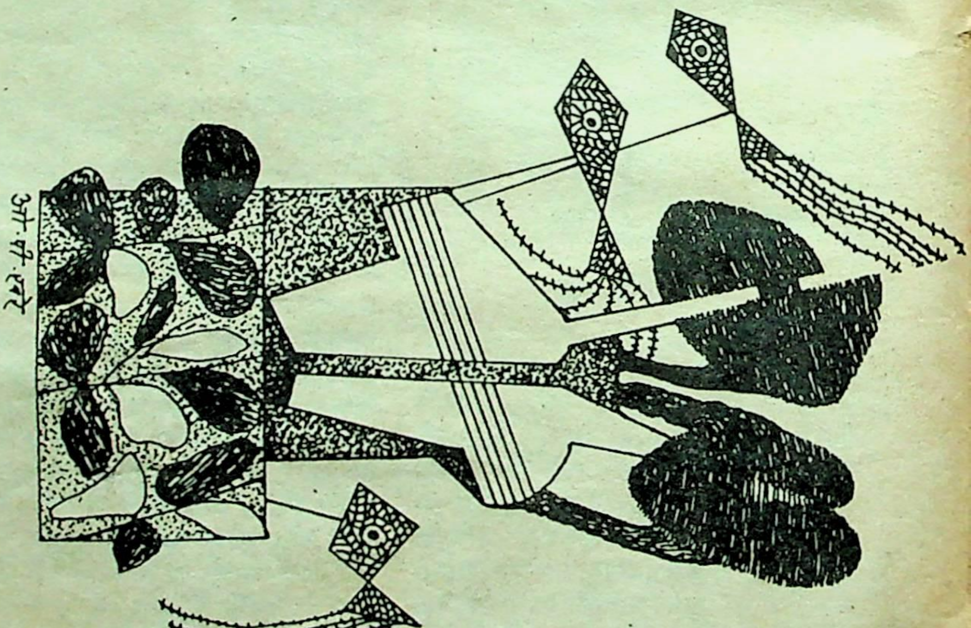

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका कहानी मंच से....

नवांकुर

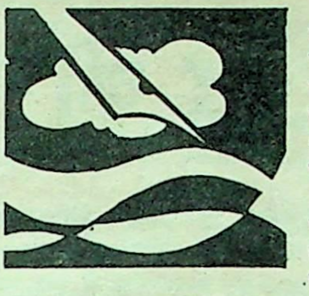

देश के तमाम महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के जरिये आज कैसी प्रतिभाएं सामने आ रही हैं, लेखन के प्रति उनमें कैसा लगाव है...और रचनात्मकता के संदर्भ में वे क्या सोच रहे हैं. इस स्तंभ के अंतर्गत ऐसी नयी प्रतिभाओं की तलाश करते हुए हर माह एक उभरते रचनाकार की कहानी प्रकाशित की जायेगी. रचना भेजते समय यह न भूलें कि अपने विभागाध्यक्ष अथवा संस्थान के प्रधान का इस आशय का प्रमाण पत्र भेजना अनिवार्य है रचनाकार संस्थान में अध्ययनरत है और 'सारिका कहानी मंच' का सदस्य है.

यदि आपकी संस्था में 'सारिका कहानी मंच' नहीं है और आप विधिवत इसका गठन करना चाहते हैं तो 'नवांकुर' स्तंभ के कूपन की कटिंग लिफाफे पर पते के साथ चिपका कर संपादक से पत्र व्यवहार करें? रचनाएं भेजते समय भी कूपन का प्रयोग अनिवार्य है.

कमरे में जाते और मुस्कराते हुए वापस आते. उसकी भी बारी आयी. वह कमरे में दाखिल हुआ. उसे बैठने को कहा गया लेकिन वह खड़ा रहा. दुबारा जब उससे फिर बैठने को कहा गया तब वह सामने रखी एक कुरसी पर अपने पैर कुरसी के नीचे पीछे की ओर ढकेलकर बैठ गया. उससे कुछ औपचारिक प्रश्न पूछे गये. उसने सही जवाब दिये. फिर उसे जाने को कहा गया और वह बाहर निकल आया.

धूप बढ़ रही थी. अस्पताल के सामने से गुजरते हुए याद आया कि कमल से मिले बहुत दिन हो गये.

कमल अस्पताल में कंपाउंडर था. बुरे समय में वह उसके काम आया था. कमल हंसमुख और सरल हृदय का था. उसे सदा ढाढस बधाता. जिंदगी के प्रति आस्थावान होने की बात कहता.

जब वह उससे मिलने पहुचा तब कमल ड्रेसिंगरूम में एक मरीज की चोट पर पट्टी बांध रहा था. कमल ने उसकी ओर देखा. पट्टी बांधकर वह बाहर आया. उसे अपने साथ ड्रेसिंग रूम के अंदर ले आया. पास रखी कुरसी पर उसे बैठने को कहा और खुद बैंच पर बैठ गया.

"अब सुनाओ.. क्या हाल है? कुछ जमा? सब ठीक हो जायेगा.. बच्चा... ऊपर वाले पर भरोसा रखो."

फिर दोनों ठहाका लगाकर हंस पड़े.

बाहर आकर उन्होंने एक टपरीनुमा होटल में चाय पी. इधर-उधर की बातें होती रहीं. उसने कमल को घर पर आने को कहा और विदा ली.

घर पहुंचा तो देखा कि मां बाजार गयी हुई थी. पूनू रसोई में थी. कितनी समझदार हो गयी है पूनू. बेचारी सातवीं तक ही पढ़ सकी. बाबूजी नहीं रहे. उम्र के अनुसार उसने कोई मांग आज तक नहीं की थी. एक बार उसकी नौकरी लग जाये तो वह पूनू को अच्छे कपड़े ला देगा, उसे अच्छी तरह रखेगा और उसके ब्याह के लिए कोई अच्छा-सा लड़का भी तलाश करेगा.

उसने जेब में हाथ डाला. अखबार बेचने से जो कमीशन उसे मिला था, उसमें से केवल एक रुपये का सिक्का उसकी जेब में बचा था. उसने पूनू को आवाज देकर बुलाया और एक रुपये का सिक्का उसकी हथेली पर रख दिया. बहुत देर तक वह पूनू को चुपचाप देखता रहा.

मां अभी तक नहीं आयी थी. अब वह आज के साक्षात्कार के बारे में सोच रहा था. क्या इस बार भी कुछ वैसा ही होगा जो हर बार होता आया है?

पिछली बार वह लिखित परीक्षा में नौकरी के लिए अच्छे नंबरों से पास हुआ था. वह बहुत खुश था. मां भी खुश थी. उसे लगा कि इस बार जरूर उसे नौकरी मिल जायेगी. साक्षात्कार के लिए उसे बुलाया गया. तीन लोग थे. एक ने उसे मनोवैज्ञानिक ढंग से ऊपर से नीचे तक देखा. दूसरे ने उसका नाम पूछा और यह भी पूछा कि उसके पिता क्या करते थे. उसने यह भी पूछा कि बाबूजी को मरने के बाद प्रॉविडेंट फंड की कितनी रकम मिली थी. तीसरे ने सीधा प्रश्न किया, "नंबर तो अच्छे हैं तुम्हारे.. दस हजार की व्यवस्था कर सकोगे?"

वह चौंक पड़ा. "जी" भर कह पाया.

तीसरे व्यक्ति ने फिर कहा, "हां हां.. पुलिस विभाग में इस पद पर बैठ जाओगे तो इससे अधिक कमा लोगे."

उससे कुछ कहते नहीं बना. पहले व्यक्ति ने कहा, "अब आप जा सकते हैं."

कुछ दिनों बाद पता चला कि उसकी नियुक्ति नहीं हुई.

मां आ गयी. उसने मां की ओर देखा. मां खुश थी. पूछा, "इंटरव्यू कैसा रहा?

उसने कहा, "ठीक था."

वह जानता है, मां इंटरव्यू का परिणाम आने तक खुश रहेगी. कमल भी आयेगा और उससे कहेगा, "सब ठीक हो जायेगा.. ऊपरवाले पर भरोसा रखो बच्चा..." □

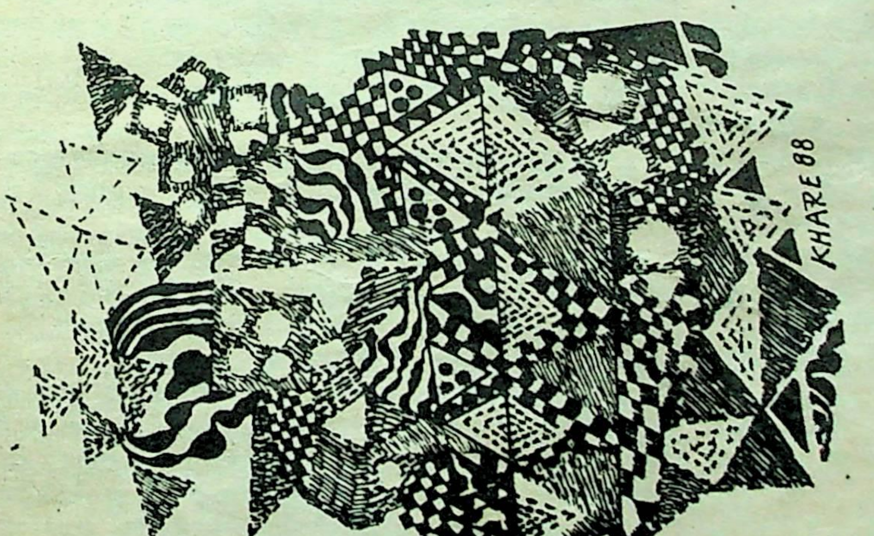

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोपाल चतुर्वेदी

पान और पेड़ की दुकान

यह कोई बर्तानिया तो है नहीं. अपने देश में बात करने को राम-रामायण, दूरदर्शन-दहेज, राजा-राजीव आदि अनेक रोचक विषय हैं. पान की दूकान पर मौसम की चर्चा ने मेरे कान खड़े कर दिये.

"इस साल गर्मी कुछ ज्यादा है." पसीना पोंछते पान की प्रतीक्षा कर रहे एक सज्जन ने सबको सूचित किया.

"क्या फर्क पड़ता है. पहले ठिठुरकर मरे थे, अब कुछ लू के चलते मरेंगे." पीक की पिचकारी चलाते हमारे परिचित कैलाश 'कल्पित' ने ऋतु परिवर्तन की नैसर्गिक परिणति का विवेचन किया.

"ऐसे एक बात अच्छी है. गर्मी में कम कपड़ों से काम चल जाता है," बाबू राम सहाय ने राय दी.

"कपड़े ही क्यों! सब्जियां भी तो कद्दू-सी रहती हैं. खाओ तो कद्दू से, न खाओ तो कद्दू से. अब इतनी बचत है—आप लोग मेरा उधार चुकता कर दें," पान-भंडार के प्रो. (प्रोपराइटर) प्रीतम ने ग्राहकों को आगाह किया. आसपास खड़े कर्जदारों का स्वयंभू प्रतिनिधि बन मैंने प्रो. प्रीतम से निवेदन किया, "भाई जी, अब तो सरकार भी लोन-मेलों के उत्सव का आयोजन कर उधार बांटती है. एक आप हैं कि छोटे-मोटे कर्जों का उलाहना देते हैं."

प्रो. प्रीतम ने मुझे बीच में ही टोकते हुए अपने सरकार न होने की घोषणा की, "सरकार तो कर और कमीशन खाती है. अपने तो दाल-रोटी पर जिंदा है. उसका हमारा क्या मुकाबला. कहां गटर का मल, कहां गंगाजल." बहस आगे बढ़ पाती कि गगन-मार्ग से धोती की गठरी में लिपटी एक इंसान जैसी चीज 'हाय दैया' की दुहाई देती कैनवस की कमजोर छत को भेदती कत्था-चूना, सिगरेट-सुपारी के क्षेत्र में क्रांति कर गयी.

प्रो. प्रीतम के मुंह पर चूने और आकाशीय विपत्ति के कत्थे का लेप हो चुका था. उधार दल के सारे सदस्य प्रभु की अप्रत्याशित कृपा का मन ही मन गुणगान कर रहे थे कि पान के खोके से गुत्थमगुत्था की हरकत और गाली-गुफ्ता का अभद्र आदान-प्रदान गूंज उठा. प्रो. प्रीतम अपनी उजड़ी मिल्कियत के संत्रास का आक्रोश पतित आदम की औलाद पर निकालकर उसका आंशिक चीर-हरण कर चुके थे. धोती की भौतिक केंचुल को तज वह अचानक आत्मा की चड्डी धारे हम लोगों के बीच आ गिरा. 'जय श्री राम' की तर्ज पर 'जाने न पाये' कहते हुए प्रो. प्रीतम उसकी धोती कंधे पर गदा की तरह सजाये उसके पीछे कूदे. हम लोगों ने उधार-धर्म निभाते हुए प्रो. प्रीतम के शिकार को घेर लिया.

"क्यो बे! तुझे मेरी दूकान से क्या दुश्मनी है," प्रो. प्रीतम ने हुंकार भरी.

" जरूर इसे 'प्रयाग पान संगम' के प्रो. प्रयाग ने भेजा होगा. व्यापारिक प्रतिबद्धता में इस तरह की घुसपैठ आम हो गयी है." मौसम विशेषज्ञ ने ज्ञान प्रदर्शित किया.

"हम भी काशी के हैं. ऐसा धोबी पाट लगायेंगे कि....." कहते हुए प्रो. प्रीतम आक्रामक मुद्रा में उसकी चड्डी उतारने लपके कि एक दर्शक ने बीच-बचाव करते हुए अनुरोध किया, "गुरू कुछ देर रुक जाओ. जरा मोहल्लेवालों को बुला लूं. बिचारे बिजली न होने से बिना टी.वी. 'बोर' हो रहे हैं. आप अपना 'वीडियो शो' तब तक मुल्तवी रखें, प्लीज!"

मारपीट के मनोरंजन के अभाव में प्रो. प्रीतम ने अपनी अध्यक्षता में उधार-दल के सहयोग से एक अनौपचारिक जांच कमीशन का गठन कर लिया था.

"नाम क्या है?" सवाल हुआ.

चड्डीवाला बोला, "पलटू राम."

"किसने भेजा था," कमीशन ने जानना चाहा.

"किसी ने नहीं. मैं तो दातून तोड़ रहा था कि पैर फिसल गया." उसने धराशायी होने का स्पष्टीकरण दिया.

"सच सच बताओ, तुम्हें इस विध्वंस के लिए किसने उकसाया? हम कोई संसदीय जांच समिति के सदस्य नहीं हैं कि शराफत और शिष्टाचार से पेश आयें. अभी हाथ-पैर तोड़ देंगे!" राम सहाय जी ने बाहें चढ़ाते हुए भीड़ को प्रभावित करने के लिए पलटू को चेतावनी दी.

पड़ौस की लकड़ी के टालवाले सिंह साहब ने पर्यावरण की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए पलटू को हड़काया, "पेड़ काट रहा होगा, वर्ना क्यों गिरता. ऐसे ही लोगों ने निजी प्रयास से पेड़ काटकर देश का मौसम खराब कर रखा है."

"आप लकड़ी कहां से लाते हैं?" एक जिज्ञासा आयी.

"हम तो सरकार की सक्रिय सहायता से फालतू जंगलों का सफाया करते हैं." उन्होंने अपनी कार्यविधि बतायी.

"वह कैसे?" फिर सवाल आया.

"क्या आप भी लकड़ी का धंधा करना चाहते हैं?" टालवाले उत्तर टाल गये. "देखिये, व्यापार में सफलता के गुर यों ही नहीं बताये जाते. बोफोर्स के सौदे की दो-दो संसदों ने धर-पकड़ की. कुछ पता लगा? हम क्या काठ के उल्लू हैं जो खुले आम अपने राज खोलें."

इस चर्चा के चलते पेड़ से टपके प्रेत को लोग भूल चले थे. वह मौका ताड़कर निकल भागा. प्रो. प्रीतम ने उसे धर दबोचा. "पूरी दूकान चौपट कर दी! अब भागता है?" उसे गुद्दी पर धप मारकर धमकाया गया.

"बड़ी प्यास लगी थी सरकार." पलटू ने पलायन का कारण बताया.

"तुझे तो मैं ऐसा पानी पिलाऊंगा कि नानी याद आ जायेगी." प्रो. प्रीतम चीखे.

"सरकार तो टैक्स लेकर भी पानी नहीं पिला पाती. आप क्यों यह दुस्साहस कर रहे हैं," बाबू राम सहाय ने सलाह दी. "पहले यह मेरी दूकान ठीक करेगा. तिरपाल लगायेगा और फिर पानी भी पायेगा," प्रो. प्रीतम ने बेगार लेने का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया.

मुझे आशंका हुई कि प्रो. प्रीतम कहीं हम कर्जदारों को भी दूकान-निर्माण में न जोत लें. "मुझे भी प्यास लगी है," कहते हुए मैं गुप-चुप खिसक लिया. तमाशे के खातमे और बेगारी के संक्रामक रोग के भय से सार्वजनिक पलायन की प्रक्रिया प्रारंभ हो गयी. टालवाले सिंह साहब ने शायद अपनी छवि सुधारने के लिए या संभावित ग्राहकों को पटाने के खातिर उठती महफिल को ठंडा पानी पिलाने का निमंत्रण दिया. सिंह साहब के पानीदार प्रस्ताव को मेरे साथ चार-पांच लोग सधन्यवाद स्वीकार कर, उनके पीछे हो लिये.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टाल पर पहुंचते ही वह चीखे, "भोला!"

एक मूंछदार पहलवान अंदर से अवतरित हुआ.

"साहब लोगों का मुंह मीठा कराओ," उन्होंने हुक्म दिया और हमें बैठने का इशारा कर एक तख्त पर मसनद के सहारे लुढ़क पड़े.

थोड़ी देर बाद पहलवान एक हाथ में लोटा और दूसरे में प्लेट लिये प्रगट हुए. तश्तरी में पेड़े की शक्ल में भुने हुए बेसन और चीनी का मिश्रण था.

"खाइये, खाइये! मेरा तो उसूल है कि पेड़े खाने और पेड़ काटने के लिए होते हैं." उन्होंने हमें गैरजरूरी प्रोत्साहन देने की औपचारिकता निभायी.

"पर आप तो इसलिए पलटू की आलोचना कर रहे थे." हमने बेसन भरे मुंह से उनको याद दिलाया.

"एक व्यक्ति दूसरे पर गोली चलाये तो वह हत्या होती है. वह फौज या पुलिस करे तो देश या कानून की रक्षा. वनवासी सुरक्षा कर्मचारियों और उनके अधिकारियों से साठगांठ कर हम वृक्षों को सद्गति देते हैं. यह देश की सेवा है." टालवाले ने हमें समझाया.

उनके बयान की विश्वसनीयता चीनी और बेसन के मिश्रण से खासी बढ़ गयी थी.

"आपने दुरुस्त फरमाया. लकड़ी की जरूरत तो पालने से लेकर परलोक सिधारने तक है. बिना पेड़ काटे काम कैसे चल सकता है," एक विचार आया.

टालवाले का पानी पी-पीकर हम लोग पेड़ों को कोसने लगे. बेसनी विचारों के बैंगन इधर-उधर लुढ़ककर नयें दर्शन का सूत्रपात कर गये. "पेड़ों के आधिक्य से जंगल बनते हैं. वह कटेंगे तो लोग बसेंगे. तरक्की होगी. फिर वह ऊंचे-ऊंचे पेड़ हमें बौने होने का एहसास कराते हैं. तभी तो जापानियों ने वृक्षों का छोटा संस्करण खोज निकाला. हमें भी हर शहर में ऐसे जापानी जंगल लगाने चाहिए." कैलाश कल्पित ने कल्पना की उड़ान भरी.

"यों पेड़ों के फायदे भी हैं, चिड़िया घर बनाती है. साया मिलता है. फल-फूल अलग. इसी कारण हमारे पूर्वज पेड़ पूजते थे." बौद्धिक बहस में विरोध का स्वर उभरा.

"यही तो दिक्कत है. इस मोहल्ले में पेड़ कुछ ज्यादा हैं. कल मैं जा रहा था तो चिड़िया ने बीट कर दी." टालवाले ने इस दुखद याद के आते ही अपनी गंजी चांद को सहलाया.

"हमें दकियानूसी रूमानी खयालात छोड़ने चाहिए. यदि चिड़ियों को रहना है तो पिंजड़ों में रहें. जानवरों के लिए 'जू' है. जरा सोचिये, यदि पेड़ नहीं कटे तो पढ़ाई कैसे होगी! मैं तो इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि पेड़ सिर्फ काटने के लिए हैं." वृक्षों के विरुद्ध कैलाश कल्पित ने कुल्हाड़ी चलायी.

"पता नहीं कितनों का पेट काटकर एक बहुमंजिली इमारत बनती है. क्या इससे हमें पेट काटने का औचित्य सिद्धांत के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए. कटते हुए पेट और पेड़ दोनों विवश हैं. हमें उनकी रक्षा करनी चाहिए. वर्ना किसी दिन विद्रोह की जंगल की आग हम सबको समेट लेगी." इकलौते विरोधी ने मार्क्स की धुन बजायी.

"आप पेड़ों के मामले में राजनीति मत लाइये. दुनिया भर में पेड़ कटते हैं. वर्ना संसार पथरीले जंगल के बजाय हरा-भरा जंगल न होता! सरकार पेड़ लगवाती है. सरकार के सेवक कटवाते हैं. नये उगते हैं, पुराने ढहते हैं. यही जीवन-चक्र है. तख्त से लेकर तख्ते-ताउस तक पेड़ का प्रताप है. कुर्सी भी तो पेड़ से बनती है. जो जितने पेड़ कटवाता है, उतनी ही ऊंची कुर्सी पाता है. यही असली समाजवाद है. मिल-जुल के पेड़ काटो और समृद्धि बांटो." कैलाश कल्पित ने अपना बौद्धिक वर्चस्व स्थापित किया. टालवाले ने प्रभावित होकर पहलवान को प्रो. प्रयाग की दुकान से आठ-दस पान लेने के लिए दौड़ा दिया. तांबूल आगमन की सुखद सूचना पाते ही एक सज्जन ने पेड़ काटो अभियान में योगदान के खातिर अपना सर्वस्व अर्पित करने का प्रस्ताव रखा. वह लुंगी-बनियान पहने थे. उन्हें कठिनाई से उनके निश्चय पर अमल करने से रोका गया.

"यदि आप लोग ऐसे ही वनों का विनाश करते रहे तो हरे खेत के स्थान पर रेत ही रेत होगी." विरोधी फिर बोला.

"अच्छा होगा. हम भी खाड़ी देशों से अमीर हो जायेंगे," टालवाले ने उन्हें चुप कर दिया.

मार्क्स के चेले मौन और बाकी प्रतीक्षारत थे. मैं टालवाले की अनपेक्षित उदारता के रहस्य के बारे में सोच रहा था. इतने में पान आ गये. टालवाले भी थोड़ा खुले, "आप मानते हैं कि पेड़ काटना प्रगति के लिए आवश्यक है!"

एक के अलावा सबने बेसन-चीनी और पान की कीमत चुकाते हां में हां मिलायी.

"जंगल में जानवर रहते हैं. पेड़ काटकर हमें साबित करना है. कि हम इंसान हैं," बाबू रामसहाय ने चुप्पी तोड़ी.

"भैया, तुम विध्वंस करो, हम तुम्हारे साथ हैं," लुंगी ने फिर सहयोग का वादा दोहराया. मौसम विशेषज्ञ ने जिस डाली पर बैठो, उसी को काटकर कालिदास बनने की सलाह दी.

"हम आपकी क्या मदद कर सकते हैं," उन्होंने जानना चाहा.

"हम आपके साथ बौद्धिक स्तर पर सहयोग के लिए पूरी तरह प्रस्तुत हैं," कैलाश कल्पित बोले.

"हमारे लिए आपकी शुभकामनाएं ही काफी हैं. ऐसे आपकी कालोनी तो पुरानी और हवादार है. इसमें पेड़ भी बहुत हैं." टालवाले ने उत्तर दिया. मेरे अलावा सबने स्वीकृति में सिर हिलाये. अपने घर के सामने केवल सड़क थी. मार्क्स का बिगुल बजाने वाले पान चबाकर फूट लिये थे.

"आपके मोहल्ले के पेड़ बुढ़ा गये हैं. अब उन्हें रहने में भी कष्ट होता होगा. इन्हें मुक्ति देना हमारा पावन कर्तव्य है. इसमें आप चाहें तो मेरी सहायता कर सकते हैं." टालवाले ने पेड़ों की हमदर्दी में पहल की.

"क्या करना होगा?" एक स्वयंसेवक ने जानना चाहा.

"कुछ खास नहीं. अपने पास के पेड़ के तने के चारों ओर छह-सात इंच का गड्ढा खोदकर पेड़ के सूखने का इंतजार कीजिये. उधर पेड़ सूखे, इधर मुझे सूचित करें. बस आपका पेड़ के प्रति परोपकार का काम खत्म और मेरा शुरू," टालवाले ने अपने भविष्य के सहकर्मियों को प्रेरित किया.

"नेता जनसेवा के एवज में पद-कुर्सी का कलेवा करते हैं, हम पर्यावरण की सेवा के बदले क्या कुछ पत्र-पुष्प की आशा करें," एक ने सामूहिक भावना को शब्द दिये.

"एक पेड़ जो गिरा तो दो-सौ रुपये. ऐसे हमें जल्दी नहीं है." उन्होंने चारों तरफ लगे लकड़ी के प्रचुर ढेरों की ओर इशारा किया.

हम नामे की संभावना समाप्त होने पर निराश होकर घर चले आये. हमारा ख्याल था कि पान वाला ग्राहकों को चूना लगाकर कमाई करता है. शाम की चर्चा के बाद महसूस हुआ कि पेड़ की दूकान कहीं बेहतर है. किसे पता था कि मिल-जुलकर पेड़ों की कटाई की कमाई लाखों में होगी. हमें यकीन हो चला था कि हमने फालतू पढ़ाई की घास खोदी और उसके बाद से सरकारी नौकरी का भाड़ भसौंक रहे हैं. लकड़हारे बनते तो लाखों कमाकर सबके लाड़ले होते. इसी संत्रास के चलते हमेन अनिच्छा से खाना खाया और करवटें बदलते-बदलते न जाने कब आंख लग गयी.

सुबह उठे तो मोहल्ले में हलचल थी. "सुना आपने! रात को अचानक आग भड़क उठी. पानी के अभाव में लकड़ियां धू धू कर सुबह तक जलती रहीं," पत्नी ने उठते ही सूचित किया. अपनी परिचित टाल जल चुकी थी. बाहर निकले तो हमें हर पेड़ के चारों ओर खुदाई दिखी. यार लोग बिना समय खोये कमाई में लग लिये थे. थोड़े दिनों में पूरा मोहल्ला क्या सारा शहर हमारे घर के सामने की सड़क-सा सपाट होगा. हम यकायक उदास हो गये. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाजशास्त्र से एम.ए. हैं. आज की दुनिया के आदमी की तकलीफों को शब्द देने के लिए लिखती हैं: सारिका में प्रभावित होनेवाली यह इनकी पहली कहानी है.
संप्रति: अध्यापन
संपर्क: 831, सिविल लाइन्स, सुलतानपुर

नाहीद

अलविदा कैथी

मैं घाट की सीढ़ियों पर जड़ीभूत बैठा था, सहसा पीछे से किसी ने मेरे कंधे पर हाथ रखा, "हैलो मोहन!"

मैं चौंका! "मैं गोपाल हूं, मोहन नहीं."

"एक ही रूप के दो नाम. कहीं मोहन कहीं गोपाल."

मैं पूरी तरह से चैतन्य हो चुका था. वह भी सामने बैठ चुकी थी, उसकी आंखें मेरे चेहरे पर थीं. उनमें अग्निशिखा-सा कुछ था. मैं दो निमिष भी उन्हें देख न सका. सिर झुकाकर हंसकर कहा, "मैं हरे रामा हरे कृष्णा संप्रदाय का नहीं हूं. सनातन धर्मी हूं, और हर उस चीज का विरोधी हूं जो समाज को अव्यवस्था के दलदल में खींचे."

"मैं किसी दलदल में नहीं, बड़ी सख्त जमीन पर खड़ी हूं."

आक्रांताओं का रथ धूल उड़ाता चला जा रहा था. पीछे चेतना लहुलुहान है. क्योंकि शोधक से अधिक मानव हूं. मानव से अधिक पुरुष. इसलिए दीपा के दिए हुए जख्म आज भी जल रहे हैं. मां शादी के लिए कहती है मुंह फेरकर हंसता हूं— 'कितनी बार करूं. मां को वंशवृद्धि पिंड-तर्पण की चिंता है. मैं दिल के शमशानों में आस अभिलाषाओं की मुंडमालाओं का भैरवनाद सुनता हूं.'

दूसरी शाम घाट पर आकर खड़ा हो गया. सोचा, उसे बता दूंगा. दिल की पर्तों को उघाड़कर दिखा दूंगा— 'देखो यहां दिन-रात स्वाहा का मन्त्रोच्चार हो रहा है. गंगा का पानी भी टेम्स का पानी भी इस पर धृत सा जल उठेगा!!'

नाव बह रही थी. वह पानी में हाथ डाले उसकी धार को पलटने की कोशिश कर रही थी—मैंने उसे गौर से देखा. वह झुकी-झुकी उन अन-बहे आंसुओं को पीने की कोशिश कर रही थी जिनमें खून के कतरे थे. वह मुझे हाड़-मांस की कोई नारी मूर्ति नहीं, अमरनाथ की प्राचीरों पर जमी बर्फ के ढेर सी लगी जिसमें दिव्य आत्मा थी...प्रस्तुत है 'नये हस्ताक्षर' के अंतर्गत यह कहानी.

"मैं योगी भी नहीं हूं."

"मेरी मन-आत्मा में कोई विकार नहीं. तुम पीछे से मोहन जैसे लगे इसीलिए तुम्हारे एकांत में बाधा बनी. माफ करना दोस्त, मैं पिछले सात महीनों से इस शहर में हूं. कौन-सा आकर्षण मुझे यहां जाने से रोकता था, यह मैं आज जान पायी. एक हफ्ते में मुझे यहां से चले जाना है. अगर, तुम अपनी शाम के चंद लमहे मुझे दे सको तो खुशी होगी."

मैंने कहना चाहा— 'उबके हुए रंग वाले हर अंग्रेज से मुझे घृणा है.' पर शायद, वह इसका जवाब देती— 'कृष्णा वर्ण वाले हर हिंदुस्तानी मुझे प्यारे हैं.' इसलिए चुप रहा.

इतिहास का शोधक-अन्वेषक हूं. इतिहास के नाना अपरचित अनजान प्रसंगों को अनावृत्त कर, उस अनावरण को मुग्ध दृष्टि से देखता हूं. वह मधुमय भोर, वह वासंती ऊषा. सूरज के रथ के पीछे

"हलो मोहन."

"मोहन नहीं गोपाल!!"

वह मेरे पास थी. वह मुझसे मुश्किल से एक या दो इंच छोटी थी. उसने घेरदार लंबी फ्राक जैसी कोई चीज पहन रखी थी. घुटने से नीचे उसकी टांगें चांदनी के रंग की थी. पानी की सतह पर चांदी थी. दूर कुहासा चांदी पर झुका था. मेरे पास उसके बालों में सूरज था.

"एक दिन मोहन ने भी यही कहा था." उसकी आंखों से उत्कीर्ण तापीय तरंगें मेरे मस्तिष्क का एक्सरे ले रहीं थीं.

"क्या?" मैं घबराकर पूछ बैठा.

"दिन उजाला था. हम टेम्स के किनारे टहल रहे थे. वह ठिठककर रुका था. मेरे कानों में चांदी की बालियों में फंसे हुए तिनके को निकालकर उसने अपने दांतों में दबा लिया था और बोला था— 'यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरज आज तुम्हारे बालों को चूमने के लिए उतरा है."

"पर मैंने तो ऐसा कुछ नहीं कहा..."

"सोचा तो..." वह जोर से हंसी और मेरा हाथ पकड़कर नाव पर उतर आयी, "मैं तीन बरसों से चल रही हूं. नेपाल से कश्मीर, राजस्थान से दिल्ली, आगरा से बनारस सच, अद्भुत है तुम्हारा देश, पर अनजान नहीं."

"कैसे...?"

"इसीलिए कि मोहन मुझे पहले ही सब कुछ बता चुका है."

"ओह प्लीज..."

"कैथी."

"हां, कैथी प्लीज, क्या हम मोहन के बिना नहीं रह सकते!"

"मोह... गोपाल इतना गुस्सा मत करो. गुस्सा मांसपेशियों में खिंचाव पैदा करता है. और यह तनाव चुपके से तुम्हारी उम्र के कुछ लम्हे चुरा ले जाता है."

नाव बह रही थी. वह पानी में हाथ डाले उसकी धार को पलटने की कोशिश कर रही थी— मैंने उसे गौर से देखा. वह झुकी-झुकी उन अन-बहे आंसुओं को पीने की कोशिश कर रही थी जिनमें खून के कतरे थे. वह मुझे हाड़-मांस की कोई नारी मूर्ति नहीं, अमरनाथ की प्राचीरों पर जमी बर्फ के ढेर सी लगी जिसमें दिव्य आत्मा थी.

पहले दिन कैथी को देखकर आक्रोश का जो पौधा पनपा था, वह टूटा ही नहीं, जड़ से उखड़ गया. बरसों पहिले दीपा के जाने के बाद से ही उसके वे अंतिम वाक्य मुझे झुलसाते रहते थे— "तुम्हारा इतिहास का ज्ञान इतिहास के विद्यार्थियों को कुछ रुचिकर पुस्तकें तो दे सकता है, पर मुझे क्या मेरे मेकअप का सामान भी दे सकेगा...??" मैंने उसे विश्वास दिलाना चाहा था कि मैं भले ही उसे मेकअप की चीजें मुहय्या न कर पाऊं पर मैं उसे जो कुछ दूंगा वह शायद कोई दूसरा न दे पाये. उत्तर में उसने बड़े दंभ से कहा था— "जिससे शादी होगी, उसे प्यार करना ही पड़ेगा" वह जबरदस्ती का प्यार उसे रास आया कि नहीं यह तो नहीं जानता. अब जब कैथी ने कुछ सोचने पर मजबूर कर दिया तो टटोला और पाया कि दीपा के नाम का कांटा दिल के जिस उदास कोने में गड़ा था, आज वह जगह मुर्दा हो चुकी है. अब न दर्द का एहसास.

कभी दीपा की यादें रात भर सोने नहीं देती थीं. आज कैथी के बारे में सोचता रहा. उसने मेरे मन को झिंझोड़कर जगा दिया. पर एक दूसरे रूप में— "तुम्हारा ज्ञान, दर्शन, कवित्व किसी को क्या दे सका! आम आदमी न दार्शनिक होता है न कवि. उसे रोजी रोटी चाहिए. शांति से जीने का हक चाहिए. क्या तुम हिंदुस्तान में इसकी कमी नहीं महसूस करते...??"

दो दिनों तक अपनी अत्यधिक व्यस्तताओं के कारण मैं उससे न मिल सका. तीसरे दिन अपने एक दोस्त की गाड़ी ली और सोचा उसे बनारस की वह झलक दिखाऊं जिसे देखने की चाह लेकर आते तो बहुत है, पर देख कम ही पाते हैं.

अभी शाम बाकी थी जब मैंने राजघाट पुल पर गाड़ी रोकी. वाहनों का आवागमन शांत था. सूरज उसके बालों को चूमने के लिए रुका था. "यहां से हमारे शहर को देखिये" मैंने उसके कानों में सरगोशी की. वह जैसे कहीं डूबी हुई थी. एकाएक बच्चों की तरह खुश होकर बोली, "क्षितिज पर आधे चांद सा लटका शहर. बिल्कुल ऐसी ही तस्वीर खींची थी मोहन ने."

वह शाम जो शामे-अवध की तरह सरसराती हुई पास से गुजर रही थी, लख्त धुएं की तरह फिजा में फैल गयी. आहिस्ता-आहिस्ता उतारकर मैं गाड़ी को चंदनशाह के मजार वाले रास्ते पर ले आया. बृहस्पतिवार था. श्रद्धालुओं की भीड़. लोबान और अगरबत्ती की महक से वातावरण बोझिल था.

मेरा चेहरा धुंआ सा था. कैथी अपने ही खयालों में डूबी सी बोली, "मैं चर्च नहीं जाती. पर मुझे वे सब लोग अच्छे लगते हैं जो आस्थावान हैं."

"इतनी अच्छी हिंदी आपने कहां से सीखी?"

"मोहन से."

"मोहन से आपकी शादी हो चुकी है?"

"होने वाली थी."

"फिर उसने धोखा दे दिया."

"मोहन धोखा नहीं दिया करते." वह रोष से बोली.

"तब जरूर उसके सामने कोई मजबूरी रही होगी."

"मजबूरियों की उससे परवाह नहीं की. यही सबसे बुरी बात हुई

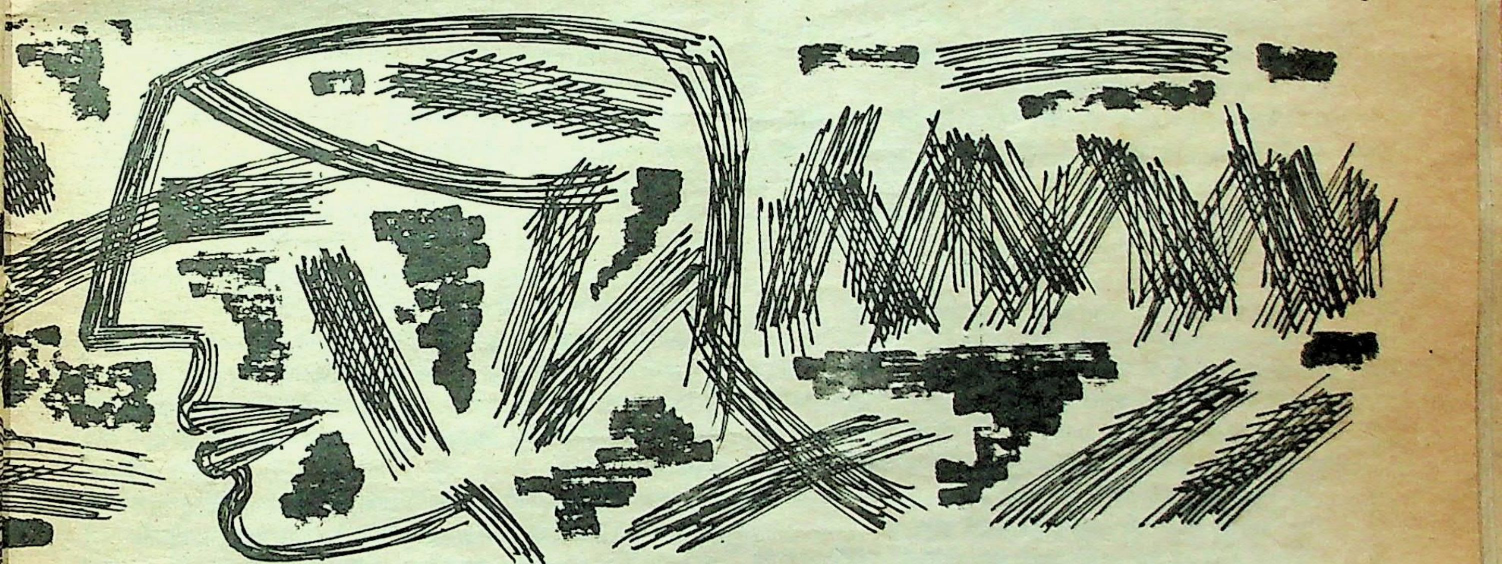

ग्लासगो की सड़कें यूं भी शाम ढले वीरान हो जाया करती हैं. और दंगे कई रोज पहले से ही भड़क उठे थे. वह जानता था. वह फोन पर भी शादी की खुशखबरी दे सकता था. पर उसने मुझसे मिलना जरूरी समझा."

"फिर...??"

"फिर उस काले आदमी की लाश ही सड़क पर से उठायी जा सकी." जिस मोहन को मैं कई दिनों से जबरदस्ती झेल रहा था, वह भाई जैसा लगा. "ये सफेद लोग... इन्होंने हमेशा काले लोगों को कीड़े-मकोड़े की तरह मसला है."

उसने मेरी बात नहीं सुनी. सफेद कपड़ों में लिपटी वह महाश्वेता अपने से ही कहती रही, "उफ! मोहन की मां की वह ठंडी आंखें और फिर उनका मुझे लिपटाकर रो पड़ना! मैं भूल नहीं पाती, न उन आंखों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठंडापन न वह हिचकियां."

वह सुनसान-सा बाई-पास था जहां मैंने गाड़ी रोकी.

"क्या बात है गोपाल?"

"क्या मैं मोहन नहीं बन सकता?"

"गाड़ी चलाओ दोस्त." वह हंसकर बोली.

मैं स्टेयरिंग पर हाथ रखे बैठा रहा, "लाइये अपना पासपोर्ट दीजिए उसे फाड़कर बाहर फेंक दूं." फिर पीछे मुड़कर बोला, "गाड़ी वापस करूं?" मैंने उन आंखों में देखने की कोशिश की पर वह चुंबक जो मुझे इतने दिनों से खींचता आ रहा था छिटककर कहीं दूर जा गिरा था या कि शायद मेरा ही अस्तित्व लोहे के बजाए मिट्टी का हो गया था.

"मैंने सुना था कि हिंदुस्तानी बड़े मेहमाननवाज होते हैं. अच्छा आतिथ्य निभाया आपने!" उसकी आंखों में शिकवा था.

गाड़ी की रफ्तार शायद बहुत तेज थी. कैथी ने हंसते हुए कहा, "इतना गुस्सा अच्छा नहीं होता गोपाल. गुस्सा मांस-पेशियों में खिंचाव पैदा करता है और यह खिंचाव, यह तनाव हमारी जिंदगी के कुछ पल चुरा के चुपके से चल देता है और हमें पता भी नहीं लगता." यह बात वह एक बार पहले भी कह चुकी थी.

"और आप जो मेरी जिंदगी का सब कुछ चुरा के चली जा रही हैं!" मैंने मौन आंखों से पूछा. वह मुस्कराती हुई बाहर देख रही थी.

एयरपोर्ट पर हम अकेले नहीं थे. बहुत से लोग थे. पर अपने में उलझे हुए. हम सोफे पर बैठ गये. कोई 'चीज' उसके बगल में थी. वास्तव में वह 'चीज' नहीं, बच्चा था जिसकी कुनमुनाहट से मैं चौंका था.

"यही मोहन है." वह नन्हा-सा सांवला बच्चा नींद में मग्न मुस्करा रहा था.

"इसकी मां अस्पताल में इसे जन्म देकर छोड़ गयी. मैंने इसे गोद ले लिया. जानते हो, इसके लिए कितनी भाग-दौड़ करनी पड़ी. थका डाला इसने मुझे." और वह प्यार से उस पर झुक गयी.

मोहन ने एक बार फिर मुझे शिकस्त दे दी.

कल राजघाट स्कूल की इमारत से टिकी खड़ी कैथी जैसे श्रद्धावनत हो उठी थी, "क्या खूब थी ये ऐनीबेसेंट भी. सुख सुविधा का जीवन छोड़कर पराये देश में पराये लोगों के बीच अपनों को पहिचाना था उन्होंने." और फिर ऐनीबेसेंट को छोड़कर वह ईसाई मिशनरीज पर लंबा लेक्चर देने लगी तो मुझसे रहा न गया, "उस सेवा भावना के पीछे जो धर्मांधों की स्वार्थ लिप्सा थी...?"

"उसे तुम स्वार्थ कहते हो? याद करो जब बंगाल का चेहरा कोढ़ से दागदार हो उठा था तो अपने नंगे हाथों से उसकी मरहम पट्टी करनेवाले फादर और नन्स, जो बाद में खुद उसी बीमारी में डूब-डूब कर मरे. उनकी निःस्वार्थ सेवा भावना! क्या कहोगे तुम उसे!! तुमने समाज के जिस अंग को सड़ा हुआ कहकर काटकर फेंक दिया, उसे उन्होंने सीने से लगाया. कंपनी के आदि शासन काल से लेकर आज तक कलकत्ता के गली-कूचों में पल पल अपने जीवन को समर्पित करनेवाली मदर और नन्स! अब भी तुम उन्हें स्वार्थी कहोगे??"

वह निर्ममता से मेरे संस्कारों की पर्तें उधेड़ती रही. मैं चुपचाप सहता रहा. जहाज पर से एनाउंसमेंट हो रहा था. कैथी मोहन को संभाले हुए तेज-तेज बढ़ने लगी. मैं उसकी आवाज के भंवर में लिपटा उसके पीछे चलता रहा, "मोहन खालिस पूर्वी दुल्हन चाहता था, शादी ही जिसके लिए पहला तजुर्बा हो. उसकी अमानत मैंने आज भी संभाल रखी है. तुम्हें देखकर लगा था एक पल के लिए कि टूट जाऊंगी. इसलिए नन्हें मोहन का सहारा ले लिया. अब यही मेरी हिफाजत करेगा." फिर आखिरी बार मेरा हाथ अपने हाथों में लेकर बोली थी, "और इस तरह मोहन की मां की आंखों का ठंडापन शायद कुछ पिघल सके."

जहाज रनवे पर दौड़ने लगा– "अलविदा कैथी! टेम्स के किनारे मोहन की उंगली पकड़े जब तुम चलोगी तो सूरज तुम्हारे लिए उगेगा. फिर वह सूरज कभी नहीं डूबेगा. क्योंकि जो जाति अपने हत्यारों का प्रायश्चित करती है, उसका सूरज कभी नहीं डूबता."

धीरे-धीरे जहाज आकाश की असीम नीलाइयों में खो गया.

मैं वापस हो रहा हूं. मेरे दिल के श्मशानों में एक बार फिर नरमुंडों का उत्ताप नर्तन गूंज रहा है. पर उस निविड़ शोर में नीचे बहुत नीचे कहीं शीतल अग्नि का होम हो रहा है.

अलविदा! आखिरी बार अलविदा अनुराधा! तुम मोहनमय ही नहीं सूरजमय भी हो. आज से सूरज को समर्पित सब अंजलिबद्ध प्रार्थनाएं तुम्हारे नाम हुईं. □

पुण्य

सुरेंद्र सुकुमार

इक्का पूरी तरह से भरा हुआ था, पांच-छः औरतें थीं, चार-पांच आदमी, कुछ बच्चे थे. इक्के में एक गेरुए वस्त्रधारी बुजुर्ग साधू भी बैठे थे. खासी धिचपिच थी. ये लोग गंगा जी स्नान करने जा रहे थे. लगभग सभी लोग धार्मिक चर्चा कर रहे थे.

"परोपकार से बड़ा कोई धर्म नहीं है."

"हां भइया, दूसरे की भलाई ही सबसे बड़ा धर्म है."

"इंसान में अगर प्रेम हो तो उससे बड़ा कुछ भी नहीं है. प्रेम ही परमात्मा है. मनुष्य को मनुष्य से ही नहीं सब जीवधारियों से प्रेम करना चाहिए क्यों बाबा है न ठीक बात."

"हां भइया, प्रेम तो है ही बड़ा. कबीर भी कहते हैं....

'ढाई आखर प्रेम के पढ़े सो पंडित हो', पर भइया सब चीजें संयोग से मिलती हैं"

"सही कह रहे हैं बाबाजी आप, अब ये संयोग ही तो है कि हम सब लोग गंगाजी स्नान करने जा रहे हैं और धर्म की बातें कर रहे हैं ये ही तो सत्संग है और आप जैसे साधू-महात्मा हमारे ही साथ चल रहे हैं." एक ने कहा.

"और क्या बाबा ये हमारे पुण्य ही हैं जो गंगा यात्रा में आप जैसे तपस्वी हमारे साथ हैं देखो इक्के में कितनी भीड़ है पर सब जने कितने प्रेम से बैठे हैं. इंसान के दिल में जगह होनी चाहिए." दूसरे ने कहा.

बाबाजी को सब बहुत आदर दे रहे थे. प्रत्येक ज्यादा से ज्यादा पुण्य लूटने के चक्कर में था.

इस समय इक्का शहर में प्रवेश कर गया था. अचानक भगदड़ मच गयी. शहर में दंगा हो गया था दो सम्प्रदायों के बीच इक्के वाले ने घोड़े के चाबुक मारी. घोड़ा बेतहाशा भागा. "बस ये मुहल्ला पार हो जाए फिर कोई फिकिर नहीं.ये मुहल्ला दंगाइयों का है." इक्के वाले ने कहा.

अनायास एक आदमी ने कहा, "बाबा,तुम उतर जाओ.तुम्हारे कपड़ों को देखकर ही सब समझ जाएंगे कि हिंदू बैठे हैं कोई भी इक्के पर बम फेंक देगा. तुम्हारे चक्कर में सब मारे जाएंगे.

इक्के की सवारियों ने भयभीत होकर समर्थन किया.

"ठीक बात है, ठीक बात है"—कई स्वर उभरे.

"देखो,वो भीड़ का रेला आगे है. सब मारे जाएंगे इस बाबा के चक्कर में.उतारो,इसे उतारो."

"भइया थोड़ा रहम करो. अभी तो तुम सब कह रहे थे..."

"चुप. बकवास बंद करो.कूदो, नहीं तो हम धक्का दे देंगे."

इसके साथ ही सवारियां उसे धक्का देने लगीं. वो डंडा पकड़े आधा लटके हुए गिड़गिड़ाता रहा. अंत में सवारियों ने उसके हाथों पर चोट की बाबा लुढ़कता हुआ गिर पड़ा इक्के ने मुहल्ला पार कर लिया.

सवारियों के चेहरे पर निश्चिंतता भरी मुस्कान थी और गंगा स्थान के पुण्य लूटने का उत्साह. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा-दर्शन

सुधीश पचौरी

अंधों के लिए एक प्रार्थना

"द मीडियम इज द मेसेज" (माध्यम ही संदेश है) एक वाक्य नहीं है बल्कि मुहावरा है. विश्व स्तर पर संचार माध्यमों खास कर टी.वी. की प्रकृति को लेकर चली तमाम बहसों में प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से यह सूत्र गूंजता रहा है. हमारे देश में टी. वी. को लेकर कोई मौलिक ऊहापोह बहुत नहीं हुआ फिर भी यदि अखबारों में, सारिका में भी, छपनेवाल पत्रों, प्रतिक्रियाओं और समीक्षाओं को ध्यान से देखें तो हम पाते हैं कि वहां प्रकारांतर से टी. वी. को स्वीकृत करते हुए या उसे अस्वीकृत करते हुए बहस उसके 'संदेश' को लेकर उठती - गिरती रहती है. अक्सर 'संदेश और माध्यम' के बीच एक द्वैत मानकर चला जाता है. नतीजा यह होता है कि दर्शक टी. वी. से वह सब कुछ चाहने लगता है जो एक 'माध्यम' के रूप में वह नहीं दे सकता. प्रायः यह नहीं समझा जाता कि इस माध्यम की अपनी एक निश्चित प्रकृति है और जो इसमें जन्म लेता है, वह भी इस माध्यम की प्रकृति से नियंत्रित होता है. इसे न समझने के भयावह नतीजे निकल सकते हैं. इस द्वैत बुद्धि के चलते टी. वी. प्रायः बावले गांव में ऊंट की तरह चौंकानेवाला बन जाता है. एक संपन्न टी. वी. संस्कृति इसीलिए नहीं पनप पाती क्योंकि हम इस माध्यम की प्रकृति को समझे बिना इसे संशय और संदेह की दृष्टि से देखने लगते हैं. 'माध्यम संदेश है' से प्रसिद्ध सूत्र मार्शल मैक्लूहान का है. कहने की जरूरत नहीं कि यह सूत्र सिर्फ टी. वी. का सूत्र न होकर. हमारी समूची रचनाप्रक्रिया, तकनीकी युग मे कलात्मक रचना की प्रक्रिया, संप्रेषण प्रक्रिया, को अविभाज्य रूप में समझनेवाला और उसी संदर्भ में उसकी एक रचनात्मक व्याख्या करने वाला भी है.

मैक्लूहान का कहना है कि कोई भी तकनीक धीरे-धीरे एक नया मानवीय वातावरण बनाती है. ये वातावरण निष्क्रिय तंबू नहीं होते बल्कि सक्रिय प्रक्रिया में होते हैं. 'माध्यम ही संदेश है' कहने का अर्थ यही है कि इलैक्ट्रोनिक युग में एक सर्वदा नया वातावरण बन चुका है. इस नये वातावरण की मूल अंतर्वस्तु औद्योगिक युग का मशीनी 'वातावरण' है. हर नया वातावरण पुराने को पुनः प्रक्रिया में तेजी से बदल देता है. जैसे कि आज टी. वी. फिल्मों को बदले दे रहा है. वस्तुतः टी. वी. की मूल अंतर्वस्तु फिल्म ही है. टी. वी. वातावरण मूलक है और अदृश्य है जैसा कि सब 'वातावरण' होते हैं. हमारी दिक्कत यह है कि हम सिर्फ 'अंतर्वस्तु' यानी पुराने वातावरण से ही परिचित हैं. जब मशीनी उत्पादन नया-नया आया था तब धीरे-धीरे उसने एक नया वातावरण बनाया जिसकी अंतर्वस्तु कृषि जीवन का वातावरण, कला और शिल्प था. यह पुरानी अंतर्वस्तु नये मशीनी वातावरण द्वारा एक नवीन कलारूप में ढाली गयी थी. मशीन ने प्रकृति को एक नये कलारूप में बदल दिया था.

समूचे इतिहास को इस तरह तकनीक और मनुष्य की अंतर्क्रिया के इतिहास में बदलकर मैक्लूहान ने यद्यपि इतिहास की एक नयी व्यवस्था दी है जो इतिहास की अन्य व्याख्याओं को नजरंदाज करती हैं किंतु इस बहाने उन्होंने तकनीकी युग की रचनाप्रक्रिया को नये अर्थों में अवश्य समझा है. मैक्लूहान का मानना है कि कम से कम कला के इतिहास को उसकी तकनीक के इतिहास से कम करके देखना संभव नहीं है. मैक्लूहान के अनेक महत्वपूर्ण सूत्र 'अंडरस्टैंडिंग मीडिया' (1964) में बिखरे पड़े हैं. जो 'माध्यम और संदेश' के अंतर्संबंध को समझने में मददगार हैं.

मैक्लूहान का खास जोर तकनीक के वातावरण पर है. उनकी दृढ़ धारणा है कि हर तकनीक अपने लिए जो वातावरण गढ़ती है वह पुराने द्वारा भ्रष्ट और घटिया समझा जाता है. फिर भी नया पुराने को कलारूप में बदल ही देता है. जब 'लेखन' नया था तो प्लेटो ने उसका सहारा लेकर पुराने वाचिक संवाद को कलारूप में बदला. जब छापाखाना आया तो उसने मध्यकाल को कला रूप में बदला. आखिर औद्योगिक युग ने पुनर्जागरण को मूलतः एक कलारूप में बदला ही.

मैक्लूहान यहीं से कला और तकनीक का रिश्ता नये रूप में व्याख्यायित करते हैं. आधुनिक युग में सतत वर्धमान तकनीकें अपने नये नये वातावरण गढ़ती रहती हैं. ऐसे में 'कला' प्रायः एक 'प्रति वातावरण' के रूप में देखी जाने लगती है. और हम उसके जरिए से 'नये वातावरण' को देखने लगते हैं. स्थिति यह हो जाती है कि तकनीक स्वयं कला रूपों का कार्य करने लगती है. ऐसे में 'प्रति वातावरण' के रूप में काम करने वाली 'कला' (पुराना वातावरण) स्वयं हमारे बोध एवं निर्णयों को ट्रेनिंग देने लगती है.माध्यमों के अध्ययन के जरिए हम इस नये वातावरण और 'पुराने वातावरण' की अनिवार्य अंतक्रिया को बेहतर समझ सकते हैं. इस अर्थ में माध्यम का अध्ययन हमें उसे समझने का बोध देता है. माध्यमों के प्रभावों का अध्ययन शोधों और नवीन उद्भावनाओं के द्वार खोल देता है.

मैक्लूहान की यह महत्वपूर्ण मान्यता आज सर्वस्वीकृति पा चुकी है कि संपूर्णता, व्यापकता और गहराई के प्रति सजगता विद्युत तकनीकी युग की स्वाभाविक मांग है.

माध्यम अगर संदेश है तो वह किस तरह प्रक्रिया करता है, इस बात का खुलासा करते हुए मैक्लूहान 'बिजली' का उदाहरण देकर समझाता है. उसके अनुसार 'विद्युत' का प्रकाश शुद्ध सूचना है. यदि वह किसी अक्षर को प्रकाशित नहीं करती तो वह संदेश के बिना माध्यम है. यही स्थिति सभी माध्यमों के साथ होती है. दरअसल, किसी भी माध्यम की अंतर्वस्तु हमेशा दूसरा माध्यम होता है मसलन लिखने की अंतर्वस्तु 'वाणी' है.ठीक ऐसे ही लिखित शब्द 'छापे' की अंतर्वस्तु है.

बहरहाल किसी भी माध्यम का संदेश वह प्रक्रिया है जो अपनी उपस्थिति से मनुष्यों के जीवन के नमूनों, गतियों या स्तरों को बदलती है. रेलवे ने पहिये की या भाप की ईजाद नहीं की थी बल्कि उसने अपनी उपस्थिति से मुनष्यों के जीवन में एक नयी गति, नये स्तर और नये रूप पैदा कर दिये. यह सभी जगह हुआ जहां जहां रेल गयी. हम फिर बिजली की बात पर लौटें. एक अंधेरी जगह में बिजली के आने पर, हमें अंधेरे में दफन बहुत-सी चीजों का पता चलता है. वे चीजें वस्तुतः बिजली के बिना 'गैर मौजूद' ही कही जायेंगी. वे तमाम चीजें बिजली की अंतर्वस्तु ही कही जा सकती हैं. यही 'माध्यम और संदेश का आंतरिक संबंध है. अंधेरे में दफन से हमारा संबंध शायद अंधेरे में भी रहा हो, मगर वह संबंध कैसा है, यह बिजली की उपस्थिति ने तय किया. यह बहुत मामूली अनुभव है. वह बताता है कि माध्यम ही जगत के साथ हमारे संबंध व प्रकार्य के स्तर एवं रूप को नियंत्रित करते हैं. यह संबंध इतना संघनित होता है कि किसी माध्यम की अंतर्वस्तु प्रायः हमें माध्यम के चरित्र के प्रति अंधा बना देती है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी पौद

आप अच्छा साहित्य पढ़ते हैं और स्वयं लेखक बनना चाहते हैं... पर कहीं कुछ ऐसा अवरोध आ जाता है कि आप लिख नहीं पाते. इस स्तंभ के अंतर्गत ऐसे अनुभव प्रकाशित किये जायेंगे जो 'नयी पौद' की दिक्कतों को सामने रखें. आप क्या और क्यों लिखना चाहते हैं... स्पष्ट करते हुए अपनी कठिनाइयां चित्र सहित 300 शब्दों में लिख भेजिए. लिफाफे पर यह कूपन चिपकाना न भूलें.

'नयी पौद' स्तंभ
सारिका
10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

विश्वास ही आधार है

□ गोपाल चंद्र पांडेय,

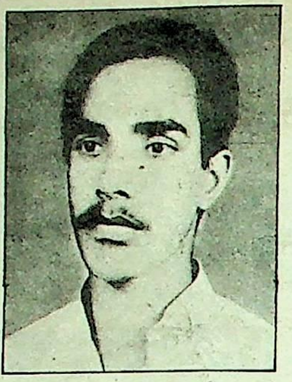

किन परिस्थितियों में साहित्य से परिचित हो गया, कह नहीं सकता पर परिचय के प्रारंभिक दिनों में ही हार्दिक आत्मीयता का एक संदेश प्राप्त हुआ था—''साहित्य आत्मा का परिष्कारक तत्व है...'' और बहुत अंदर तक छू गये थे ये शब्द... एक संबल और आदर्श बनकर एकांतिक स्वभाव में पाठ्यपुस्तकों के साथ जीवन को भी पढ़ने के लिए प्रेरित किया लेखों, कहानियों, कविताओं, साक्षात्कारों ने. फिर शुरू हुआ पुस्तकों का संग्रह.

जीवन की इस लघुयात्रा में मधुर स्मृतियों के मध्य ही अनेक कटु सत्य भी सामने आये हैं. भावना की भूमि पर बहुत अकेला हूं.... यदि कुछ निकट पाता हूं तो वह है साहित्य जिसमें जीवन स्पंदित होता है. बहुत कुछ पढ़ जाने के उपरांत सृजन के क्षेत्र में उतरा. कहानी विधा ही अभिव्यक्ति का माध्यम बनी... और स्वांतः सुखाय की परिधि में ही समस्त क्रिया-प्रतिक्रिया संपादित हो रही है इसका मुझे पूर्ण आभास है. हृदय की सुषुप्त भावनाओं को साकार रूप दे देना एक विशिष्ट उपलब्धि है और अपनी इस उपलब्धि पर जब एक दृष्टि डालता हूं तो लगता है उपलब्धि उस श्रेणी की नहीं जो मेरा प्रयासगत लक्ष्य है.... मेरे अवमूल्यन के पीछे परिवेश की वह ग्रंथि है जो इस बात की अनुमति नहीं देती कि उस दिशा में कुछ पहल की जाये जो सामान्य न हो... पर इतना स्थूल हो जाना कि किसी से प्रेरित ही न हो या भावनाशून्य की स्थिति में पहुंच जाना मेरे लिए कठिन ही नहीं असंभव भी है. भावना प्रधान व्यक्ति का यथार्थ की नींव पर खड़ा होना उसकी भावुकता का ही एक अंश है, यदि भावना-विहीन होकर मैं जी नहीं सकता तो यथार्थ की उपेक्षा कर मैं अपने जीने के मकसद को पूरा नहीं कर सकता. इन दोनों बिंदुओं के मध्य ही चल रहा हूं पूरी शक्ति, आस्था, समर्पण और विश्वास के साथ.

प्रथम उड़ान में ही अपेक्षित ऊंचाई तक न उड़ पाना आने वाले अवसरों पर अधिक क्रियाशील होने का संदेश देती है और यहीं आवश्यकता होती है प्रोत्साहन की, प्रेरणा की और उत्साह भरे दो शब्दों की.

लेखन की बुभुक्षा

□ महेंद्र सिंह

भावों को अभिव्यक्ति देना अच्छा लगता है. परंतु अभिव्यक्ति के लिए शब्द नहीं मिलते हैं, तब कितनी छटपटाहट होती है, एक लेखक ही समझ सकता है.

आज आदमी-आदमी के बीच तकलीफें हैं, पीड़ाएं हैं, संघर्ष है. पुरानी व्यवस्था द्वारा खड़ा किया गया चक्रव्यूह, विनाश, विघटन और पतनशीलता जीवन-जीने की विवशता, असंगति, इस सब के विरुद्ध जो कुछ भी लिखा, छोटे-बड़े रूप में, वह अपने अल्प अध्ययन, मनन और आत्म संशय के कारण या तो फाड़ दिया या फिर रद्दीवाले को बेच दिया.

लेकिन अब... अब ऐसा लगता है, जैसे मैं कुछ कहना चाहता हूं, लिखना चाहता हूं, सामयिक संदर्भों से जुड़ी कहानी, लेख, कविता, जो सामान्य आदमी के जीवन और संघर्ष से संबंध रखती हो. सच, लेखन द्वारा सत्य को शब्द रूप देना चाहता हूं. रह नहीं सकता, जब तक लिख नहीं लेता. मन करता है लिखूं... और लिखूं...खूब लिखूं. □

पापा का कथन

□ राजिता निरंजन

आज तक मैंने आसपास जो भी देखा और अनुभूत किया वह मुझे बहुत बड़ा और अधिक लगा. मुझे कभी-कभी घबराहट-सी होने लगती है. जीवन की लंबी यात्रा में जाने कितना कुछ देखना, झेलना और चुपचाप स्वीकार करते चलना है. कितना कठिन और पीड़ादायक होगा... जीवन एक कैद बन जायेगा. इसलिए कुछ ऐसा करना चाहती हूं जिससे असहजता और जटिलता में भी मन नहीं घबराये. जीवन मकड़ी के जाले में फसने नहीं पाए.

मन की पीड़ा, घटन, अव्यक्त क्रोध, चिढ़, विद्रोह और बेचैनी मुझे बार-बार लिखने को प्रेरित करती है. कुछ ऐसा लिखूं जिससे लोगों की बंद आंखें खुल जायें. परिस्थितियां इंसान को इंसान नहीं रहने देतीं. इस अव्यक्त सत्य को लिखना चाहती हूं. आत्मा में ध्वनित होते प्रेम प्रवाह के प्रति लोग उदासीन और निष्ठुर हो जाते हैं. आक्रोश से भरा मन इसी विद्रोह को लेखनी से प्रकट करना चाहता है. किंतु अनुभवहीनता और अक्षमता आड़े आ जाती है.

अपने पापा के इस कथन से आश्वस्त होती हूं— ''तुम पहले खूब पढ़ो. अपने व्यक्तित्व में विश्व की, विविधताओं को आत्मसात करो फिर तुम्हारी अभिव्यक्ति का मार्ग स्पष्ट और सरल हो जायेगा.''

भविष्य में मैं कोई महान लेखिका बन जाऊं ऐसी मेरी आकांक्षा नहीं पर मैं दुनिया के असली रूप को दिखा सकूं ऐसी चेष्टा जरूर होगी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा पहेली : अप्रैल, 1988 के सर्वशुद्ध हल तथा पुरस्कार विजेता.

अप्रैल, 1988 की कथा पहेली के हजारों प्रतियोगियों में से केवल दो प्रतियोगी ही दो-दो अशुद्धियों के साथ पुरस्कार विजेता बनने का गौरव पा सके हैं. पुरस्कार राशि इन प्रतियोगियों में बराबर- बराबर बांट दी जायेगी.

पुरस्कार विजेताओं के नाम व पते इस प्रकार हैं :–

1. प्रबोध दवे
100, एच.आई.जी. (जूनि.)
विजय नगर, इंदौर (म.प्र.)

2. सतीश राठी
212, उषानगर,
इंदौर (मध्यप्रदेश).

और यह रहा कथा-पहेली का सर्वशुद्ध हल

1. कालिदास के यक्ष का विछोह याक्षिणी से था जबकि सूर्यबाला के यक्ष की आत्मा ही गायब हो गयी है. यहां विछोह आत्मा का है.
2. 'हां में हां'.
3. अंक का सर्वश्रेष्ठ कार्टून पृष्ठ 59 पर छपा है. कार्टूनिस्ट हैं—देवेंद्र.
4. आचार्य रामचंद्र शुक्ल और महादेवी वर्मा.
5. नाथद्वारे की सिर चढ़ी राधा, मिथ्या निंदक, सूखे खेत लहलहाते चिंतन, कुत्ता कथा.
6. व्यंग्यकार शरद जोशी का अतिथि संपादन.
7. कला का पारखी.
8. अड़तीस बार.
9. चार रचनाएं.
10. गोपाल चतुर्वेदी.

प्रतियोगियों के लिए विशेष

दूर-दराज के जिन इलाकों में पाठकों तक सारिका देर से पहुंचती है वे 'सारिका कथा पहेली' में अपनी पूर्तियां 20 तारीख के बाद भी भेज सकते हैं. पूर्तियां भेजते समय यह उल्लेख अवश्य होना चाहिए कि 'सारिका' आप तक देर से पहुंची.

सारिका कथा पहेली

कहानियां गौर से पढ़िये और 200 रुपये के पुरस्कार जीतिए

नये स्तंभ 'सारिका कथा-पहेली' में भाग लेने के लिए आप सभी आमंत्रित हैं. प्रतियोगियों को 'सारिका' के इसी पृष्ठ पर पूर्तियां भेजनी होंगी. पूर्तियां सादे कागज पर न भेजें. इस कथा-पहेली के सभी प्रश्न 'सारिका' मई 1988 अंक पर आधारित हैं. कार्यालय में डाक द्वारा हल प्राप्त होने की अंतिम तिथि 20 जून 1988 है. पुरस्कार विजेताओं के नामों की घोषणा अगस्त 1988 के अंक में की जायेगी.

सारिका कथा पहेली, जून, 1988

1. चालाकी का जवाब चालाकी से दिया जाना हो तो इस अंक की.................... शीर्षक रचना याद आयेगी.
2. लेखन को ईश्वरीय देन न मानने वाले....................................हैं.
3. यह पात्र जिन रचनाओं के हैं, उनके नाम कोष्ठक में लिखें.
पैट (.................), मिस रस्तोंगी (.................), मंजरी (................), सुकुल बाबा (..................).
4. ''उनकी उम्र उतनी होनी चाहिए जितनी इस संस्कृति की है.''
यह टिप्पणी...................ने..................के संदर्भ में की है.
5. इस अंक के यह पृष्ठ ले-आउट की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ हैं.......................
6. अपनी शारीरिक सामर्थ्य से बाहर की बात................रचना में...............ने की है.
7. ''सारी दुनिया को सुधारने की अपेक्षा खुद को सुधार लेना सुखी होने का मार्ग है.''
यह उपदेश-रहस्य...............का है.
8. वैभव मिट चुकने पर भी जिसकी प्रथा का दीपक आज भी टिमटिमा रहा है, वह स्थान है—.......................
9. यदि आचार्य द्विवेदी ने 'पुनर्नवा' के अलावा कोई उपन्यास लिखा ही नहीं तो आलोचक उनकी अन्य कथा-कृतियों को किस श्रेणी में रखना चाहता है?
....
10. ''नायक अपने जीवन के महत्वपूर्ण मोड़ पर आकर पहले तो कुरीतियों को तोड़ना चाहता है पर बाद में उसे अपना आदर्शवादी विचार छोड़ना पड़ता है.'' यह टिप्पणी ....शीर्षक रचना पर सही प्रतीत होती है

नाम.......................................आयु...........................

पता ....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक लेखक का घर

हिंदी साहित्य की लगभग सभी विधाओं में सक्रिय प्रख्यात कथाकार गोविंद मिश्र की सर्वविधा पुस्तक का नाम है 'मुझे घर ले चलो'. इस पुस्तक में उनका एक संपूर्ण उपन्यास 'वह अपना चेहरा' के अतिरिक्त 'लाल-पीली जमीन' तथा 'हुजूर दरबार' के अंश, 'धांसू', 'जन-तंत्र', 'मुझे घर ले चलो,' 'खाक इतिहास' आदि सात चर्चित कहानियां, एक कथा-नाटक, राजनीति, इतिहास, लेखन की सामाजिक भूमिका तथा समकालीन कथा-साहित्य पर निबंध, देश-विदेश के यात्रा-चित्र, आत्मकथात्मक वक्तव्य, रचना-प्रक्रिया, कविता, डायरी-अंश, संस्मरण तथा पत्र... संकलित हैं. स्पष्ट है कि इन सब विधाओं के छोटे-छोटे टापुओं से एक लेखक का अपना पूरा द्वीप बखूबी देखा जा सकता है. एक लेखक की पूरी रचनात्मकता को जान-समझ लेने के लिए ऐसी पुस्तक की पाठक के संदर्भ में तो उपयोगिता होती ही है, लेखक के लिए भी यह एक प्रकार का 'एक्शन-रिप्ले' जैसे होता है जिसमें उसे स्वय की प्रत्येक 'मुद्रा' को सूक्ष्मता से विश्लेषित करने का अवसर प्राप्त होता है. संभवतः इसी आत्म-निरीक्षण के जरिये, एक सच्चे सर्जक की भूमिका का निर्वाह करते हुए वे लिखते हैं : 'बड़ा लेखन प्रभु की तरह झलक दिखा-दिखाकर चला जाता है, मिलता नहीं. उसे पाने की छटपटाहट ही है जो मेरी है. सोचता हूं, बड़ा लेखन न सही, यह छटपटाहट ही बनी रहे, मेरे पूरे जीवन को निरंतर मथती रहे...'

पूरी पुस्तक पढ़ जाने के बाद लेखक की यह छटपटाहट निःसंदेह सिद्ध भी होती है और परिणामस्वरूप रचनाकार के वैयक्तिक और सर्जक—दोनों के बीच खड़ी तथाकथित रहस्यमय दीवार भी एक हद तक ढहती दिखायी पड़ती है. एक गैरसिलसिलेवार आत्मकथा का-सा सुख देती यह पुस्तक लेखक की संपूर्ण मानसिकता, जिजीविषा, दर्शन, आध्यात्मिक-दृष्टि और समकालीन जीवन के धड़कते, संवेदनशील हृदय को शब्दों में उतारती रचनाओं का एक बेहतर कोश सिद्ध करती है. पहचान का संकट, अनचाही संस्कृतियों की बढ़ती महामारी और संवेदन-शून्यता को जनती तथाकथित बौद्धिक व्यवस्था के विरुद्ध यह लेखन एक उदाहरण की तरह पेश किया जा सकता है. समकालीन जीवन में घुस आयीं छोटी-छोटी मक्कारियों के, विरुद्ध तो लेखक ने लिखा ही है (संदर्भ : 'फांस' और 'आदमियत' कहानी के छोटे मक्कार), साथ ही अवसरवादी बौद्धिकों के लिए 'बौद्धिक और नेता' निबंध के माध्यम से यह भी बताया गया है : "यही अजीब लगता है कि मंत्रीगण बौद्धिकों का मार्गदर्शन करें— पर शायद पूरे समाज के मार्गदर्शन की ठेकेदारी नेता ने ही ले रखी है और समाज में बौद्धिक भी तो आता है. कुछ घपला भी जरूर हुआ है वरना नेता भी यह जानते हैं कि बौद्धिक वह पुराना सिरफिरा है जो एक जमाने में ऋषि होता था, जो जब तब आकर राजा को खरी-खोटी सुनाकर चला जाता था. उसकी नैतिक शक्ति थी, सब कुछ त्यागकर जंगल में रहने, तपस्या करने से पैदा हुई शक्ति. आज भी ऐसे सिरफिरे हैं पर यह वर्ग इतना अल्पसंख्यक है कि नेता उसकी उपेक्षा आसानी से कर लेता है. लगातार उपेक्षा से उसे क्रमशः और भी अल्पसंख्यक बनाया जा सकता है. यह क्रम चालू भी है."

इस प्रकार संपर्क में आये लगभग प्रत्येक वर्ग के सच-दर-सच को लेखक ने अपनी लेखनी से रवैया है- वह इतिहास हो या आदिवासी सभ्यता में व्यावसायिकता का चुभ चला नश्तर! लेखक चूंकि जिज्ञासु है इसलिए वह 'संध्यानाद' का भी कुशल चितेरा है और केशव के रूप में लुका-लुकव्वल का खेल भी उसे कंठस्थ है. इस वृहद्ता का कारण लेखक के इस वक्तव्य से भी खोजा जा सकता है: "दिमाग का सीखा हुआ एक सीमा पर पहुंचकर हमारा साथ देना बंद कर देता है, पर जो सीखना हृदय के फैलने पर हुआ था, वह आखिर तक साथ देता है."

प्रसंगतः गोविंद मिश्र के लेखन-स्वभाव पर यहां दो बातें की जा सकती हैं. पिछले लगभग बीस वर्षों के लेखन में उन्हें हिंदी उपन्यासकार के रूप में अधिक जाना-पहचाना गया है. यह भी सच है कि अपने समकालीनों के बीच उनका लेखन अपेक्षाकृत अधिक गतिमय रहा है. 'वह अपना चेहरा' 'उतरती हुई धूप', 'लाल-पीली जमीन', 'हुजूर दरबार' तथा 'तुम्हारी रोशनी में'— एक गतिमय उपन्यासकार के रूप में उनकी पहचान अंकित करने में सक्षम हैं. पिछले वर्षों की साहित्यिक चर्चाएं इस बात की गवाह हैं कि कथ्य, परिवेश और भाषा के स्तर पर इन उपन्यासों ने अपनी व्यक्तिगत पहचान भी कायम की है. लेकिन इन रचनाओं का 'ठप्पा' लेखक को इतना अधिक 'अपना' है कि किसी परंपरा विशेष का वह लेखक नहीं लगता. एक सघन निजी पहचान थामे इस

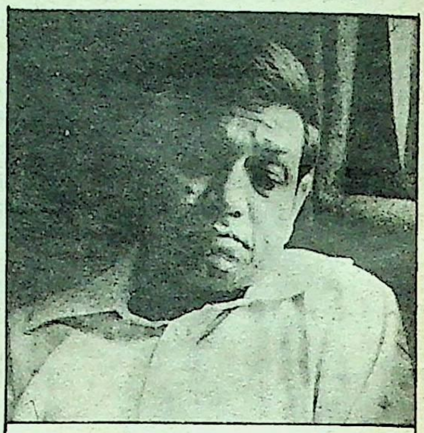

गोविंद मिश्र

लेखन ने एक ओर जहां लेखन की आसान ग्राह्यता को बाधा पहुचायी, वहीं साहित्य के नये पाठक के लिए और साहित्यिक-हलके में लगभग एक अपरिचित-वर्ग—अफसरशाही—को सफलतापूर्वक प्रक्षेपित भी किया है. 'वह अपना चेहरा' तथा छितराव रूप में 'तुम्हारी रोशनी में' उपन्यासों को इस प्रसंग में पढ़ा जा सकता है. भाषा तथा परिवेश— दोनों की घनिष्ठता को लेखक बहुत लुभावने ढंग से इस्तेमाल करता है. 'मुझे घर ले चलो' में संकलित निबंध, डायरी या यात्रा-संस्मरण पढ़ने के बाद यह बात स्पष्ट हो जाती है कि विषयों की गंभीरता के बावजूद लेखक भाषा को जटिल होने से बचाये रखता है. मगर कभी-कभी यह अवश्य होता है कि आत्मालाप की भाषा को अपने तुर्श लहजे के कारण कई बार अनावश्यक भाषाई-उन्माद से लेखक नहीं बचा पाता है (संदर्भ : 'धांसू' या 'जन-तंत्र' की भाषा). साथ ही एक बात यह भी पकड़ में आती है कि गोविंद मिश्र जब मानवता को सजा-संवार रहे होते हैं तो तब उनकी भाषा अपेक्षाकृत अधिक गुनगुनी, स्वादिष्ट और पाठक को 'पकड़कर बैठ जाने वाली' होती है. प्रतिनायक-चित्रण के समय वे भाषा की तपिश को तो बरकरार रखते हैं मगर फिर भी अपनी प्रतिभा का शीर्ष वे नहीं प्रस्तुत कर पाते. कहने का मतलब यह है कि यदि गोविंद मिश्र 'ऑथेलो' लिखें तो उसमें 'इयागो' को वे चरित्र की 'संपूर्णता' संभवतः नहीं सौंप पायेंगे. हो सकता है कि यह उनके मन की एक सीमा भी हो.

घुमक्कड़ तो नहीं, मगर एक यात्राकार के रूप में भी गोविंद मिश्र के नाम की चर्चा रहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है. 'धुंध भरी सुर्खी' तथा 'दरख्तों के पार... शाम' किताबों के अतिरिक्त उनके छिटपुट यात्रा वर्णन भी पढ़ने को मिलते रहे हैं. इस पुस्तक में संकलित यात्रा निबंधों की यह बात विशेषतया रेखांकित की जा सकती है कि यात्रा के वक्त उनकी निगाहों के मध्य एक ऐसा निश्छल पौधा लहराता रहता है जो विलासितापूर्ण संस्कृति की अर्थहीनता को नकार कर 'मनुष्यता! तुम लौट आओ'– जैसा कोई आधारभूत गीत गुनगुनाता रहता है. मगर इन यात्रा-कथाओं में लेखकीय टिप्पणियों का बोलबाला भी हमें पढ़ने को मिलता है. विधा की सीमाओं से भी अधिक लेखकीय सीमाएं. यात्रा की 'अमीरी' और घुमक्कड़ी की 'गरीबी' से भरे पड़े हैं ये यात्रा-निबंध. यात्राकार के आकस्मिक जोखिमों से/कटकर लिखा गया यात्रा वर्णन पाठक के लिए सूचनात्मक लेखन अधिक होता है. जहां गोविंदजी की 'घुमक्कड़ी' उभरी है वहां बेहतर सर्जना भी दिखायी पड़ती है. इस संदर्भ में 'कालापानी' एक बेहतर यात्रा-वर्णन सिद्ध होता है.

एक सीमा तक पढ़ते जाने के बाद लेखक की रचनाओं को उनके सर्वांग कोणों से समझने के लिए उसके 'व्यक्तिगत' को जान लेना अनिवार्य नहीं तो आवश्यक तो हो ही जाता है. उसके व्यक्ति की यातना, महत्वपूर्ण जीवन-घटनाएं, प्रेम-संबंध तथा विभिन्न संघर्षों का उपलब्ध होना इस दिशा और दशा के लिए आवश्यक है. इस पुस्तक में संकलित डायरी, पत्र तथा रचना-प्रक्रिया पर आत्मपरक लेखों के माध्यम से गोविंद मिश्र ने स्वयं की गणना के लिए भी मानो सामग्री उपलब्ध करायी है. हिंदी के आत्मकथात्मक लेखक में जिस तरह के जीवन का प्रायः सजा-संवरा और इकतरफा रूप मिलता है, उससे थोड़ा आगे जाकर, शालीन तरीके से वे अपने कुछ पक्षों का परिचय देते हैं. व्यक्तिगत नंगई को लोकप्रियता का सुलभ फार्मूला उन्होंने नहीं बनाया हैं.

गोविंद मिश्र के अब तक के कुल जमा लेखन का प्राइम है यह पुस्तक जिसे एक लेखक की विस्तृत आत्मघोषणा भी कहा जा सकता है. यद्यपि भूमिका में उन्होंने इस पुस्तक का कारण "अपने पाठकों के सामने समग्र रूप से प्रस्तुत हो जाना" बताया है लेकिन हो सकता है कि उनके अचेतन में यह पुस्तक एक 'जंक्शन' का-सा प्रभाव बनाये, जिस के बाद यात्रा की नयी-नयी दिशाएं जुड़ती-छूटती हैं. दोहराव उनके यहां नहीं है. इसलिए स्पष्ट है कि उनका आगामी लेखन अपनी सोच का ही उनका अलग सफरनामा होगा. विश्वास किया जाना चाहिए कि उनके आगत लेखन में जीवन के विभिन्न शाश्वत मूल्यों के बरक्स भले ही एकदम मौलिक उद्घाटित न हो, मगर एक सहज-मानवता के विकास को वे अवश्य लिपिबद्ध करेंगे. इस पुस्तक में लगातार उपस्थित उनकी लेखन-आस्था के बल पर ही यह विश्वास अर्जित किया जा सकता है. □

'राजकुमार गौतम

'मुझे घर ले चलो' (सर्वविधासंकलन)
लेखक– गोविंद मिश्र, प्रकाशक– पराग प्रकाशन, 3-114, कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-32:
मूल्य : एक सौ रुपये.

हम होंगे कामयाब

लेखन के इस युग में जब रचनाएं आकर्षक छपाई और दर्शनीय आवरण के सहारे मात्र ड्राइंग रूप में सजावट के तौर पर इस्तेमाल की जानेवाली वस्तु बनती जा रही है, आज भी कुछ ऐसे लेखक हैं जो पाठकों से जुड़ने के प्रयत्न में सफल हैं.

'तीन लघु उपन्यास' **वीरेंद्र जैन के 'उनके हिस्से का विश्वास'** संग्रह में संकलित पढ़कर ऐसी ही अनुभूति होती हैं. **'उसके हिस्से का विश्वास'**, **'व्यथा-कथा'** और **'प्रतिदान'** तीनों लघु उपन्यास संस्मरणात्मक पुट लिये होने के बावजूद संपूर्ण परिवेश को लिये हुए हैं.

आज भी हम जिस सामाजिक संकीर्णता की मनोदशा में जी रहे हैं, उसमें अंतरजातीय प्रेमविवाह, प्रगतिशील ही नहीं क्रांतिकारी कदम के रूप में माना जाता है. चूंकि ऐसे संबंधों में दोनों पक्षों से ही नये जोड़े को दुत्कार मिलती है, इसलिए उदारवादी दृष्टिकोण रखने वाले लोग ऐसे जोड़े को हर संभव सहायता देने के लिए तत्पर रहते हैं.

लेकिन जब उन्हें यह पता चलता है कि लड़का केवल प्रगतिशीलता का मुखौटा लगाये हुए हैं, और उसका यह क्रांतिकारी कदम केवल लड़की का दोहन करना था और साथ साथ वह उसके उदारवादी दृष्टि कोण का गलत फायदा उठा रहा है, तब उसका विश्वास सुधारवादी कदमों से न उठकर, उस लड़के पर से हटता है. **'उसके हिस्से का विश्वास'** ऐसे ही पात्र को लेकर लिखा गया उपन्यास है.

'व्यथाकथा' उपन्यास में वीरेंद्र जैन उन समस्त परिस्थितियों की सफलतापूर्वक विवेचना करते नजर आते हैं, जिनमें रहकर किसी प्रकार लड़कियों को वेश्यावृत्ति का धंधा अपनाने के लिए विवश कर दिया जाता है. अपना जीवन अपनी इच्छा के अनुसार यहां की नारियां जी सकती हैं? इस प्रश्न को उठाकर वीरेंद्र जैन नाकारात्मक उत्तर देते हुए भी सकारात्मक रहो नाकारात्मक उत्तर देते हुए भी सकारात्मक हो जाते हैं. यहां भी प्रेम विवाह है. लेकिन यह एक सुखी जिंदगी जीने के लिए है. इनका सुखी जीवन नष्ट करने की पहल लड़की का भाई ही करता है. क्योंकि वह भाई भी उसी व्यवस्था का अंग है, जो अपनी उपेक्षा नहीं सह सकती है.

इस संग्रह का तीसरा उपन्यास **'प्रतिदान'** भी सामाजिक-पारिवारिक और आर्थिक प्रश्नों के घेरे में पाठक को ला खड़ा करता है. यहां भी मान्यताओं को तोड़ने की कोशिश है. नरेन परिवार की सहमति से विवाह जरूर करता है लेकिन अपने आदर्शों पर अडिग रहते हुए. सादगी भरा बिना दहेज का विवाह. उसके इस कदम से उसके माता-पिता और भाई आधारित तो होते ही हैं. वधू पक्ष के लोग भी कम स्तंभित नहीं रहते, स्वयं वधू भी शायद. आर्थिक विपन्नता से भाई के विवाह के सहारे निकलने की आशा टूटने पर वह अपनी निरंतर स्नेह देती भाभी से घृणा करने लगता है.

वीरेंद्र जैन के इन तीनों लघु उपन्यासों की सबसे बड़ी खूबी यह है कि व्यवस्था द्वारा बार-बार कुचले जाने के बावजूद भविष्य के प्रति उनके घावों की आशा नहीं टूटती. **'हम होंगे कामयाब एक दिन'** को अपने लेखन में चरितार्थ करते हुए कथाकार वीरेंद्र जैन की रचनाएं पठनीयता और मानवीय संवेदना के स्तर को बनाये रखती हैं. □

-राजेश कालिया

उनके हिस्से का विश्वास (लघु उपन्यासत्रयी) : **लेखक वीरेंद्र जैन, प्रकाशक : प्रवीण प्रकाशन, महरौली, नयी दिल्ली-30, मूल्य : 35 रुपये.**

लघु विज्ञापन

हिन्दी में पत्राचार द्वारा गृह सज्जा सीखिए

इन्टीरियर डेकोरेशन

(सर्टिफिकेट एवं हॉबी कोर्स)

- गृहसज्जा का तकनीकी ज्ञान प्राप्त करें
- सुविधानुसार घर बैठे खाली समय में अध्ययन करें
- आसान भाषा में विशेषज्ञों द्वारा तैयार पाठ्यक्रम
- महंगी पुस्तकें खरीदने की जरूरत नहीं
- कोर्स फीस का आसान किश्तों में भुगतान
- कोई तकनीकी न्यूनतम योग्यता आवश्यक नहीं

विवरण के लिए जवाबी लिफाफा भेजें –

AID एकैडमी ऑफ इन्टीरियर डेकोरेशन
10A/14 शक्ति नगर, दिल्ली-110007.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापुरुषों का स्मरण

बाण भट्ट की 'आत्मकथा', 'चारु चंद्रलेख', 'अनामदास का पोथा' और 'पुनर्नवा' सरीखी कथाकृतियों, ललित निबंधों व अपने विपुल आलोचना-साहित्य के सर्जक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भारतीय साहित्य जगत के स्मरणीय महापुरुषों में एक हैं. इधर प्रकाशित पुस्तक 'महापुरुषों का स्मरण' इस दृष्टि से और भी उल्लेखनीय है कि वह एक महापुरुष द्वारा अन्य महापुरुषों का स्मरण है. यह स्मरण कहीं महापुरुषों के व्यक्तित्व पर आधारित है तो कहीं उनकी कृतियों और उपलब्धियों पर. आज से डेढ़ हजार वर्ष पूर्व गणित के क्षेत्र में क्रांतिकारी स्थापनाएं करने वाले आचार्य आर्यभट का जानकारीपूर्ण स्मरण हो या चाणक्य पर यह विवेचनात्मक टिप्पणी... कि 'कौटिल्य की छल प्रपंच वाली नीति को देखकर प्रायः मैकियावेली के साथ तुलनीय मान लिया जाता है, लेकिन इस विषय में सावधानी से काम लेना चाहिए.' सकारण हमारे विवेक को जगाती है. तुलसीदास और तिलक पर द्विवेदी जी के श्रद्धास्मरण अपेक्षाकृत बेलौस शैली में हैं. छोटी-से-छोटी वस्तु आदर्श से सम्बद्ध होकर किस तरह महान हो उठती है... व्यवहार और आदर्श सिद्धांत का भेद क्या है... किस तरह तुलसीदास औसत आदमी में नयी आशा, नयी उमंग और नयी जीवन-लहर पैदा कर सके, यह इस निबंध को पढ़कर समझा जा सकता है. 'गीता रहस्य' के कृतिकार लोकमान्य तिलक की स्मरण शक्ति और पांडित्य को जो सम्मान द्विवेदी जी ने दिया है, वह निश्चय ही उन्हें मिलना चाहिए. 'राजा राम मोहन राय की हिंदी' लेख के बहाने द्विवेदी जी हिंदी गद्य साहित्य के प्रारंभिक इतिहास पर एक गंभीर विवेचन प्रस्तुत करते हैं. इससे यह भी स्पष्ट हुआ है कि सैयद इंशा अल्ला खां साहब की रचना 'रानी केतकी की कहानी' रचनाकार के निधन के बाद प्रकाशित हुई. हिंदी भाषा को देवनागरी लिपि में लिखने वाले आधुनिक युग के गद्य-विधाताओं की महत्वपूर्ण जानकारी के क्रम में राचरनदास, लल्लूजी लाल, सदल मिश्र और राममोहन राय की गद्य-भाषा के स्वरूप और शैली पर भी प्रकाश डाला गया है.

सर्वविदित सत्य है कि आचार्य द्विवेदी में कविवर रवींद्र के प्रति अगाध श्रद्धा रही. वे उन्हें महामानव कहते हैं. उनका कहना है कि रवींद्रनाथ ने भारत वर्ष के उसी रूप को ग्रहण किया है जो त्याग में, तपस्या में, श्रद्धा में और प्रेम में विश्वास करता है, जो जड़त्व की ओर से हटकर अंतखर के चैतन्य की ओर उन्मुख होता है. और यह, गुरुदेव पर एक सुचिंतित टिप्पणी है. रवींद्रनाथ की देन और नृत्य कला के पुनरुद्धार में उनका स्थान अपने-अपने विभागों में जानकारी बढ़ाने वाले आलेख हैं. बंकिम चंद्र, एंड्रूज, कामता प्रसाद गुरु, रत्नाकार, मैथिली शरण गुप्त, क्षितिमोहन सेन, डा. राजेंद्र प्रसाद, नेहरू, संपूर्णसिंह, द्वारिका प्रसाद मिश्र, सुमित्रानंदन पंत, दिनकर और सोहन लाल द्विवेदी आदि पर द्विवेदी जी के श्रद्धास्मरण तो इस पुस्तक को संग्रहणीय बनाते ही हैं... किंतु इनसे अलग जिन निबंधों का अपना एक अलग आकर्षण है, वे हैं—भारतेंदु हरिश्चंद्र, द्विवेदी जी की देन, मुंशी प्रेमचद, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, प्रसादजी की कामायनी, निराला जी और निराला जी केवल छंद थे.

जीवन प्राणधारा के मूर्त विग्रह के रूप में जहां द्विवेदी जी भारतेंदु को अपने समय का सफलतम महानेता मानते हैं वहीं वे प्रेमचंद को एक ऐसे रचनाकार के रूप में देखते हैं जिसके लिए प्रेम एक पावन वस्तु है. यही उसे सेवा और त्याग की ओर अग्रसर करता है. जहां सेवा और त्याग नहीं वहां प्रेम भी नहीं, वहां वासना का प्राबल्य है... प्रेमचंद के रचनाजगत का सच भी यही है. शुक्ल जी का स्मरण पूरी विनम्र श्रद्धा के साथ करते हुए भी द्विवेदी जी सांकेतिक तौर पर यह अवश्य कह गये हैं कि आचार्य शुक्ल ने काव्य की ही आलोचना अधिक की. अन्य सहित्यांग उनकी विशाल दृष्टि के लक्ष्य बहुत कम बने. 'कामायनी' के कवि पर द्विवेदी जी की इस टिप्पणी से असहमति का प्रश्न ही नहीं उठता कि यह कवि जीवन को दूर से देखता है. यह बात नहीं कि वह उसकी संपूर्ण विचित्रताओं और बारीकियों की उपलब्धि नहीं करता, करता है, उसका सामना भी करता है, लेकिन उसके सामना करने का ढंग भी अनोखा ही है. 'कामायनी' के कवि को वे ऐसे दर्जी के रूप में देखते हैं जो कम परिश्रम और ज्यादा कल्पना करके एक लंबा-चौड़ा झूल तैयार कर देता है, जो प्रत्येक आदमी को ढंक सकता है. यह कवि विश्व-मानव में से प्रत्येक की दुख-सुख संबंधी अनुभूति की जाच नहीं करता, संसार की वैचित्र्यपूर्ण समस्याओं की निकट से परीक्षा नहीं करता, बल्कि अपनी सहज कल्पना से मानवता को एक विराट संदेश देता है, जो प्रत्येक के काम की चीज है. ◻

महापुरुषों का स्मरण :
हजारी प्रसाद द्विवेदी
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली.
मूल्य : 45 रुपये.

लेखक होने के कर्तव्य की कहानियां

मिथिलेश्वर ने अपने नये कहानी-संग्रह ('मेघना का निर्णय'; पराग प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली-32, पंद्रह रुपए) की भूमिका में लिया है कि 'लड़ाकू रचनाएं (ही) सही रचनाओं की श्रेणी में आती हैं, लेकिन संग्रह की सभी कहानियां पढ़ने के बाद लगता है कि लेखक इस अवधारणा को अपनी रचनाओं में प्रायः नकारता है.

'मेघना का निर्णय' में लेख नायक द्वारा अपने दुश्मनों को जल्दी से खोज निकालता है लेकिन अपनी संगठनहीनता हो बी स्वीकारता है. फिर भी उसकी दृष्टि स्थापित होती है तथा वह 'बाबू' लोगों से निपटने का निर्णय करता है. इस कहानी के अतिरिक्त संग्रह की एक भी कहानी किसी नायक को जीयंत रूप में चित्रित नहीं कर पायी है. शेष सभी कहानियों के पात्र पराजित, थके हुए, बेबस और निष्क्रिय हैं. मानसिक रूप से सही जीवन मूल्यों के गवाह होते हुए भी ये पात्र जिंदगी की तकलीफों को भोगते जाते हैं. यहां ऐसा नहीं है कि व्यवस्था के दबाब इस कदर प्रभावशाली हो जाते हों कि आदमी कुछ कर ही नहीं पाये, लेकिन ये पात्र व्यवस्था से असंतोष मात्र प्रकट करके ही रह जाते है. रचनाओं में व्यवस्था को एक्सपोज़ करना बड़ी बात हो सकती है लेकिन तभी जबकि रचनाकार ऐसे कुचक्रों, षड्यंत्रों को सामने लाये जिनसे पाठक प्रायः नावाकिफ़ हो. अधकचरी प्रगतिशीलता क्लर्क की जिंदगी, पुलिस द्वारा निर्दोष को सजा देने की प्रवृत्ति, जमींदार द्वारा देह शोषण तथा अफसरशाही अमानवीयता आदि बातें तो निहायत साधारण जन भी जानता है बल्कि उससे भी अधिक जानता है जितनी कि मिथिलेश्वर अपनी कहानियों में सूचित करते हैं. 'छोटे शहर के लोग' कहानी के माध्यम से लेख कहना चाहता है कि एक ग्रामीण युवती की इज्जत को छोटे शहर की भीड़-शक्ति द्वारा बेच लिया जाता है. मात्र छोटी-सी घटना को इधर-उधर की लीपा-पोती करके कहानी 'बना' डालना कहां तक उचित है?

लेखकीय दृष्टि के आधार पर तो इन कहानियों को जनसाधारण की पक्षधरता लिए देखा जा सकता है लेकिन रचनाएं पाठक के मन में आक्रोश उत्पन्न नहीं कर पाती हैं. कहानियों की सहजता से उनकी शक्ति गायब है ◻

◻ राजकुमार गौतम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूर्तिदेवी साहित्य पुरस्कार

भारतीय ज्ञानपीठ का वर्ष १९८६ का मूर्तिदेवी पुरस्कार लोकसभा अध्यक्ष बलराम जाखड़ द्वारा हिंदी और राजस्थान के यशस्वी कवि श्री कन्हैयालाल सेठिया को उनकी काव्यकृति 'निर्ग्रंथ' के लिए १२ मई को नयी दिल्ली के फिक्की सभागार में समर्पित किया गया.

निर्ग्रंथ में कवि की ८२ कविताएं संकलित हैं. प्रत्येक कविता के साथ दर्शन जुड़ा है. ढाई हजार साल पहले भगवान महावीर ने जिस को प्रतिष्ठित किया वह आज तक दुनिया के हर आदमी की चेतना को प्रभावित कर रहा है. तीर्थंकर महावीर एक इतिहास-पुरुष हैं और कन्हैयालाल सेठिया ने इन्हीं इतिहास-पुरुष को केंद्र में रखा है.

'निर्ग्रंथ' की कतिपय रचनायें इस परमपुरुष की पुण्य स्मृति के ज्योतिर्मय संस्पर्श से जीवंत और आलोकित हो गई हैं. कवि ने महावीर से अनेकांत और जीवनानुशंग का संदेश ही ग्रहण नहीं किया है अपनी भाव-समाधि में इस महासाधक के मन में एक-एक गांठ के खुलकर उसके 'निर्ग्रंथ' हो जाने की प्रक्रिया का अंत: साक्षात्कार भी किया है. महावीर की यह आत्मोपलब्धि ही सेठिया जी की काव्योपलब्धि है.

भारतीय ज्ञानपीठ के संस्थापक स्व. साहू शांति प्रसाद जैन तथा वर्तमान अध्यक्ष श्री श्रेयांस प्रसाद जैन की मातुश्री की स्मृति स्वरूप इस पुरस्कार का नाम 'मूर्तिदेवी साहित्य पुरस्कार' रखा गया है.

२१००० रुपये की राशि के इस पुरस्कार का उद्देश ऐसी साहित्यिक संरचनाओं को प्रोत्साहन देना है जिनमें भारतीय जीवन मूल्यों विशेषकर अहिंसा, अनेकांत, अपरिग्रह समता, शांति, संयम, करुणा, त्याग तथा जनकल्याण के सिद्धान्तों एवं भावनाओं का उन्नयन हो.

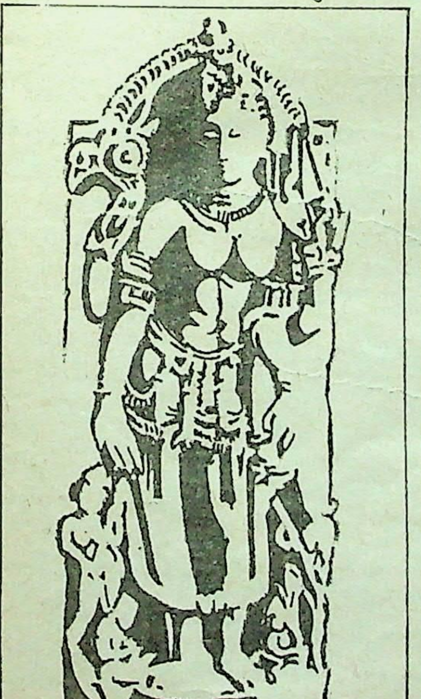

पुरस्कार से सम्मानित कवि-कथाकार कन्हैयालाल सेठिया ने कहा—इस पुरस्कार को मैं निर्ग्रंथ के लिए तो एक ग्रंथि मानता हूं पर यह साहित्यिक मूल्यांकन पाठक को कृति को पढ़ने की प्रेरणा देगा अत: प्रकारांतर से यह एक उपलब्धि भी है.

उन्होंने कहा—चरित्र संकट के एक ऐसे संक्रमण काल में जी रहा है जिसमें हृदय और मस्तिष्क का अंतर्द्वंद्व अपनी चरम सीमा पर है. केवल संवेगात्मक को वक्तव्य के रूप में प्रस्तुत करनेवाला साहित्य प्रचार के स्तर से ऊपर नहीं उठ पाता. ऐसा साहित्य सृष्टि में तो है पर उसमें दृष्टि नहीं. मानवीय मूल्यों का त्वरा से क्षरण हो रहा है. ऋषियों के अनुभूत सत्य 'वसुधैव कुटुंबकम्' को धर्मभेद, रंगभेद के कथित आधार पर निर्लज्जतापूर्वक नकारा जा रहा है. अपने स्वरूप को विस्मृत कर प्रभुतुल्य मनुष्य पशुत्व के स्तर पर उतर आया है. सृजनधर्मी रचनाकार वही है जो भेद से अभेद की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ने की क्षमता और गति समाज को दे.''

निर्णायक मंडल के सदस्य डा. लक्ष्मीमल सिंघवी ने श्री सेठिया के साहित्य को दृष्टि के रस से सराबोर बताया. निर्णायक मंडल के अध्यक्ष श्री गंगाशरण सिंह ने कहा कि उनकी रचना निर्ग्रंथ को चुनना आसान काम नहीं था क्योंकि उनकी शेष रचनायें भी एक से एक बढ़कर हैं.

मुख्य अतिथि बलराम जाखड़ ने कहा कि महाकवि श्री कन्हैयालाल एक संत की तरह हैं जो आज के युग में हमें सचेत रखने की कोशिश कर रहे हैं. और यह मेरा अहोभाग्य है मैं एक महामानव का सम्मान कर रहा हूं. उनके साहित्य से पूरा समाज प्रकाशमान होता है और अंधेरा दूर हो जाता है. श्री सेठिया उस दीपक की तरह हैं जो स्वयं जलकर दूसरों को प्रकाश देता है.''

ज्ञानपीठ के प्रबंध न्यासी साहू अशोक जैन ने पुरस्कार के उद्देश की चर्चा करते हुए श्री सेठिया के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला. श्री रमेशचंद्र जैन ने समारोह में उपस्थित साहित्यप्रेमियों का आभार व्यक्त किया समारोह के दूसरे सत्र में सुश्री इंदु जैन ने मंच से कवि की कुछ हृदयस्पर्शी कविताओं का पाठ कर पूरे सभागार को मंत्रमुग्ध कर लिया. समारोह का परंपरा रीति से संचालन किया ज्ञानपीठ के सलाहकार श्री लक्ष्मीचंद्र जैन ने. □

श्रद्धांजलि

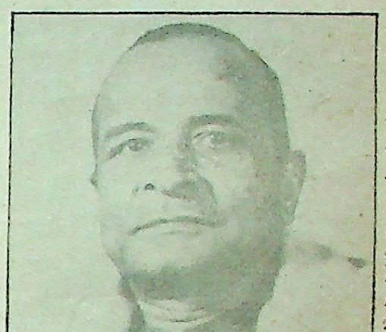

हिंदी अकादमी, दिल्ली के सौजन्य से

राम नवमी, १८९५ को मध्यप्रदेश के छतरपुर कस्बे में जन्में हिंदी के यशस्वी साहित्यकार वियोगी हरि का ९ मई, १९८८ को देहांत हो गया. वे ९३ वर्ष के थे. वियोगीजी ने जैसी शांति से लौकिक जीवन जीया उसी शांति से अलौकिक जीवन में प्रवेश कर गये.

वह अविवाहित थे. उन्होंने श्री भगवत दत्त शिशु को अपना पुत्र माना था. और उन्हीं के परिवार के साथ रहते थे.

वियोगी हरि का मूल नाम हरिप्रसाद द्विवेदी था. वे छतरपुर नरेश की पत्नी और टीकमगढ़ नरेश की पुत्री 'युगलप्रिया' को अपनी मां मानते थे. अपनी इस मां की मृत्यु से इतने दुखी हुए कि उन्होंने अपना नाम वियोगी हरि रख लिया था.

हरिजन समाज के उद्धार और विकास की प्रेरणा इन्हें गांधीजी से मिली. छुआछूत हटाने के लिए वियोगीजी ने हरिजन सेवक संघ का कार्य किया. वे साबरमती आश्रम और हरिजन सेवक संघ के अध्यक्ष थे.

वियोगी जी ने केवल लेखन कार्य ही नहीं किया अपितु हिंदी (खड़ी बोली) के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया. गद्य और पद्य दोनों विधाओं में प्रचुर मात्रा में लिखा. इसके साथ-साथ गद्य और पद्य दोनों का एक साथ निर्वाह करने वाले गद्यगीतों की भी रचना की. उनका गद्य अलंकृत और सादा दोनों तरह का है. लगभग १५० पुस्तकों के रूप में फैले वियोगी जी के साहित्य ने प्राय: सभी विधाओं में श्रीवृद्धि की.

पिछले दिनों मध्यप्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन ने वियोगी जी के साहित्यिक योगदान के लिए उन्हें 'भवभूति अलंकरण' से अलंकृत किया था.

सारिका परिवार की ओर से भावीभीनी श्रद्धांजलि समर्पित है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

'और गुड्डी की पोनीटेल अब दीख रही है...'

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पचास वर्ष पहले, नन्हे किट्टी हजूरिया के लिये फोटोग्राफी का आरम्भ स्वयं द्वारा बनाये हुये पिनहोल कैमरे द्वारा और मॉडल के रूप में अपनी छोटी बहन के साथ हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टि सुखद है

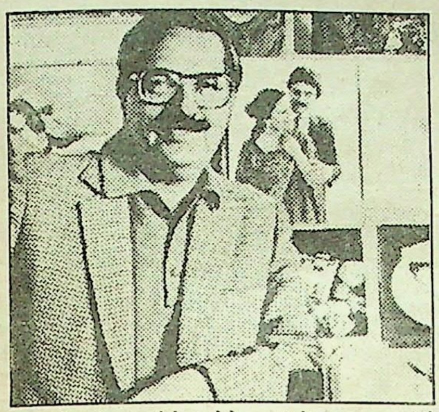

आज श्री हजूरिया एक पेशेवर फोटोग्राफर जिन्हें इस बात पर गर्व है कि उन्होंने नेत्र-दान का संकल्प लिया है।

''मैंने जो पहला फोटो खींचा उसकी तैयारी इतने मनोयोग से और जोरदार तरीके से की कि वह संभवतः यूसुफ कार्श के लिये सम्मान की बात होती।

शुरू में मैंने किसी भाँति अपने दादाजी का कैमरा ले लिया था (उन दिनों दादा से बहुत घबराहट होती थी। यहाँ तक कि दादा की घड़ी का समय ही सही माना जाता था।) यह कैमरा विश्वयुद्ध से पहले का ''देहल'' फ्रांस का बना हुआ था। मॉडल, मेरी जानकारी अनुसार सुन्दरतम नन्हीं लड़की थी। 'बहन गुड्डी', जो झालरवाली पोशाक में सजी थी, मैंने यह सावधानी बरती थी कि उसके चेहरे पर काफी धूप रहे। सब कुछ उसी तरह जैसा किताब में लिखा था, सिवाय एक छोटी सी बात, कि — मैंने फिल्म नहीं डाली थी।

यह देखते हुये कि ऐसी भयंकर भूल के साथ इस कहानी का आरम्भ हुआ था, मैंने जीवन में काफी कुछ पा लिया है। आज मैं तस्वीरें खींच कर अपनी जीविका अर्जित कर लेता हूँ। चूंकि मेरा व्यवसाय इस पर निर्भर है इसलिये यह तो आप सोच ही सकते हैं कि मैं अपनी फोटोग्राफी की उत्कृष्टता को बनाये रखने के लिये पूरा प्रयास करता हूँ। फिर भी, श्रेष्ठतम उपकरणों तथा सर्वाधिक उन्नत लैंसों के प्रयोग के बावजूद मैं हमेशा जो चाहता हूँ उसे कैमरे में नहीं पकड़ पाता। किसी रंग का एक नाजुक सा संकेत अथवा कोई अति सूक्ष्म बात मेरे कैमरे की पकड़ से अक्सर बच निकलती है।

शायद मेरे चित्रों का विक्रय मूल्य तो इस बात से प्रभावित नहीं होता परन्तु उससे सर्जनात्मक भावना अवश्य अतृप्त रह जाती है। और तब मुझे ध्यान आये बिना नहीं रहता उन शानदार लैंसों का जो तुरन्त मस्तिष्क की सेवा में प्रस्तुत हो जाते हैं और जो मनुष्य द्वारा निर्मित लैंसों से बहुत अधिक श्रेष्ठ हैं — मेरे नेत्र।

मैंने कभी इस बात का विशलेषण तो नहीं किया पर क्योंकि मैं अपने नेत्रों को इतना महत्व देता हूँ इसी लिये मैंने निर्णय किया कि वे मेरे बाद भी जीवित रहें। हाँ, मैंने किसी दृष्टिहीन व्यक्ति को दिये जाने के लिये नेत्र-दान का संकल्प किया है — किट्टी हजूरिया कहते हैं।

परिवार के लिये गर्व का विषय :

वह आगे कहते हैं: मैं अपने आपको भाग्यशाली समझता हूँ कि मेरी पत्नी एवं बेटियाँ मेरे दृष्किोण से सहमत थे।''

सो हम सबने परिवार का संकल्प-पत्र भर दिया। पूरे परिवार की भागीदारी से यह तो निश्चित हो जाता है कि मेरी मृत्यु पर कोई न कोई निकटतम नेत्र बैंक को सूचित करने की जिम्मेदारी लेगा।

नेत्र-दान का संकल्प कीजिये :

दृष्टि, अन्य सभी इन्द्रियों से बढ़कर, अत्यन्त ज्ञानवर्धक अनुभव है।

और किट्टी हजूरिया की तरह, वह चमत्कार कर दिखाने का सामर्थ्य आपमें है। नेत्र-दान का संकल्प कीजिये। इसके लिए केवल आपके हस्ताक्षर की आवश्यकता है।

और एक दृष्टिहीन व्यक्ति के लिए किसी दिन देखने की सामर्थ्य पा लेना, एक चमत्कार से कम नहीं है।

नेत्र-दान के विषय में कुछ आधारभूत तथ्य :

1. किसी भी उम्र का, लगभग कोई भी व्यक्ति नेत्र-दान कर सकता है, यदि नेत्र-दाता चश्मा पहनता हो, उसे मोतियाबिन्द हो या आँखों का सफल ऑपरेशन हो चुका हो, तो भी नेत्र-दान सम्भव है।
2. मृत्यु के उपरान्त 6 घन्टों के अन्दर-अन्दर आँखों को निकाल लेना चाहिये। अतः निकटतम नेत्र-बैंक को तुरन्त सूचित करना आवश्यक है।
3. नेत्रों को निकालने में केवल 10-15 मिनिट लगते हैं और उससे कोई निशान या विकृति उत्पन्न नहीं होती।
4. आपके नेत्र-दान से दो दृष्टिहीन व्यक्तियों को दृष्टि मिलती है, एक दृष्टिहीन व्यक्ति को एक नेत्र प्रदान किया जाता है।
5. कानून में यह प्रावधान है कि आप किसी मृत सम्बन्धी के नेत्र दान कर सकते हैं — यदि उसने कभी नेत्र-दान के विरुद्ध अपना मत व्यक्त न किया हो तो।

कृपया अपने परिवार के साथ इस विषय पर चर्चा करें। नीचे दिया गया प्रपत्र भरें। और टाइम्स आई रिसर्च फाउण्डेशन को डाक द्वारा भेज दें। हम आपको एक नेत्र-दाता के रूप मे पंजीयन कर लेंगे और आपको नेत्र-दाता कार्ड और प्रमाण पत्र भेजेंगे जिसमें आपके निकटतम नेत्र-बैंक का नाम, पता व टेलीफोन नम्बर, अंकित होगा।

राष्ट्र को नेत्र-दान करने की घोषणा

मैं/हम, अधोहस्ताक्षरीगण, एतद्द्वारा संयुक्त रूप से/पृथक-पृथक राष्ट्र को अपने नेत्र दान करने का संकल्प लेता हूँ/लेते हैं तथा एक दूसरे पर दायित्व डालते हैं कि हममें से किसी की भी मृत्युपरांत नेत्र-चिकित्सक को बुला कर, प्रत्यारोपण के उद्देश्य से हमारे नेत्र निकाल कर हमारी इच्छा पूर्ण की जाए।

1. श्री/श्रीमति ____________ आयु ____ हस्ताक्षर ____________

2. श्री/श्रीमति ____________ आयु ____ हस्ताक्षर ____________

3. श्री/श्रीमति ____________ आयु ____ हस्ताक्षर ____________

पता ________ पिनकोड ________ राज्य ________ तिथि ________

साक्षी की आवश्यकता है जब केवल एक या परिवार के 3 से कम सदस्य नेत्रदाता हों.

1. श्री/श्रीमति ____________ 2. श्री/श्रीमति ____________

रिश्ता ____________ रिश्ता ____________

हस्ताक्षर ____________ हस्ताक्षर ____________

पता ____________ पता ____________

टाइम्स आई रिसर्च फाउण्डेशन
टाइम्स ऑफ इंडिया, 10, दरियागंज, नई दिल्ली-110 002.

दृष्टि के आनन्द को बांटिये. नेत्र-दान का संकल्प कीजिये.

टाइम्स आई रिसर्च फाउण्डेशन को दी जाने वाली वित्तीय सहायता आयकर अधिनियम 1961 की धारा 80(जी) के अंतर्गत कर रहित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य, स्वच्छता और सौंदर्य

विशेष परिशिष्ट

स्वास्थ्य में ही सौंदर्य है !

स्वास्थ्य, स्वच्छता और सौंदर्य परस्पर एक दूसरे से संबद्ध हैं. एक के बिना दूसरे की संभावना कम हो जाती है. इनमें प्रमुख है स्वच्छता. स्वच्छता से ही स्वास्थ्य बन सकता है. बिना स्वच्छता के स्वास्थ्य बना नहीं रह सकता. कई तरह की बीमारियां आदमी को घेर लेती हैं. आज अगर प्रदूषण के विरुद्ध युद्ध स्तर पर काम किये जा रहे हैं तो उसका प्रमुख कारण यही है कि प्रदूषण से पैदा होने वाली बीमारियों से आदमी की रक्षा की जा सके. ये प्रदूषण भी कई प्रकार के हो सकते हैं. मोटे तौर पर देखें तो प्रदूषण को इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है.

1. वायु प्रदूषण : वायु का प्रदूषण हमारे जीवन को सबसे अधिक प्रभावित करता है. वायु को ही सांस लेते समय हम अपने फेफड़ों में खींचते हैं जहां से फेफड़े वायु में स्थित आक्सीजन को ग्रहण करते हैं. वायु में आक्सीजन के अतिरिक्त प्रमुख रूप से नाइट्रोजन तथा कार्बनडाई आक्साइड आदि गैसें भी होती हैं. ये शरीर को न तो कोई लाभ पहुंचाती हैं और न हानि. लेकिन जब वायु में कार्बनमोनो आक्साइड, सल्फर डाई आक्साइड आदि गैसें मिल जाती हैं तो ये शरीर के लिए हानिकारक होती हैं. इन प्रदूषणों का कारण है—कारखानों की चिमनियों से निकलने वाला इन गैसों से युक्त धुआं, सड़कों पर चलती मोटर गाड़ियों से निकलने वाला धुआं, घरों में पत्थर के कोयले आदि को जलाने से निकलने वाला धुआं आदि. ये सभी स्रोत प्रतिदिन भारी मात्रा में जहरीली गैसें उगलकर वायुमंडल में फेंक रहे हैं और इस वायुमंडल में सांस लेकर हम इन गैसों को अपने शरीर को दे रहे हैं. यदि वायु का प्रदूषण इसी रफ्तार से बढ़ता चला गया तो इसमें कोई शक नहीं कि इक्कीसवीं सदी में हम अपनी आने वाली पीढ़ी के लिए एक ऐसा जहरीला वातावरण तैयार कर देंगे जिसमें सांस लेना ही दुष्कर होगा. जरा कल्पना कीजिए उस स्थिति की कि आदमी को चौबीसों घंटे अपने कंधे पर आक्सीजन सिलिंडर टांगे घूमना होगा. लेकिन अभी देर नहीं हुई. अभी संभावना बनी हुई है कि हम अपनी धरती को नर्क बनने से रोक सकें. यदि कारखानों की चिमनियों से निकलने वाले धुएं को परिशुद्ध करने के बाद ही चिमनियों से छोड़ा जाये, मोटरगाड़ियों के इंजनों में इस तरह के सुधार किये जायें कि उनके धुएं को प्रदूषण मुक्त किया जा सके तो इस समस्या से किसी सीमा तक निपटा जा सकता है. यह सब इतना सरल तो नहीं है पर जब समस्या इतनी विकट हो तो उसका समाधान सरल भी कैसे हो सकता है.

2. जल प्रदूषण : वायु में हम सांस लेते हैं तो पानी हम पीते हैं. ये चीजें चूंकि हमारे शरीर के भीतर जाती हैं. इसलिए इन दोनों के प्रदूषण शरीर को हानि पहुंचाते हैं. जो पानी हम पीते हैं, वह भोजन नली के द्वारा पेट तक पहुंचता है. वहां से वह रक्त में आता है और फिर गुर्दों से होता हुआ मूत्र के रूप में शरीर से बाहर निकलता है. एक तरह से यह हमारे पूरे शरीर की यात्रा करता है. पानी के साथ हमारे शरीर में प्रवेश करने वाला प्रदूषण हमारे शरीर के भीतर कोमल अंगों को क्षति पहुंचा सकता है. इसके साथ कई प्रकार के जहरीले रसायन हमारे शरीर में प्रविष्ट हो सकते हैं. इस प्रकार के प्रदूषणों से हमारे शरीर पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव तात्कालिक भी हो सकते हैं और धीमे जहर की तरह धीरे-धीरे प्रभाव दिखाने वाले भी हो सकते हैं.

पानी में आने वाले प्रदूषणों की एक बड़ी मात्रा तो वायु के साथ मिली सल्फर डाई आक्साइड, नाइट्रस आक्साइड, कार्बन मानो आक्साइड आदि गैसें वर्षों के पानी के साथ घुलकर बनाती हैं. पानी में घुलकर ये गैसें अम्ल में रूपांतरित हो जाती हैं. ये अम्ल जब धरती पर आते हैं तो मिट्टी में स्थित क्षारीय पदार्थों के साथ क्रिया करके कई प्रकार के लवण बनाते हैं. इनमें से कुछ लवण शरीर के लिए हानिकारक होते हैं.

कारखानों से निकलने वाला मैला आमतौर पर नदियों में छोड़ दिया जाता है. इस मैले में कई तरह के घातक रसायन होते हैं. नदी का यह पानी हम कई रूपों में उपयोग में लाते हैं. एक उपयोग तो है खेतों में सिंचाई का. विषैले रसायनों से युक्त यह पानी जब हमारे खेतों में पहुंचता है तो ये रसायन उन पौधों में और उसके बाद हमारे भोजन में आ जाते हैं. इसके अतिरिक्त नदी के पानी को परिशोधन के बाद पीने के लिए भी प्रयोग में लाया जाता है. हालांकि परिशोधन की प्रक्रिया में कई तरह के रसायन पानी में से कम हो जाते हैं लेकिन फिर भी कुछ रसायन पानी में शेष रह ही जाते हैं. ये रसायन भी किसी न किसी रूप में हमारे शरीर पर दुष्प्रभाव ही डालते हैं.

कीटनाशकों का जब आविष्कार हुआ था तो ये आदमी के लिए वरदान माने गये थे किंतु आज से वरदान से अधिक अभिशाप बन गये हैं. कहना न होगा कि तीन साल पहले के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

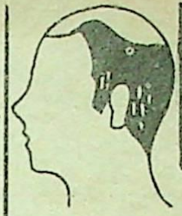

सिर्फ तीस साल!
और
गंजापन?

यह एक जड़ी-बूटियों द्वारा अनोखा इलाज है। जिससे निम्न बीमारियों का इलाज होता है।

- कई प्रकार का गंजापन
- चकते
- रूसी तथा बाल झड़ना
- असमय हुये सफेद बालों का पुनः काला उगना

हानि रहित इलाज
बिना किसी डाई या मेंहदी के

मुफ्त परामर्श हेतु मिलें

रविवार: अवकाश

भारतीय चिकित्सा संस्थान
जी-62, प्रीत विहार, नई दिल्ली-110092 फोन: 2201749
समय: प्रातः 9 बजे से 1. बजे तक
सायं: 5 बजे से 7 बजे तक।

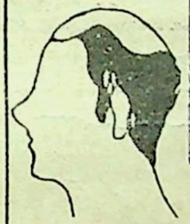

Only Thirty?
Became Bald!

Here is a Unique Way
A Herbal Way to:

- **Arrest Certain Type of Baldness**
- **Cure Alopia**
- **Stop Loss of Hair**
- **Glow Black Hair**

NO SIDE EFFECT
NO DYES OR MEHNDI

For Free Consultation
Contact Personally

Sunday Closed

BHARTIYA
CHIKITSA SANSTHAN
G-62, Preet Vihar, New Delhi-92 Ph.: 2201749
9 A.M. To 1 P.M.-5 P.M. To 7 P.M.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोपाल गैस कांड की त्रासदी का कारण एक कीटनाशक बनाने वाले कारखाने में हुई दुर्घटना ही थी. इस प्रकार की दुर्घटनाएं तो हमेशा नहीं घटती लेकिन इनमें तैयार होने वाला कीट-नाशक मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए हमेशा खतरा बना रहता है. खेतों में खेती को हानि पहुंचाने वाले कीटों को तथा घर में खटमल, मच्छर, काक्रोच आदि को मारने के लिए कीटनाशकों का प्रयोग धड़ल्ले से हो रहा है. घरों का कीटनाशक सांस के जरिये तथा घर की खाने की वस्तुओं के साथ हमारे शरीर में भी आता है. खेतों में डाला जाने वाला कीटनाशक भी खेतों में प्राप्त खाद्य सामग्री के साथ ही हम तक भी पहुंच जाता है इसके अतिरिक्त कीटनाशकों का कुछ भाग मिट्टी में समा जाता है और बारिश होने पर वह जमीन में गहराई में चला जाता है. वहां वह जमीन के नीचे के पानी मे मिल जाता है. जमीन के नीचे का यह पानी कुओं, स्रोतों, आदि के माध्यम से एक बार फिर हम तक पहुंचता है. यही पानी नदियों से होते हुए समुद्र तक भी पहुंचता है और वहां के जीवों को भी हानि पहुंचाता है.

कुल मिलाकर स्थिति यह है कि हमारी हर सांस के साथ पानी की हर घूंट के साथ, खाने के हर कौर के साथ हम किसी न किसी रूप में जहरीले रसायन ले रहे हैं. इन रसायनों से हमारे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती है. तरह-तरह के रोग हमें आ घेरते हैं. इन रोगों से बचने के लिए पहली जरूरत है ऐसी औषधियों की जिन्हें लेकर हम अपने शरीर की रोग प्रतिरोध शक्ति को बढ़ा सकें. इससे हमारे शरीर में रोगों से लड़ सकने की क्षमता बढ़ सकेगी. कई आयुर्वेदिक संस्थान च्यवनप्राश बनाते हैं. च्यवनप्राश कई प्रकार की जड़ी-बूटियों का मिश्रण होता है इसका प्रमुख घटक है आंवला, इसमें विटामिन 'ए' तथा 'सी' काफी मात्रा में होते हैं. विटामिन 'ए' से आंखों की ज्योति ठीक रहती है तथा विटामिन 'सी' से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है. ये संस्थान इस प्रकार की औषधि भी बनाते हैं जिनसे पाचन आदि में सहायता मिलती है. कुछ औषधियां शरीर के तंतुओं को शक्तिशाली बनाने में मदद देती हैं. इनके प्रयोग से शरीर स्वस्थ तो होता ही है, सुंदर और सुडौल भी बन जाता है..

अगर कहा जाता है कि स्वास्थ्य में ही सौंदर्य है तो गलत नहीं कहा जाता. मनुष्य स्वस्थ होगा तो सुंदर भी होगा ही. अस्वस्थ मनुष्य कभी सुंदर नहीं हो सकता.

शरीर के विकास के लिए प्रोटीन बहुत जरूरी चीज है. बढ़ते बच्चों के लिए ही नहीं, युवाओं, प्रौढ़ों, और वृद्धों के लिए भी यह जरूरी है. दाल, दूध, मांस, मछली अंडे आदि में यह काफी मात्रा में होता है. पर भारत की अधिकतर जनसंख्या चूंकि शाकाहारी है. इसलिए यहां प्रोटीन प्राप्त करने के स्रोत काफी कम रह जाते हैं. गत दो दशकों की शोधों ने यह सिद्ध कर दिया है कि सोया में प्रोटीन की मात्रा बहुत अधिक होती है—43 प्रतिशत जबकि दाल में यह 25 प्रतिशत, मांस में 18 प्रतिशत, पनीर में 30 प्रतिशत तथा अंडे में 13 प्रतिशत होती है. इसलिए हमें अपने भोजन में सोया तथा उसके अन्य उत्पादों का भरपूर प्रयोग करना चाहिए. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक्टिव—२५

सपन डेयरी स्पेशल तथा मिल्क केयर जैसे सुप्रसिद्ध उत्पादों के निर्माता डालमिया ने सपन एक्टिव-२५ नामक एक नये स्वास्थ्यवर्धक पेय का उत्पादन शुरू कर दिया है. यह पूरे परिवार के लिए उपयोगी है.

स्वास्थ्य-वर्धक पेयों के बाजार में ७ ब्रांड चल रहे हैं. इनमें से कुछ कत्थई रंग के हैं और कुछ सफेद. इनमें सबसे बड़ा अंतर यह है कि कत्थई रंग के ब्रांडों को केवल दूध के साथ ही लिया जा सकता है. हार्लिक्स, बोर्नवीटा, कंप्लान आदि इनमें से कुछ प्रमुख ब्रांड हैं. इन सबमें से कंप्लान ही सबसे अधिक पोषक है लेकिन कीमत उसकी इनसे लगभग दुगुनी है.

एक्टिव-२५ इन सबसे अनूठा है. वह कंप्लान से भी बेतहर है क्योंकि कंप्लान में केवल २३ अनिवार्य पोषक तत्व होते हैं. जबकि एक्टिव-२५ में इनकी संख्या २५ है. इसके अलावा इसमें शुद्ध कोको तथा माल्ट भी होते हैं जो कंप्लान में नहीं होते. इसीलिए यह स्वाद में भी कंप्लान से बेहतर है. यह बहुत स्वादिष्ट होता है तथा इसके स्वाद की तुलना किसी भी कत्थई रंग ब्रांड से की जा सकती है.

एक्टिव-२५ हाल ही में पूरे राष्ट्रीय स्तर पर बाजार पर में आया है. अपने शुरू के दौर में ही इसने उपभोक्ताओं को आकर्षित कर लिया. बड़े पैमाने पर इसका विज्ञापन तो किया ही जा रहा है. इसके अतिरिक्त हर क्षेत्र के स्कूल के बच्चों में भी बड़े पैमाने पर इसे नमूनों के तौर पर बांटा गया है. बच्चों ने भी इसे काफी पसंद किया है.

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि एक्टिव-२५ बाजार के किसी भी अन्य स्वास्थ्य-वर्द्धक पेय की तुलना में अधिक पोषक और स्वादिष्ट है. □

मिरगी का उपचार

सभी प्रकार की मीरगी के दौरों का उचित दवाई के प्रयोग से अब ठीक किया जा सकता है. रोगी की बीमारी का पूरा इतिहास उसके सगे संबंधियों व स्वयं उसका इतिहास लेने के बाद उसे विस्तृत न्यूरोलाजिकल परीक्षण से पूर्ण निदान या परीक्षण कराना चाहिये. रोगी के विभिन्न प्रकार के न्यूरोलाजीकल परीक्षण किया जा सकता है. जैसे ई.ई.जी., सी.ए.टी. स्कान कानोटाइड एलजियोग्राफी और दूसरे बायोकेनिकल टेस्ट इत्यादि (यदि इनकी जरूरत समझी जायें तो) ताकि उचित निदान हो सकें और सही दवाई छांटी जा सके. आमतौर से रोगी को न्यूरोलोजिस्ट से 2 या 3 साल तक इलाज कराना पड़ता है. हर एक या दो महीने में फिर से जांच करनी पड़ेगी ताकि दवाई का प्रभाव व साइडइफेक्ट देखा जा सके. आमतौर पर देखा गया है कि अगर इलाज लेने के साथ-साथ रोगी अपने रोग के बारे में सोचना बंद कर दे कि मैं बीमार हूं. और अपने आपको खुश रखे, ऐसा कोई काम न करें जिससे उसके दिमाग पर ज्यादा जोर पड़े तो उसे स्वतः लाभ होता है. मां-बाप को भी रोगी पर इतना समुचित ध्यान होना आवश्यक है कि रोगी के मन पर किसी प्रकार का आघात न पहुंचे. रोगी के प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार होना अति आवश्यक है. उसे प्यार से ही बुलाया जाये और किसी भी बात को प्यार से ही समझाया जाये रोगी के रोग को लेकर किसी के सामने रोगी की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये. रोगी भी ऐसा न सोचें की उसका रोग कभी ठीक नहीं होगा. अगर इलाज के साथ साथ इन सभी बातों का ध्यान रखा जाये तो 50 प्रतिशत रोग स्वतः ठीक हो जाता है. बाकी इलाज पर निर्भर है.

डा. आर. के. गुप्ता आयुर्वेदाचार्य, निकट गुरुद्वारा, चौदह बी लक्ष्मणझूला रोड, ऋषिकेष-249201

मिरगी (दौरे)

का मनोवैज्ञानिक/आयुर्वेदिक इलाज

सैकड़ों पुराने से पुराने रोगी लाभ उठा रहे हैं

जे. डेनिस, 67 राजपुर रोड़, देहरादून.

मेरी बहन कु० मेरी डेनिस जो कि इस समय 53 साल की है। उसकी यह बीमारी 45 साल पुरानी हो चुकी थी। जिसके कारण उसकी शादी भी नहीं हो सकी। कभी 15 दिन मे एक बार, कभी एक दिन में 5 से 10 दौरे तक आ जाते थे। हमें किसी ने डॉ० साहब के बारे में बताया। पहले तो हमने सोचा कि जब हमने बड़े-बड़े शहरों के डॉक्टरों से सभी तरह के इलाज करवा लिए हैं तो अब छोटे शहर मे जाकर क्या होगा। 2-4 दिन ऐसे ही सोच-सोचकर निकल गये। हम डॉ० साहब के पास अपनी बहन को लेकर गये। डॉ० साहब ने पहले पूरी बीमारी का इतिहास सुना उसके बाद उसे देखा व मनोवैज्ञानिक इलाज दिया साथ मे खाने के लिए दवा दी, उस दिन तारीख 1-11-85 थी। उस दिन से आज तक कोई दौरा नीं आया। वह बिल्कुल ठीक है। हमने 4-5 रोगी और भेजे थे वे भी सब ठीक हैं। हम डॉ० साहब के बहुत आभारी हैं।

श्री एम.पी. मोहता, टैगोर स्ट्रीट, सेकेंड-फ़्लोर, निकट हांगकांग बैंक कलकत्ता

हमारी लड़की जिसे बचपन से मिरगी की शिकायत थी, 30 साल की हो गई थी । इस बीमारी के कारण हम उसकी शादी भी न कर सके, एक दिन में कई-कई बार दौरे पड़ जाते थे, बहुत इलाज करवाया, लेकिन कोई आराम नही हुआ । किसी-किसी दवा से 5 से 10 दिन के लिये आराम मिल जाता था, लेकिन रोग की जड़ नहीं कटी, हमारी पहचान का एक आदमी अरविन्द नगर,दिल्ली-29 में रहता है, उसके लड़के को भी यही दौरा था । उन्होंने डा. गुप्ता, ऋषिकेश से इलाज करवाया था । ठीक होने पर उन्होंने हमें पत्र लिखा, दूर होने की वजह से हमने डा. साहब को बीमारी का पूर्ण विवरण पत्र में लिख कर दवा वी.पी.पी. से भेजने की प्रार्थना की, लेकिन हमें उत्तर मिला कि रोगी को देखे बगैर हम दवा डाक से नहीं भेजते, एक बार दिखाना बहुत जरूरी है । हम लड़की को लेकर डा. साहब के पास गये, डा. साहब ने रोग का पूरा इतिहास जानने के बाद हमें विश्वास दिलाया कि हमारी लड़की बिल्कुल ठीक हो जायेगी, डा. साहब ने एक खुराक दवा अपने क्लिनिक में दी तथा बाकी दवा घर के लिये दी, उनकी दवा का कोर्स पूरा करने के बाद दवा बंद कर दी । आज 5½ वर्ष हो गये, कोई दौरा नहीं आया उसकी शादी भी कर दी है, दो बच्चे है । वह एकदम खुश है, हम डा. साहब का यह अहसान कभी नहीं भूल सकते ।

श्री सिंह जी, सैयड्यूल नं. बी राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली.

हम अपने लड़के को लेकर डा. गुप्ता के पास गये जो कई वर्षों से मिरगी से पीड़ित था, डा. साहब ने अच्छी तरह से चैक-अप करने के बाद दवा दी, अब वह बिल्कुल ठीक है ।

मिरगी कई प्रकार की होती है : बहुत से रोगी अपने रोग को स्वयं नहीं पहचान पाते। रोग के मुख्य लक्षण है *अचानक जमीन पर गिरना *मुंह का एक तरफ घुमाना *आंखें पथराना *मुठ्ठियां कसना *गर्दन टेढ़ी पड़ना *मुंह से झाग आंना *केवल एक-आधे सेकेंड के लिए ही चक्कर आना *जीभ का बाहर व दांतों के बीच आ जाना *ओं-ओं, गों-गों की आवाज व बेहोश होना।

जिन रोगियों में एक भी लक्षण दिखाई दे, तो वह स्वयं किसी भी दिन मिलें, शुरू में एक बार रोगी को यहां जाकर दिखाना बहुत जरूरी है। रोगी को यहां रुकने की जरूरत नहीं पड़ती। यह बीमारी जादू-टोने, झाड़-फूंक व शादी करने से दूर नहीं होती है।

समय : प्रातः 9.00 से सायं 5.00 तक, बृहस्पतिवार अवकाश

Rashtriya

नीरज क्लिनिक — डा. आर.के. गुप्ता

निकट गुरुद्वारा, चौदह बीघा, लक्ष्मणझूला रोड, ऋषिकेश (यू.पी.) फोन: 765, 1165

नोट : शुरू में रोगी को देखे बगैर पत्र द्वारा हम अपनी राय नहीं दे सकते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी

बीमा के क्षेत्र में न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी का अपना एक विशिष्ट स्थान है. इन्होंने समय-समय पर विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी योजनाएं तैयार की हैं और लाखों लोग इन योजनाओं से लाभान्वित हुए हैं. इन्हीं महत्वपूर्ण योजनाओं में दो हैं: मेडिक्लेम तथा अनबॉर्न चाइल्ड वैलफेयर स्कीम.

मेडिक्लेम में बीमा किये व्यक्ति को अस्पताल के इलाज तथा वहां रहने के खर्चे के रूप में पूरी की पूरी बीमा राशि दी जा सकती है. इस योजना में १२ से ७० वर्ष तक के व्यक्ति का बीमा किया जाता है. इसके लिए इतना अवश्य अनिवार्य है कि व्यक्ति का इलाज भारत में ही हो तथा बीमे की राशि भी भारतीय मुद्रा में ही दी जाती है. इस योजना में कई वर्गीकरण है और कोई भी व्यक्ति किसी भी वर्गीकरण के अंतर्गत अपना बीमा करवा सकता है. वर्गीकरण के अनुसार ही उसे प्रीमियम देनी होगी तथा उसी के अनुसार उसे लाभ मिल सकेंगे.

बच्चों की बीमारी पर देश में काफी सीमा तक नियंत्रण पाया जा चुका है पर जन्म से पूर्व यह अनुमान लगाना काफी कठिन होता है कि बच्चा पूर्ण स्वस्थ ही जन्म लेगा. इस दिशा में न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी ने अनबॉर्न चाइल्ड वैलफेयर स्कीम शुरू की है इसके अंतर्गत १८ से २० वर्ष के बीच की आयु कि स्त्रियों की तीन माह तक के गर्भ की स्थिति में बीमा कराया जा सकता है. यदि बच्चे में जन्म के समय में ही कोई ऐसा रोग है जिसका इलाज कराया जा सकता है तो बीमा की राशि का आधा भाग तक उसके इलाज के लिए कंपनी द्वारा दिया जा सकता है. यदि बच्चे में जन्म के समय ही कोई स्थाई आंशिक अपंगता हो तो सारिणी के अनुसार इलाज के लिए कुछ राशि तत्काल दे दी जाती है और शेष राशि किसी बैंक में या यूनिट ट्रस्ट में उसके नाम से जमा करा दी जाती है. यदि जन्म के समय बच्चे में पूर्ण अपंगता हो तो इलाज का पूरा खर्चा दिया जाता है और शेष राशि बच्चे के नाम से बैंक अथवा यूनिट ट्रस्ट में जमा कर दी जाती है. न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी का बीमा का क्षेत्र बहुत बड़ा है. इसकी विभिन्न बीमा योजनाओं के अंतर्गत पशुओं से लेकर उपग्रहों तक सभी आते हैं. इसकी देश भर में ९०० से अधिक शाखाएं हैं. इनमें से कोई न कोई आपके आसपास भी अवश्य होगी. एक बार वहां जाकर तो देखें कि आपकी सेवा किस तरह कर सकते हैं. □

झंडू फार्मेसी

आयुर्वेद का अर्थ है वह वेद जिसका संबंध आयु से है. यानि एक ऐसा विज्ञान जो आयु को दीर्घ करने में सहायक हो. आयुर्वेद का इतिहास अश्वनिकुमारों से शुरू होकर चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट आदि से होता हुआ आज तक चला आ रहा है. आज यद्यपि चिकित्सा की अन्य कई पद्धतियां विकसित हो चुकी हैं परंतु आयुर्वेद की महत्ता आज भी कम नहीं है.

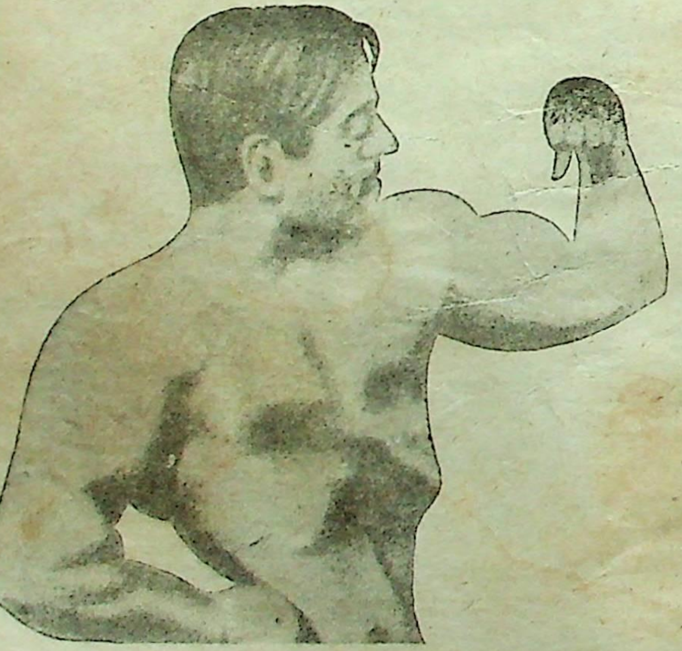

आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण में आज झंडू फार्मेसी एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है. इसकी बनायी हुई औषधियों को खरीदने वाला विश्वास के साथ खरीदता है.

स्वास्थ्यवर्धक औषधियों में झंडू का एक महत्वपूर्ण उत्पाद है—झंडू केसरी-जीवन. इसका स्वाद भी बहुत अच्छा है यह शरीर में स्वास्थ्य, ऊर्जा, तथा शक्ति को बढ़ाता है.

यह वास्तव में च्यवन प्राश अवलेह का ही एक विकसित फार्मूला है. च्यवनप्राश की ही तरह इसमें रोग प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने वाले तत्व तथा कफ नाशक तत्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं. च्यवन प्राश में मिली औशधियों के अतिरिक्त इसमें कुछ ऐसी औषधियों भी मिलायी गयी हैं जिनसे शरीर को अधिक स्वस्थ तथा लचीला बनाया जा सकता है. बढ़ते हुए बच्चों के लिए तो यह बहुत ही उपयोगी है. बड़ी उम्र के लोगों के लिए तो यह उपयोगी है ही.

इसमें च्यवनप्राश अवलेह के अतिरिक्त रस सिंदूर, अभ्रक भस्म, केसर, अश्वगंधा, कापीकचू, बालबीज आदि मिश्रित होते हैं. यह एक स्वास्थ्यवर्धक टानिक है. इसका स्वाद केसर जैसा होता है. बीमारी के बाद स्वास्थ्य लाभ के लिए भी यह एक उपयोगी टानिक है. थकान जैसी महसूस होने पर तथा कमजोरी की अवस्था में इसका सेवन करने से शरीर में फिर से चुस्ती-फुरती का संचार होता है. हर आयु के लोगों के लिए यह एक अनिवार्य टॉनिक है.

इसे दिन में दो बार, एक से दो चम्मच मात्रा में खाया जाना चाहिए. इसके ऊपर दूध भी पीना चाहिए.

यह २२५ तथा ४५० ग्राम आकर्षक पैकिंग में मिलता है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स पेश करती है

रहस्य, रोमांच, सस्पैंस व एडवेंचर की
दुनिया में एक नया जासूसी उपन्यासकार

विक्की आनन्द
विक्की आनन्द
विक्की आनन्द
विक्की आनन्द
विक्की आनन्द

जिसकी कलम के जादू में छिपे
सस्पैंस और रहस्य में आप खो जायेंगे डूब जायेंगे।

विक्की आनन्द
का पहला जासूसी उपन्यास

धुन्ध

शीघ्र प्रकाशित

RATESH

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगला अंक

सर्दियों में लू चलने लगे
और गर्मियों में बर्फखाने-सी
सर्दी महसूस हो...अंधेरी रात
जगमगा उठे और पूर्णमासी की
रात अंधेरी हो जाये...तो...?

उम्र की पहली दहलीज पर
जिस्म के रेशे-रेशे में चटकती इश्क
की दास्तान पेश करता

किशोर प्रेम कथा अंक

ख्वाजा अहमद अब्बास, यू. आर. अनंतमूर्ति, जेम्स जॉयस, हरमन हैस, बानो कुदसिया, फ्योदोर दास्तोएव्स्की, मार्क बैनरमैन, इरविंग स्टोन, धीरेंद्र अस्थाना, यासुनारी कावाबाता, जेम्स जोंस आदि कथाकारों की भावप्रवण कहानियां/कथारचनाएं.

सत्य-कथाएं

- किशोर लिंकन की पहली और अंतिम प्रेम-कथा.
- गेटे की किशोर प्रेम-कथा जो अमर उपन्यास बन गयी.
- चुंबन महंगा पड़ा बेचारे पुलिसकर्मी को.
- किशोर वय का प्यार : कितना उथला कितना ज्वार....
- ....और दुनिया जहान से खोजकर लाये गये ढेरों ऐसे किस्से जो किशोर जीवन की धड़कनों के जीवंत दस्तावेज हैं.

...और साथ में

- वरिष्ठ आलोचक डा. नामवर सिंह की षष्ठिपूर्ति पर विशेष आलेख.
- वरिष्ठ कथाकार द्विजेंद्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' की 'सारिका' के लिए विशेष रूप से लिखी गयी ताजातरीन कहानी— 'सरस्वती'.
- प्रख्यात कथाकार गोविंद मिश्र के नव्यतम उपन्यास 'धीर समीरे' का अंश— त्यों-त्यों प्रगट होई उर अंतर कांच कलस जल झांई.

नये धारावाही स्तंभों का आकर्षक सिलसिला

- **रेखाचित्र**
जिंदगी से गुजरते हुए खुद से टकराने वाले चरित्रों को सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार परसाईजी ने किस तरह ग्रहण किया होगा....आइए देखें—रेखाचित्रों का संग्रहणीय आयोजन

- **प्रहसन**
हास्य-व्यंग्य स्तंभों की परंपरा में एक नयी शुरुआत....महाराज कृष्ण काव के हंसते-हंसाते प्रहसनों की शुरुआत कर रहा है— 'प्रेम विभाग'

- **रहस्य-रोमांच**
होनी-अनहोनी के द्वंद्व में फंसे रहस्य-रोमांच भरे जीवन प्रसंगों की एक ऐसी श्रृंखला जिसका आप बेसब्री से हर महीने इंतजार करेंगे.

- **अपराध कथा**
अपराध कैसे, क्यों और कब-कब हो जाते हैं? क्या आदमी स्वभावत: अपराधी होता है? हर महीने एक सच्ची अपराध-कथा.

- **किस्से कचहरी के**
कचहरी की जिंदगी और जिंदगी की कचहरी की ऐसी घटना-कथाएं जो आपको एक नयी ही दुनिया की सैर करायेंगी.

- **'अरेबियन नाइट्स' उर्फ किस्सा अलिफ लैला**
एक के बाद एक घटने वाली अनूठी कहानियों का एक विशाल भंडार है— 'अरेबियन नाइट्स.' इसी भंडार में से चुनिंदा रोचक और मनोरंजक किस्सों-कहानियों का एक अनूठा आयोजन.

हर महीने पत्रिका की कीमत पर
एक समूची किताब का भरा- पूरा संसार

सारिका अगस्त : 1988

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व-प्रसिद्ध शृंखला

पुस्तक महल की 30 पुस्तकों का
एक अनूठा प्रोजेक्ट

मूल्य: 15/- प्रत्येक
डाकखर्च: 4/- प्रत्येक
एक साथ चार पुस्तकें
मंगाने पर डाकखर्च माफ

■ प्रामाणिक पाठ्य-सामग्री ■ प्रत्येक पुस्तक सैकड़ों दुर्लभ चित्रों से सुसज्जित ■ सरल कथा शैली ■ फोटोटाइप सैट ■ बढ़िया कागज पर ऑफसैट छपाई ■ बहुरंगी आवरण ■ वाजिब दाम

इस शृंखला का मूल उद्देश्य एक औसत पाठक को अंतर्राष्ट्रीय जगत से जोड़कर उसकी चेतना को प्रबुद्ध करना है।

कुल मिलाकर प्रत्येक पुस्तक अपने क्षेत्र से संबंधित सभी उल्लेखनीय पक्षों को पूर्ण रूप से उजागर करने वाला एक सचित्र **'मिनि एनसाइक्लोपीडिया'** *है।*

उदाहरणार्थ '*रोमांचक कारनामे*' में सरकंडे की नाव में की गई 13,000 मील की समुद्री यात्रा जैसी अनेक सच्ची कथाएं हैं तो 'खोजें' में मिट्टी के तेल, पेनिसीलीन आदि खोजों के पीछे छिपे प्रयासों का रोचक विवरण है। '*अनसुलझे रहस्य*' में बरमूदा ट्राइएंगल से लेकर भूत-प्रेतों तथा रक्त मिलाकर शराब पीने वाली जातियों तक के रहस्य हैं तो '*खेल और खिलाड़ी*' व '*वैज्ञानिक*' क्रमशः जीवनी प्रधान पुस्तकें हैं। '*विनाश-लीलाएं*' में प्रकृति के प्रलयंकारी रूप का चित्रण है तो '*दुर्घटनाएं*' में मानवीय भूलों से हुई मर्मांतक तबाहियों का लेखा-जोखा है। '*गुप्तचर संस्थाएं*' तथा '*जासूस*' में मकड़े के जालों सी फैली जासूसी संस्थाओं तथा उनमें कार्यरत जासूसों की रोमांचकारी गतिविधियां हैं तो '*प्रेरक-प्रसंग*' किसी भी जहाज की तरह भटके हुए मन के लिए प्रकाश-स्तंभ है।

अब तक प्रकाशित पुस्तकें:

विश्व-प्रसिद्ध.... 1. खोजें 2. अनसुलझे रहस्य 3. रोमांचक कारनामे 4. युद्ध 5. 101 व्यक्तित्व 6. धर्म, मत एवं सम्प्रदाय 7. खेल एवं खिलाड़ी 8. रिकॉर्ड्स (भाग-I) 9. रिकार्ड्स (भाग-II) 10. वैज्ञानिक 11. विनाश-लीलाएं 12. दुर्घटनाएं 13. गुप्तचर संस्थाएं 14. जासूस 15. प्रेरक-प्रसंग।

आमंत्रण:–

प्रोजेक्ट में योगदान के लिए विद्वान लेखक तथा अनुवादक संपर्क साधें।

जून, 1988 तक प्रकाश्य:
■ *विश्व-प्रसिद्ध जासूसी-कांड*
■ *विश्व-प्रसिद्ध सभ्यताएं*

तैयारी में/प्रेस में:
• चिकित्सा-पद्धतियां • स्कैण्डल • बैंक-डकैतियां • राजनैतिक हत्याएं • खोजी-यात्राएं • क्रूर हत्यारे • खजाने।

अपने निकट के बुकस्टाल एवं रेलवे तथा बस अड्डों पर स्थित बुकस्टालों पर मांग करें अन्यथा वी.पी.पी. द्वारा मंगाने का पता

पुस्तक महल, खारी बावली, दिल्ली-110006
शो रूम : 10-B नेताजी सुभाष मार्ग, दरिया गंज, नई दिल्ली-2.

VAN/PM/24

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

"सात मोमबत्तियाँ, मम्मी मैं बड़ी हो गई हूं.."

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चालीस वर्ष पहले, नन्ही केतकी अपने जन्म-दिवस के केक पर मोमबत्तियों को देखकर उल्लास से भर गयी थी। कई जन्म दिवसों के बाद भी वह चमक उसकी आँखों मे अब भी कौंधती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टि सुखद है।

आज केतकी सूद एक आन्तरिक सज्जा विशेषज्ञ (इंटीरियर डेकोरेटर) जिन्हें इस बात का गर्व है कि उन्होंने नेत्र-दान का संकल्प लिया है।

"उस दिन वे सात शानदार मोमबत्तियां, मेरे जीवन के हर वर्ष के लिये संसार की दिव्यतम वस्तु प्रतीत हुई थीं।

समय ने मुझे सभी स्थानों में सौन्दर्य की खोज करना सिखाया है... रेत में... बर्फ में...

मैं वह सुबह कभी भूल नहीं सकती जब मैं आस्ट्रेलिया से न्यूज़ीलैंड हवाई जहाज द्वारा जा रही थी। यह तीन घंटे की उड़ान थी। वस्तुतः वह जीवन भर की महान यात्रा साबित हुई।

जैसे ही विमान लंबे सफेद बादलों में पहुंचा, मुझे यह जानकर हर्ष हुआ और अचरज भी कि हमारे और दक्षिणी आलप्स के मध्य बादल नहीं के बराबर हैं।

दूर से माउंट कुक चमक रहा था। अनेक हिम श्वेत घाटियों की असंख्य तरंगों के बीच ऐसा लगता था मानों अनगिनत छाया-बिम्ब हिम-तल पर बिछकर अठखेलियाँ कर रहे हैं। तथा इनके बीच में हजारों रंग, कुछ हल्के कुछ चटक नीलिमा का आभास देते हुए खेल रहे थे। आज तक मैं इस मोहक दृश्य को अपनी दृष्टि की क्षमता का श्रेष्ठतम पुरस्कार मानती हूँ।

तथा मैं अनुभव करती हूं कि मेरी कृतियों में अब श्वेत रंग पहले से कहीं ज़्यादा अभिव्यक्ति पाते हैं। क्योंकि उन सुदूरवर्ती हिम-श्रृंखलाओं ने मुझे महसूस कराया कि सफेद रंग सिर्फ एक मात्र नहीं है, इसमें किसी भी रंग को सौम्यता या दीप्ति प्रदान करने की अद्भुत शक्ति हैं। मेरे लिये "श्वेत" शालीनता का अनन्त प्रतीक बन गया है।

तथापि राजस्थान के हल्के लाल या शर्मीले रेगिस्तानी रंग मुझे पहले की तरह अब भी प्रिय है। इसी प्रकार बादलों में चमकने वाली बिजली का प्रकाश, मानव-शरीर की आकृतियों एवं कक्षों के आकार, शीशम और रेशम जैसे विविध प्रकार के पदार्थों के ताने बाने मेरा मन मोह लेते हैं।

इन वस्तुओं का उपयोग करते हुए अपने कार्य के माध्यम से मैं अब समझ गई हूँ कि मेरी सफलता का मुख्य साधन मेरी दृष्टि है।

परन्तु मैं जानती हूँ कि मेरी मृत्यु के उपरान्त मेरे नेत्रों का कोई उपयोग नहीं रहेगा। इसलिये मैंने मृत्यु के उपरान्त उन्हें दान करने का विचार किया, केतकी सूद कहती हैं।

परिवार के लिये गर्व का विषय :

वह आगे कहती हैं "हमारे परिवार में हम मिल-जुल कर सब काम करने का विश्वास रखते हैं। मेरे पति और मैं, दोनों ने परिवार का संकल्प-पत्र भरने का निर्णय लिया।

हमने अपनी बेटियों को समझा दिया है कि एक साधारण कार्निया प्रत्यारोपण के द्वारा किसी दृष्टिहीन व्यक्ति के नेत्र के खराब कार्निया के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दान किये हुये स्वस्थ कार्निया को लगा दिया जाता है।

उन्होंने हमसे वादा किया कि जब हमारे नेत्र दान का समय आयेगा तो वे निकटतम नेत्र-बैंक को फोन द्वारा सूचित करने का उत्तरदायित्व का निर्वाह करेंगे। मेरे चले जाने के बाद वर्षों मेरे नाती-पोतों की पीढ़ी का फैशन मेरी सज्जा-कला को धूमिल कर देगा, परन्तु कहीं न कहीं कोई मेरी आँखों से सब कुछ देख रहा होगा।"

नेत्र-दान का संकल्प कीजिये :

दृष्टि, अन्य सभी इन्द्रियों से बढ़कर, अत्यन्त ज्ञानवर्धक अनुभव है।

और केतकी सूद की तरह, वह चमत्कार कर दिखाने की सामर्थ्य आपमें हैं। नेत्र-दान का संकल्प कीजिये। इसके लिए केवल आपके हस्ताक्षर की आवश्यकता है।

और एक दृष्टिहीन व्यक्ति के लिए किसी दिन देखने की सामर्थ्य पा लेना, एक चमत्कार से कम नहीं है।

नेत्र-दान के विषय में कुछ आधारभूत तथ्य :

1. किसी भी उम्र का, लगभग कोई भी व्यक्ति नेत्र-दान कर सकता है, यदि नेत्र-दाता चश्मा पहनता हो, उसे मोतियाबिन्द हो या आँखों का सफल ऑपरेशन हो चुका हो, तो भी नेत्र-दान सम्भव है।
2. मृत्यु के उपरान्त 6 घन्टों के अन्दर-अन्दर आँखों को निकाल लेना चाहिये। अतः निकटतम नेत्र-बैंक को तुरन्त सूचित करना आवश्यक है।
3. नेत्रों को निकालने में केवल 10-15 मिनिट लगते हैं और उससे कोई निशान या विकृति उत्पन्न नहीं होती।
4. आपके नेत्र-दान से दो दृष्टिहीन व्यक्तियों को दृष्टि मिलती है, एक दृष्टिहीन व्यक्ति को एक नेत्र प्रदान किया जाता है।
5. कानून मे यह प्रावधान है कि आप किसी मृत सम्बन्धी के नेत्र-दान कर सकते है — यदि उसने कभी नेत्र-दान के विरुद्ध अपना मत व्यक्त न किया हो तो।

कृपया अपने परिवार के साथ इस विषय पर चर्चा करें। नीचे दिया गया प्रपत्र भरें। और टाइम्स आई रिसर्च फाउण्डेशन को डाक द्वारा भेज दें। हम आपको एक नेत्र-दाता के रूप मे पंजीयन कर लेंगे और आपको नेत्र-दाता कार्ड और प्रमाण पत्र भेजेंगे जिसमें आपके निकटतम नेत्र-बैंक का नाम, पता व टेलीफोन नम्बर, अंकित होगा।

राष्ट्र को नेत्र-दान करने की घोषणा

मैं/हम, अधोहस्ताक्षरीगण, एतदद्वारा संयुक्त रूप से/पृथक-पृथक राष्ट्र को अपने नेत्र-दान करने का संकल्प लेता हूँ/लेते हैं तथा एक दूसरे पर दायित्व डालते हैं कि हममें से किसी की भी मृत्युपरात नेत्र-चिकित्सक को बुला कर, प्रत्यारोपण के उद्देश्य से हमारे नेत्र निकाल कर हमारी इच्छा पूर्ण की जाए।

1. श्री/श्रीमति ______________ आयु ____ हस्ताक्षर ______________
2. श्री/श्रीमति ______________ आयु ____ हस्ताक्षर ______________
3. श्री/श्रीमति ______________ आयु ____ हस्ताक्षर ______________

पता__________ पिनकोड__________ राज्य __________ तिथि__________

साक्षी की आवश्यकता है जब केवल एक या परिवार के 3 से कम सदस्य नेत्रदाता हों.

1. श्री/श्रीमति ______________ 2. श्री/श्रीमति ______________

रिश्ता ______________ रिश्ता ______________

हस्ताक्षर ______________ हस्ताक्षर ______________

पता ______________ पता ______________

दृष्टि टाइम्स आई रिसर्च फाउण्डेशन
टाइम्स ऑफ इंडिया, 10, दरियागंज, नई दिल्ली-110 002.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

दृष्टि के आनन्द को बाँटिये. नेत्र-दान का संकल्प कीजिये.

टाइम्स आई रिसर्च फाउण्डेशन को दी जाने वाली वित्तीय सहायता आयकर अधिनियम 1961 की धारा 80(जी) के अंतर्गत कर रहित है।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी बात

सोये हुए समाज को जगाने के लिए

भारतीय ज्ञानपीठ के सहयोग से आपने इस अंक को स्मरणीय बना दिया है, इस सफलता के लिए सारिका प्रकाशन एवं भारतीय ज्ञानपीठ संस्था, दोनों को शुभकामनाएं.

बाजारू साहित्य से सम्मोहित, सुप्त समाज की चेतना को जगाने में इस प्रकार के प्रयोग आप अनवरत करते रहेंगे, ऐसी आशा के साथ आगामी अंकों की प्रतीक्षा में.

□ **अनिकेत, झाबुआ (म.प्र.)**

श्रद्धा से झुका मस्तक

अंक काफी अच्छा लगा. साहित्यिक अभिरुचि रखनेवाले पाठकों को भरपूर प्रेरणा मिलेगी. इस अंक में एक से बढ़कर एक विद्वानों की रचनायें एवं कृतियां संलग्न हैं. उनके लिखने की शैलियों पर हमारा मस्तक श्रद्धा से अपने आप झुक जाता है.

मुझे कभी आशा नहीं थी कि इन विद्वानों की रचनाओं को कभी पढ़ सकूंगा. परंतु सारिका का मैं आभारी रहूंगा जिन्होंने यह मौका दिया.

यह आश्चर्य लगा कि नये हस्ताक्षर का नामोनिशान न था. परंतु ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त कहानियों की वजह से इसकी कमी खली नहीं.

□ **संतोष कुमार, स्पीकर हाउस 3**

पढ़ने का साहस नहीं जुटा सका

विगत दो वर्षों से सारिका का नियमित पाठक हूं. आज तक कभी सारिका खरीदकर पढ़ना अखरा नहीं, किंतु ज्ञानपीठ पुरस्कार विशेषांक-तीन खरीदकर देखने से अफसोस हुआ. 'देखने' शब्द का उपयोग इसलिये किया है कि पढ़ने का साहस ही नहीं जुटा सका. मानाकि सारिका हिंदी साहित्य के अग्रणी लेखकों की उत्तम रचनाओं को प्राथमिकता के आधार पर प्रकाशित करती है. किंतु किसी अंक-विशेष में इतनी बोझिल रचनायें उचित नहीं हैं. 'छोटी कहानियां' एक मिनिट मात्र को भी ध्यान आकर्षित न कर सकीं.

आपसे अनुरोध है कि भविष्य में इतना बोझिल अंक न दें. वास्तव में मैंने किसी भी कहानी का एक भी पैराग्राफ से ज्यादा नहीं पढ़ा.

□ **लोकेश, विदिशा (म.प्र.)**

श्रद्धांजलि

1 जून, 1988 को हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार, समाज सुधारक और स्वतंत्रता सेनानी संतराम बी.ए. का लंबी बीमारी के बाद दिल्ली में देहांत हो गया. वे 101 वर्ष के थे.

संतरामजी जीवन का उद्देश्य देश प्रेम मानते थे. उन्होंने समाज में व्याप्त रूढ़ियों और कुरीतियों को दूर करने के लिए महत्वपूर्ण कार्य किये. गांव और शहरों में घूम-घूमकर छूआछूत छोड़ने का संदेश दिया. 1929 में प्रथम पत्नी की मृत्यु के बाद हिंदू मान्यताओं के विरुद्ध मराठा विधवा श्रीमती सुंदरबाई से विवाह किया.

गरीबों और पिछड़ी जातियों के उत्थान के लिए संतरामजी ने 'जाति-पाति तोड़क मंडल' का भी गठन किया था.

संतरामजी आर्यसमाज के समर्थक थे. भाई परमानंद से अत्याधिक प्रभावित थे. गांधीजी और अंबेडकर ने इनके कार्यों की प्रशंसा मुक्त भाव से की थी.

समाजसुधार के कार्यों में अग्रणी रहने के साथ ही संतरामजी ने अपने सौ वर्षों के जीवन में सौ से अधिक पुस्तकों से साहित्य को भी समृद्ध किया. इसके साथ ही अन्य भाषाओं की श्रेष्ठ पुस्तकों का हिंदी में अनुवादकार्य भी किया. संतरामजी का मानना था कि अनुवाद से सांप्रदायिक और भाषिक एकता दृढ़ होती है.

दिवंगत आत्मा को सारिका परिवार की ओर से भावभीनी श्रद्धांजलि. □

महत्वपूर्ण दस्तावेज

ज्ञानपीठ पुरस्कार विशेषांक-तीन पढ़ा. अंक के प्रारंभ से लेकर अंतिम पृष्ठ के संबंध में इतना लिखना पर्याप्त होगा कि सारिका का यह अंक एक 'कहानी संकलन' ही नहीं, अपितु एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है. वर्ष 1982 से मैं सारिका का नियमित पाठक हूं और सारिका के रजत जयंती वर्ष से इसका संग्रहकर्ता भी. ज्ञानपीठ पुरस्कार के पिछले दो विशेषांकों से आपने जो एक दस्तावेजी शुरुआत की, उसके अविरल प्रवाह के प्रति आपका प्रयास स्तुत्य है.

'साहित्य सृजन, पुरस्कार और मैं' में विजेताओं के विचारों को पढ़कर लगा कि मैं हिंदी में सारिका ही नहीं पढ़ रहा हूं बल्कि उन सब भारतीय भाषाओं को पढ़ रहा हूं जिनके सृजन को ज्ञानपीठ ने सम्मानित किया है.

वस्तुतः आपका यह अंक पुरानी यादों को ताजा करता है. संपूर्ण भारतीय श्रेष्ठ साहित्य के सृजकों से परिचय कराने बाबत बार-बार धन्यावाद.

□ **राजेश चौधरी, झाबुआ (म.प्र.)**

ज्ञानपीठ पुरस्कार विशेषांक विलंब से प्राप्त हुआ. सराहनीय प्रयास के लिये आप सभी बधाई के पात्र हैं.

□ **अमरेंद्र किशोर, सासाराम (बिहार)**

इस बार कोई भी पत्र पुरस्कार योग्य नहीं था.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar